[illegible] है ऐसा [illegible] ।

धन्यवाद

संस्थाके मूल संस्थापक स्वर्गीय [illegible] ने अपने पूज्य पिताजीके स्मरणार्थ जो दान दिया था उससे अनेक ग्रन्थ छप चुके हैं, [illegible] से यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है।

निवेदक—
श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ
मंत्री–भारतीय जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था कलकत्ता

फाल्गुन
विक्रम सं० २००५

श्री सिद्धचक्र विधानका महत्व और उसकी विधि।

गृहस्थ जीवनको सार्थक बनानेके लिये एवं सांसारिक विभूतियोंको प्राप्त करने के लिये भगवान जिनेन्द्रका पूजनादि विधान करना उत्तम साधन है। यह निश्चित है कि ये पूजनादि विधान सविधि किये जांय तो गृहस्थको मनवांछित कार्योंकी सिद्धि करते हैं इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं है। प्रत्येक विधानकी विधि भिन्न भिन्न है किन्तु सबका उद्देश्य सुख शान्तिका मिलना है इसलिये सुख शान्तिके इच्छुकोंको अपनी मनोवृत्ति इन विधानोंके करनेमें लगाना चाहिये। जो गृहस्थ सम्पन्न होकर इन पूजा आदि विधानोंमें अपनी शक्ति एवं द्रव्यादि खर्च नहीं करते तो उनका द्रव्य पाना सार्थक नहीं कहा जासक्ता। जैन शास्त्रोंमें सिद्धचक्र विधान ऋषि मंडल विधान यागमंडल विधान आदिका फल मुक्तिपद मिलना बतलाया है तो सांसारिक विभूतियोंकी प्राप्ति होना, रोगादिकी शान्ति होना, भयंकर विषधर आदिसे रक्षा होना, पुत्र प्राप्ति होना और व्यापारादिमें धनप्राप्तिका होना आदि कुछ भी महत्व नहीं रखता है, यह तो स्वयमेव विधान विधाताको प्राप्त होही जाता है।

य म हो मंदिरजीके बाहर नौबत (बाजा) बजाना चाहिये। प्रतिदिन हूं और मंगलाष्टक पढ़ना चाहिये। एवं भगवानका अभिषेक होना चाहिये।

विधानकी यह संक्षिप्त विधि लिख दी गई है। इस विधिके लिखनेमें कोई त्रुटि रह गई हो तो विशेषज्ञ ठीक कर लें और देश कालके अनुसार विधिपूर्वक इस सिद्धचक्र विधानको उन्नत भावोंसे करें जिससे उनको अक्षय पुण्यका संचय हो।

मु० पिढ़ोली
पो० आंवलखेडा
(आगरा)

निवेदक
श्रीनिवास जैन शास्त्री
कलकत्ता

॥ ॐ ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

कविवर पं० सन्तलालजी कृत

श्रीसिद्धचक्रविधान ।

मङ्गलाचरण ।

दोहा ।

जिनाधीश शिवईश नमि, सहसगुणित विस्तार ।
सिद्धचक्र पूजा रचों, शुद्ध नियोग संभार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये अग्निदिशि अर्घं नि० स्वाहा

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिकै ।
मिलि है वसुविधि रिद्धि, दक्षिण दिशा पूजा करों ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिणदिशि अर्घं० ।

वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जलफलादि शुभ अर्घ लै ।
पाऊँ सब विधि स्वस्ति, नैऋत्य दिशि अर्चा करों ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैऋत्यदिशि अर्घं० ।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि ।
मिलि है सब शुभ योग, पूजन करि पश्चिम दिशा ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिमदिशि अर्घं० ।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करूँ आरती अर्घ लै ।
सब विधि आरति त्याग, वायव दिशि पूजा करों ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्यदिशि अर्घं० ।

वर्ण यवर्गी सार, सर्व अर्घ वसु द्रव्य करि।
भाव अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करों ॥१३॥

ओं ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घं०।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ बनाइकें।
नशे कर्म वसु भंत, पूजों हो ईशान दिशि ॥१४॥

ओं ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि अर्घं०।

छप्पय छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ सु बिंदु हंकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधि धर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
फुनि अति ह्रीं वेढ्यो परम, स्वर ध्यावत अरि नागकों।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करों ॥१५॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा

सूक्ष्मादिक गुणसहित हैं, कर्मरहित निःरोग।
सकल सिद्ध पूजों सदा, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टकं।

चाल-नन्दीश्वर द्वीपपूजाकी।

शीतल शुभ सुरभि सु नीर, कंचन कुम्भ भरौं।
पाऊं भवसागर तीर, आनन्द भेंट धरौं॥
अन्तरगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥ १॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः सम्यक्त्वज्ञानदर्शनवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्याबाहं अट्ठगुणसंयुक्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

चन्दन तुम वंदन हेत उत्तम मान्य गिना ।
नातर सब काष्ट समेत, ईंधन ही थपना ॥
अन्तरगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः सम्यक्त्वज्ञानदर्शनवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरु लघु अव्वाबाहं अट्ठगुणसंयुक्ताय चन्दनम् ॥ २ ॥

दीरघ शशि किरण समान, अक्षत ल्यावत हूं ।
शशिमंडल सम बहुमान, पूज रचावत हूं ॥
अन्तरगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः सम्यक्त्वज्ञानदर्शनवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अट्ठगुणसंयुक्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

तुम चरणचंद्रके पास, पुष्प धरे सोहैं ।
मानू नक्षत्रनकी रास, सोहत मन मोहैं॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं०, पुष्पं ॥ ४ ॥

उत्तम नेवज बहु भांति, सरस सुधा साने ।
अहिमिन्द्रन मन ललचाय, भक्षण उमगाने ॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं ॥५॥

ओं ह्रीं ० नैवेद्यं ॥५॥

फैली दीपनकी जोति, अति परकाश करे ।
जिम स्याद्वाद उद्योत संशय तिमिर हरे ॥
अंतरिगति अष्ट सरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचलविराजत हैं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसम्मत्तणाणदंसणवीर्यसुह-मत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अष्टगुणसंयुक्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

धरि अग्नि धूपके ढेर, गंध उडावत हूं।
कर्मोंका धूप बखेर, ठोंक जरावत हूं॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥७॥

ॐ ह्रीं० धूपं ॥ ७ ॥

जिन धर्म वृक्षकी डाल, शिवफल सोहत हैं।
इस शुभ फल कंचन थाल, भविजन मोहत हैं॥
अन्तरिगति अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं।
नमूं सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं॥८॥

ॐ ह्रीं० फलं ॥ ८ ॥

करि दर्व अर्घ वसु जात, यातैं ध्यावत हूं।
अष्टांग सुगुण विख्यात, तुम ढिग पावत हूं॥

अथ द्वितीय पूजा ।

छप्पय छन्द ।

ऊरध अधो सरेफ विंदु हंकार विराजे,
अकारादि स्वलित कर्णिका अन्तसु छाजे ।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अन्त ह्री वेढ्यो परम सुर, ध्यावत ह्री अरिनागको ।
है केहरिसम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः षोडशगुणसंयुक्तसिद्ध परमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

दोहा ।

सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निररोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव जोग ॥ २ ॥

अथाष्टकं ।

गीता छन्द ।

हिमशैल धवल महान कठिन पाषाण तुम जस राशते,
शरमाय अरु सकुचाय द्रव ह्वै वही गंगा तासतें ।
सम्बन्ध योग चितार चित भेटार्थ झारीमें भरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः श्रीसमत्तणाणदंसणवीयसुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघु अव्वाबाहं षोडशगुणसंयुक्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

काश्मीर चंदन आदि अन्तर बाह्य बहुविधि तप हरे,
यह कार्य कारण लखि नमित मम भाव हू उद्यम करे ।
मै हूं दुखी भवतापसे घसि मलय चरनन ढिग धरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः सम्यक्त्वज्ञान दर्शनवीर्य सूक्ष्मत्वहेय अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं सोलहगुणसंयुक्ताय चन्दनं।

सौरभ चमक जिस सह न सकि अम्बुज बसै सरतालमैं,
शशि गगन बसि नित होत कृश अहिनिश भ्रमै इस ख्यालमैं।
सो अक्षतौघ अखण्ड अनुपम पुंज धरि सन्मुख धरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं॥ अक्षतं॥
जग प्रगट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा,
तुम शील कटक सुघट निकट सरचाप पटक सुभट भगा।
इम पुष्पराशि सुवाप तुम ढिंग कर सुयश बहु उच्चरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं॥पुष्पं॥४॥
जीवन सतावत नाहिं अघावत क्षुधा डाइनसी बनी।
सो तुम हनी तुम ढिंग न आवत जान यह विधि हम ठनी॥

नैवेद्यके संकेत करि निज क्षुधानाशन विधि वरूं.
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥नैवेद्यं॥५॥
मैं मोह अन्ध अशक्त अरु यह विषम भववन है महा.
ऐसे रुलेको ज्ञानदुति विन पार निकसन हो कहा।
सो ज्ञान चक्षु उघार स्वामी दीप ले पाइन परूं.
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं॥दीपं॥६॥
प्रासुक सुगंधित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुहावनो.
धरि अगि दश दिश वास पूरित ललित धूप सुहावनो।
तुम भक्तिभाव उमंग करत प्रसंग पूरा सु निस्तरूं.
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं ॥धूपं॥७॥
चित हरन अमित सुरंग रसपूरित विविध फल मोहनं.
रसना लुभावन [illegible] मोहनं।

भरि थाल कंचन भेट धरि संसार फल तृष्णा हरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं फलं।।८।
शुभ नीर वर काश्मीर चंदन धवल अक्षत युत अनी,
वर पुष्पमाल विशाल चरु सुरमाल दीपक दुति मनी।
वर धूप पक्व मधुर सुफल ले अर्घ अठ विधि संचरूं,
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करूं॥ अर्घं।९।

गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमे चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।
करि दीपमाल उजाल धूपाइन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत कर्मदल सब दलमले॥
ते कर्मवर्त नशाग युगपत ज्ञान निर्मलरूप हैं,

दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप है।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य अछेद शिव कमलापती,
मुनिध्येय सेय अमेय चहुं, गुण ज्ञेय द्यो हम शुभमती॥
ओं ह्रीं अर्हं सिद्धचक्राधिपतये नमः संमत्तणाणादि अट्ठगुणाणं महार्घं।

अथ सोलह गुण सहित अर्घं।

त्रोटक छन्द।

दर्शन आवर्णी परकर्त हनी, अथिता अवलोक सुभावबनी।
इक साथ समान लखो सब ही, नमुं सिद्ध अनंत द्रगन अवही॥ १॥
ओं ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घं।

विधि ज्ञानावर्ण विनाश कियो, निज ज्ञान स्वभाव विकाश लियो।
समयांतर सर्व विशेष जनों, नमूं ज्ञान अनंत सु सिद्ध तनों॥ २॥
ओं ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घं।

सुख अमृत पीवत खेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो।

असमान महाबल धारत हैं, हम पूजत पाप विदारत हैं ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घं ।

विपरीत सभीत पराश्रितता, अतिरिक्त धरै न करै थिरता ।
परकी अभिलाष न सेवत हैं, निज भाविक आनन्द वेवत हैं ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घं ।

निज आतम विकाशक बोध लह्यो, भ्रमको परवेश न लेश रह्यो ।
निजरूप सुधारस मग्न भये, हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घं ।

निज भाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो ।
निजथान निरूपम नित्य बसे, नमूं सिद्ध अनाचल रूप लसे ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं अचलाय नमः अर्घं ।

चौपाई ।

गुणपर्यय परणतिके भेद, अति सूक्षम असमान अछेद ।

ज्ञान गहे, न कहे जड वेन, नमों सिद्ध सूक्षम गुण ऐन ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसूक्ष्माय नमः अर्घं ।

जन्म मरण युत धरे न काय, रोगादिक संक्लेश न पाय ।
नित्य निरंजन निर अविकार, अव्याबाध नमों सुखकार ॥८॥

ओं ह्रीं अव्याबाधाय नमः अर्घं ।

एक पुरुष अवगाह प्रजंत, राजन सिद्ध समूह अनन्त ।
एकमेक बाधा नहिं लहें, भिन्न भिन्न निजगुणमें रहें ॥९॥

ओं ह्रीं अवगाहनगुणाय नमः अर्घं ।

काययोग पर्यापति मान, अनवधि छिन्न छिन्न ही मान ।
जरा कष्ट जग प्रानी लहे, नमों सिद्ध यह दोष न सहे ॥१०॥

ओं ह्रीं अजराय नमः अर्घं ।

काल अकाल प्राणको नाश, पावै जीव मरनको त्रास ।
तासों रहित अमर अधिकार, सिद्ध समूह नमूं सुखकार ॥११॥

ओं ह्रीं अमराय नमः अर्घं।

गुण गुण प्रति है भेद अनन्त, यो अथाह गुणयुत भगवन्त।
है परमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण वंदूं एह ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं अप्रमेयाय नमः अर्घं।

भुजंगप्रयात छन्द।

अनूकर्मतें फर्स वर्णादि जानो,
किसी एक वीशेषको किं प्रमानो।
पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी,
नमूं सिद्ध अत्येन्द्रिय ज्ञान भागी ॥१३॥

ओं ह्रीं अतीन्द्रियोत्पन्नाय नमः अर्घं।

त्रिधा भेद भावित महाकष्टकारे,
रमण भावसों आकुलित जीव सारे।
निजानन्द रमणीय शिवनार स्वामी,

नमो पुरुष आकृत सबै सिद्धनामी ॥ १४ ॥

ओं ह्रीं अवेदाय नमः ।

त्रिशेषं सकल चेतना धार माही,
भये लै भली विधि रहौ भेद नाहीं ।
तथा हीन अधिकार्यको भाव टारी,
नमो सिद्ध पूरण कला ज्ञानधारी ॥१५॥

ओं ह्रीं अभेदाय नमः अर्घं।

निजानन्दरस स्वादमें लीन अंता,
मगन हो रहै रागवर्जित निरंता ।
कहांलों कहुं आपको पार नाहीं,
धरो आपको आप ही आपमाही ॥१६॥

ओं ह्रीं निजाधीनजिनाय नमः अर्घं ।

यहां १०८ वार जाप देना चाहिये ।

अथ जयमाला ।

दोहा—पंच परम परमातमा, रहित कर्मके फंद ।
जगत प्रपंच रहित सदा, नमों सिद्ध सुखकंद ॥

तोटक छन्द ।

दुखकारन द्वेष विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो ।
भवितारन पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारण हो ॥
समयामृतपूरित देव सही, परआकृत मूरति लेश नहीं ।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमो सुखकारन हो ॥२॥
अखिना अभिना अछिना सुपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा ।
यमजाम जरा दुखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥३॥
निर आश्रित स्वाश्रित वासित हो, परकाश्रित खेद विनाशित हो ।
विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥४॥

अमुधा अछुधा अद्विधा अविधं, अकुधा सुसुधा सुवुधा सुसिधं ।
विधि आरन जारन हारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥५॥
शरनं चरनं वरनं करनं, धरनं चरनं मरनं हरनं ।
तरनं भव वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ।६।
भववास परास विनाशन हो, दुखरास विनाश हुताशन हो ।
निज दासन त्रासनिवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ।७।
तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहै, तुम पूजत ही पद पूजि लहै ।
शरणागत संत उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ।८।

दोहा—सिद्धवर्ग गुण अगम है, शेष न पावें पार ।
हम किंह विधि वरणन करें, भक्ति भाव उर धार ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं अनन्तदर्शनज्ञानादिगोऽष्टगुणयुक्तसिद्धेभ्यो महार्घं ।

इति द्वितीय पूजा सम्पूर्णम् ।

अथ तृतीय पूजा बत्तीस गुणसहित ।

छप्पय छन्द ।

ऊरध अधो सुरेफ सु बिंदु हकारं विराजे
अकारादि स्वर लिप्तकर्णिका अंत सु छाजे ।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुजतत्व संधिवर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
फुनि अति ही वेढ्यो परम, स्वर ध्यावत अरि नागको ।
केहरि सम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिन् बत्तीसगुणसहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

दोहा ।

सूक्ष्मादि गुण सहित हे, कर्म रहित निररोग ।

सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग ॥

इति यंत्रस्थापनं।

अथाष्टकं।

'प्रभु पूजो रे भाई' इस चालमें।

तुम पूजोरे भाई, सिद्धचक्र वत्तीसगुण, तुम पूजोरे भाई।
भवत्रासित आकुलित रहै, भवि कठिन मिटन दुखनाई ॥
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई।
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीसगुण, प्रभु तुम०॥

ओं ह्रीं णमोसिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने श्री समत्तणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेथ अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं वत्तीसगुणसंयुक्ताय जन्मजरारोगविनाशनाय जलं।१।

जगवंदन परसत पदचन्दन, महाभाग उपजाई।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र वत्तीस गुण, तुम०।

तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं नमोसिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने श्री सम्यक्त्वज्ञानदर्शनवीर्यसुक्ष्मत्व अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं बत्तीसगुणसंयुक्ताय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजूं हूं तुम पाईं ।
जासों जजैं मुक्तिपद पइये सर्वोत्तम फलदाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं नमो सिद्धाणं श्री सिद्धपरमेष्ठिने श्री सम्यक्त्वज्ञानदर्शन वीर्यसुक्ष्मत्व अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं बत्तीसगुणसंयुक्ताय मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

वसुविधि अर्घ देऊं तुम मम द्यो, वसुविधि गुण सुखदाई ।
जासु पाय वसु त्रास न पाऊं, सन्त कहै हर्षाई ॥
तुम पूजोरे भाई ॥ सिद्धचक्र बत्तीस गुण, तुम० ॥

ओं ह्रीं नमोसिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने श्रीसम्यक्त्वज्ञानदर्शन वीर्य सुक्ष्मत्व अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं बत्तीसगुणसंयुक्ताय सर्वसुखप्राप्तये अर्घं ॥ ९ ॥

(नामावलि प्रत्येक अर्घ) अथ बत्तीस गुण सहित अर्घ।

पद्धडी छन्द।

चेतन विभाव पुद्गल विकार, है शुद्ध बुद्ध तिसनि मतटार।
द्रगबोध सुरूप सुभाव एह, नमूं साध चेतना सिद्ध देह ॥ १ ॥

ओं ह्रीं शुद्धचेतनाय नमः अर्घं ॥ १ ॥

मति आदि भेद विच्छेद कीन, ज्ञायक विशुद्ध निज भाव लीन।
निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमूं शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार ॥ २ ॥

ओं ह्रीं शुद्धज्ञानाय नमः अर्घं।

सर्वांग चेतना व्याप्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप।
परलेश न निज परदेश मांहि, नमूं शुद्ध सिद्ध चिद्रूप ताहि ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं शुद्धचिद्रूपाय नमः अर्घं।

अन्तर विधि उदय विपाकटार, तुम जातिभेद बांहिज विडार।
निज परिणतिमें नहीं लेश शेष, नमूं शुद्धरूप गुणगण विशेष ॥४॥

ओं ह्रीं शुद्धस्वरूपाय नमः अर्घं।

गगादि ... घातका विध्वंश, आकुलित भाव राखो न अंश।
पायो निज शुद्ध सरूप भाव, नमूं सिद्धवर्ग धर हिये चाव ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं परम शुद्धसरूपभावाय नमः अर्घं।

दोहा—त्रिकाल में ना डिगे, रहैं निजानन्द थान।
नमूं शुद्ध दृढ़ गुण सहित, सिद्धराज भगवान ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं शुद्धदृढ़ाय नमः अर्घं।

निज आवर्तकमें वसे, नित ज्यों जलधि कलोल।
नमूं शुद्ध आवर्तको, करि निज हिये अडोल ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं शुद्धआवर्तकाय नमः अर्घं।

परकृत कर उपज्यो नहीं, ज्ञानादिक निज भाव।
नमों सिद्ध निज अमलपद, पायो सहज सुभाव ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं शुद्धस्वयंभवे नमः अर्घं।

पद्धड़ी छन्द।

स्वैसिद्ध अनन्त चतुष्ट पाय, स्वैशुद्ध चेतना पुंजकाय।

पद्धड़ी छन्द ।

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग ।
निजरस स्वेदन है भोगसार, सो भोगो तुम हम नमस्कार ॥१८॥

ॐ ह्रीं शुद्धभोगाय नमः अर्घं ।

दोहा—निर्ममत्व युगपद लख्यो, तुम सब लोकालोक ।
शुद्ध ज्ञान तुमको लख्यो, नमों शुद्ध अवलोक ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धावलोकाय नमः अर्घं ।

पद्धड़ी छन्द ।

निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान ।
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अर्हंत जान ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलितशुक्लध्यानाग्निजिनाय नमः अर्घं ।

दोहा—आदि अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्यकी जात ।
स्वयं सिद्ध परमात्मा, प्रणमूं सिद्ध निपात ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धनिपाताय नमः अर्घं ।

लोकालोक अनन्तवें, भाग वसो तुम आन ।
ये तुमसों अति भिन्न है, शुद्ध गर्भ यह जान ॥ २२ ॥
ओं ह्रीं शुद्धगर्भाय नमः अर्घं ।

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास ।
शुद्ध वास परमात्मा, नमों सुगुणकी रास ॥ २३ ॥
ओं ह्रीं शुद्धवासाय नमः अर्घं ।

अति विशुद्ध निज धर्ममें, वसत नशत सब खेद ।
परम वास नमि सिद्धको, वासी वास अभेद ॥ २४ ॥
ओं ह्रीं विशुद्धपरमवासाय नमः अर्घं ।

वहिरंतर द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय ।
निरविकार परमातमा, नमूं नमूं सुखदाय ॥ २५ ॥
ओं ह्रीं शुद्धपरमात्मने नमः अर्घं

हीन अधिक इक देशको, विकल विभाव उछेद ।
शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूं सिद्ध निरभेद ॥ २६ ॥

ओं ह्रीं शुद्ध अनन्ताय नमः अर्घं ।

त्रोटक छन्द ।

तुम राग विरोध विनाश कियो, निज ज्ञानसुधारस स्वाद लियो ।
तुम पूरणशांति विशुद्ध धरो, हमको इक देश विशुद्ध करो ॥२७।

ओं ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घं ।

विद पंडित नाम कहावत है, विद अन्त जु अन्तहि पावत है ।
निज ज्ञान प्रकाश सु अन्त लहो, कुछ अंश न जानन माहिं रहो ।२८।

ओं ह्रीं शुद्धविदंताय नमः अर्घं ।

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो ।
मन इन्द्रिय ज्ञान न पावत ही, अति शुद्ध निरूपम ज्योति मही ।२९।

ओं ह्रीं शुद्धज्योतिजिनाय नमः अर्घं ।

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो ।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन शासनमें परसिद्ध कहो ।३०।

ओं ह्रीं शुद्धनिर्वाणाय नमः अर्घं ।

करि अन्त न गर्भ लियो फिरकें, जनमे शिववास जनम धरके।
जिनको फिर गर्भ न हो कबहूं, शिवराज कहाय नमूं अब हूं ।३१।

ओं ह्रीं शुद्धसंदभगर्भाय नमः अर्घं ।

जगजीवन काम नशायक हो, तुम आप महा सुखनाइक हो।
तुम मंगल मूरति शांति सही, सब पाप नशै तुम पूजत ही ।३२।

ओं ह्रीं शुद्धशांताय नमः अर्घं ।

दोहा—पंचपरमपदईश है, पंचमगति जगदीश।
जगत प्रपंच रहित बसे नमूं सिद्ध जग ईश ॥ ३३ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः महार्घं निर्वपामि स्वाहा।

यहां १०८ बार जाप देना चाहिये।

अथ जयमाला।

दोहा—परम ब्रह्म परमातमा, परम ज्योति शिवथान।
परमातम पद पाइयो, नमों सिद्ध भगवान ॥ १ ॥

छन्द—कामिनी मोहन मात्रा २० ।

जय मरण कष्टको टार अमरा भये,
जय जन्म व्याधि परिहार अजरा भये ।
जय द्विविध कर्ममल जार अमला भये,
जय दुविधि टार संसार अचला भये ॥ १ ॥
जय जगन वास तज जगन स्वामी भये,
जय विनाशनाम थिर परम नामी भये, ।
जय कुबुधि रूप तजि विविधि रूपा भये,
जय निषध दोष तज सुगुण भूपा भये ॥ २ ॥
कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइए,
लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइये ।
इन्द्र नागेन्द्र धर सीस तुम पद जजें,
महा वैराग रस पाग मुनिगण भजें ॥ ३ ॥
विघन घन दहन दौं अघन घन पौन हो,

सुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन माईं,
निजसों गुणाधिस्य संगतिको, लहिय न हर्पाई ॥सिद्ध०॥
चौंसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥सिद्ध०॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौंसठ गुणसहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं संसारतापविनाशनाय चंदनं ॥२॥

क्षीरज धान सुवासित नीरज, करसों छरलाई ।
अंगुलसे तंदुलसों पूजत, अक्षय पद पाई ॥ सि० ॥
चौंसठ गुण नामाविधिमाला सुमरों सुखदाई ॥ सि० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चौंसठ गुणसहित श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥३॥

धूलि सार छवि हरण विवर्जित, फूलमाल लाई ।
काम शूल निरमूल करणकों, पूजहुं तुम पाईं ॥ सि० ॥
चौंसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरों सुखदाई ॥ सि० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौसठ गुणसहित श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं ॥ ४ ॥

भूख गार अक्षोण रसी हू, पूरति है नाई ।
चारुमाल तुम पद पूजत हों, पूरन शिवराई ॥ सिद्ध० ॥
चौंसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौंसठगुणसहित श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपनिप्रति तुम पद पूजत, शिव मारग दरशाई ।
घोर अंध संसार हरणको, भली सूझ पाई ॥ सिद्ध० ॥
चौंसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने चौंसठगुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

कृष्णागरु कर्पूर पूर घट, अगनीसे प्रजलाई ।

उड़ै धूम यह, उड़ै किधौं जर करमनकी छाई। सिद्धगण पूजोरे भाई।
चोसठ गुण नामा विधि माला, सुमरो सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहित श्री सम्यक्त्वणाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहण अगुरुलघुमव्वाबाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

मधुर मनोग सुप्रासुकफलसों, पूजों शिवराई।
यथायोग विधि फलको दे गुण, फलकी अधिकाई ॥ सि० ॥
चोसठ गुणनामा विधि माला, सुमरो सुखदाई। सिद्धगण० ॥

ओं ह्रीं श्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौसठगुणसहित श्रीसम्मत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई।
भेट धरत तुम पद पाऊँ पद, निर आकुलताई ॥ सिद्ध० ॥
चौसठ गुणनामा विधिमाला, सुमरों सुखदाई ॥ सिद्ध० ॥

ओं ह्रीं श्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चौसठ गुण सहित सम्मत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं सर्वगुणप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ चौसठ गुण सहित अर्घ ।

चाल छन्द ।

चउ घातो कर्म नशायो, अरहंत परम पद पायो ।
द्वै धर्म कहो सुखकारा, नमूं सिद्ध भए अविकारा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अरहंत जिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

संक्लेश भाव परिहारी, भए अमलअवधि बलधारी ।
सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अवधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

निर्मल चारित्र समारा, परमावधि पटल उघारा ।
केवल पायो तिस कारण, नमूं सिद्ध भये जग तारण ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं णमो परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधिके हो स्वामी ।

अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमूं सिद्ध भये सुखदाया ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

जिस अन्त अवधिको नाहीं, तुम उपजायो पद ताहीं ।
निर्मल अवधी गुणधारी, सब सिद्ध नमूं सुखकारी ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

तप बल महिमा अधिकाई, बुद्धि कोष्ठ रिद्धि उपजाई ।
श्रुत ज्ञान कोष्ट भंडारी, नमूं सिद्ध भये अविकारी ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

ज्यों बीज फले बहुरासी, त्यों छिनहीं बहु अभ्यासी ।
यह पावन ही योगीशा, भये सिद्ध नमूं शिव ईशा ॥ ७ ॥
ओं ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

पदमात्र समस्त चितारे, है रिद्धि यह पद अनुसारे ।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमूं शिवथानी ॥ ८ ॥
ओं ह्रीं पादानुसारिणीऋद्धिरूपिभ्यो नमः अर्घं ।

जो भिन्न भिन्न इक लारे, शब्दन सुन अर्थ विचारै।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमूं सिद्ध भये जगत्राता ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं संभिन्नश्रोतृऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं।

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, विन गुरुके सहज सरूपा।
भयो स्वयंबुद्ध निज ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ॥ १०॥

ओं ह्रीं स्वयंबुद्धाणं नमः अर्घं।

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा।
प्रत्येक बुद्ध गुण धारी, भये सिद्ध नमूं हितकारी ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं प्रत्येकबुद्धऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं।

गणधरसे समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी।
ज्ञानि निःसिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गाये ॥१२॥

ओं ह्रीं अर्हं बोधबुद्धाणं नमः अर्घं।

मन योग सरलता धारै, तिस अन्तर भेद उघारै।

यो होय ऋजुमति ज्ञानी, नमूं सिद्ध भये सुखदानी ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं ऋजुमतिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं।

वाके मनको सब वाता, जाने सो विपुल कहाता।

तुम पाय भये शिवधामी, नमूं सिद्धराज अभिरामी ॥१४॥

ओं ह्रीं विपुलमतिऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं।

सुर विद्याको नहीं चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं।

दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो।१५।

ओं ह्रीं दसपूर्वऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं।

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जाने परोक्ष परमानी।

प्रत्यक्ष लखो तिस सारूं भये सिद्ध हरो अघ म्हारूं ॥१६॥

ओं ह्रीं चौदहपूर्वऋद्धिऋषिभ्यो नमः अर्घं।

सुन्दरी छन्द।

ज्योतिषादिक लक्षण जानकैं, शुभ अशुभ फल कहंत बखानिकैं।

निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमूं यथा ।१७।

ओं ह्रीं अष्टांगनिमित्त रिद्धि रिपिभ्यो नमः अर्घं ।

बहुत विधि अणिमादिक रिद्ध जू, तप प्रभाव भई तिन सिद्ध जू

निष्प्रयोजन निजपद लीन है, नमूं सिद्ध भये स्वाधीन है॥१८॥

ओं ह्रीं विवर्णरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

भूमि जल जंतु जिय ही ना हरैं, नमूं ते मुनि शिव कामिन वरैं

नेक नहिं बाधा परिहार हो, नमूं सिद्ध सभी सुखकार हो ।१९।

ओं ह्रीं विज्जाहरणरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

जंघपर दो हाथ लगावहीं, अन्तरीक्ष पवनवत जावहीं ।

पाय ऋद्धि महामुनि चारणी, यथायोग्य विशुद्ध विहारणी ।२०।

ओं ह्रीं चारणरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

खग समान चलै आकाशमें, लीन नित निज धर्म प्रकाशमें ।

शुद्ध चारण करि निज सिद्धता, पाइयो हम नमन करैं यथा ।२१।

ओं ह्रीं आकाशगामिनीरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

वाद विद्या फुरत प्रमानही, वज्रसम परमतगिरि हानही ।
सब कुपक्षी दोष प्रगट करैं, स्याद्वाद महाद्युतिको धरैं ॥२२॥

ओं ह्रीं परामर्शरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहिं तिस शक्ती हरैं ।
ते महामुनि जग सुखदाय जू, हम नमैं तिन शिवपद पाय जू ।२ ।

ओं ह्रीं आशीविषरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

जो महाविष अति परचण्ड हो, दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो ।
सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमूं उर धारकैं ॥ २४ ॥

ओं ह्रीं दृष्टिविषंविषरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

अनशनादिक नित प्रति साधना, मरणकाल तहं न विराधना ।
उग्र तप करि वसुविधि नासतैं, हम नमैं शिवलोक प्रकाशतैं ।२५।

ओं ह्रीं उग्रतपरिद्धि रिपिभ्यो नमः अर्घं ।

चढती नित प्रति सहज प्रभावना, उग्र तप करि क्लेश न पावना।
दीप्ति तप करि कर्म जरायकैं, भये सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २६ ॥

ओं ह्रीं दीप्ततपरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

अन्तराय भये उत्सव चढै, बाल चन्द्र समान कला चढै।
वृद्ध तपकी ऋद्धि लहै यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती ।२७।

ओं ह्रीं तपवृद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

सिंह क्रीडित आदि विधानतैं, नित बढावत तप विधि मानतैं।
महामुनीश्वर तप परकाशतैं, नमूं मुक्ति भये जगवासतैं ॥ २८ ॥

ओं ह्रीं महातपरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

सिषिरिगिरि ग्रीषम, हिम सरतटैं, तरु निकट पावस निजपद रटैं।
घोर परिषह करि नाही हटैं, भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं ॥ २९

ओं ह्रीं घोरतपरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

ओं ह्रीं मनोबली रिद्धिप्राप्तेभ्यो नमः अर्घं ।

भिन्न भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक महूरत अन्तर श्रुत वर्णन करैं ।
वचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ३८ ॥

ओं ह्रीं वचनबली रिद्धिप्राप्तेभ्यो नमः अर्घं ।

खड्गासन इक अंग माम छे मास लो,
अचल रूप थिर रहे छिनक खेदित न हो ।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजों तिन पांय जू ॥ ३९ ॥

ओं ह्रीं कायबली रिद्धिप्राप्तेभ्यो नमः अर्घं ।

अति अरस चरु क्षीर होय कर धरत हो,
वचन खिरत पर श्रवण तुष्टता करत ही ।

क्षीरश्रवी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४० ॥
ओं ह्रीं क्षीरस्रावी रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

रूखे भोजनसे करमें घृत रस श्रवे,
वचन सुनत परको घृत सम स्वादित ह्वै ।
सार्पिश्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४१ ॥
ओं ह्रीं सर्पिश्रावीरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

हस्तकमलमें अन्न मधुर रस देत हैं,
मधुकर सम जिय वचन गंधको लेत है ।
मधुश्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४२ ॥
ओं ह्रीं मधुश्रावीरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

ओं ह्रीं मनोबली रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

भिन्न भिन्न अति शुद्ध उच्च स्वर उच्चरैं,
एक महूरत अन्तर श्रुत वर्णन करैं ।
वचनबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ३८ ॥

ओं ह्रीं वचनबली रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

खड्गासन इक अंग मास छै मास लो,
अचल रूप थिर रहै छिनक खेदित न हो ।
कायबली यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजों तिन पांय जू ॥ ३९ ॥

ओं ह्रीं कायबली रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

अति अरस चरु क्षीर होय कर धरत ही,
वचन खिरत पर श्रवण तुष्टता करत ही ।

क्षीरश्रवी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४० ॥
ओं ह्रीं क्षीरस्रावी रिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

रूखे भोजनसे करमें घृत रस श्रवे,
वचन सुनत परको घृत सम स्वादित ह्वै ।
सर्पिश्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४१ ॥
ओं ह्रीं सर्पिश्रावीरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

हस्तकमलमें अन्न मधुर रस देत हैं,
मधुकर सम जिय वचन गंधको लेत है ।
मधुश्रावी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४२ ॥
ओं ह्रीं मधुश्रावीरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं ।

अमृतसम आहार होय कर आयके,
वचनामृत दै सुक्ख श्रवणमें जायके।
आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४३ ॥
ओं ह्रीं अमियरसरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

जिस वासन जिस थान आहार करैं यती,
चक्री सेना खाय अखे होवे अती।
अक्षीण रसी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजूं तिन पांय जू ॥ ४४ ॥
ओं ह्रीं अक्षीणरसरिद्धिरिपिभ्यो नमः अर्घं।

सोरठा—सिद्धरास सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे।
नमूं ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम है ॥ ४५ ॥
ओं ह्रीं वर्द्धमानसिद्धेभ्यो नमः अर्घं।

रागादिक परिणाम, अन्तरके अरि नासके ।
लहि अरहंत सु नाम, नमों सिद्धपद पाइया ॥ ४६ ॥

ओं ह्रीं अरहन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

दो अन्तिम गुण थान, भाव सिद्ध इस लोकमें ।
तथा द्रव्य शिव थान, सर्व सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ४७ ॥

ओं ह्रीं णमो लोए सव्वसिद्धाणं नमः अर्घं

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी ।
नमूं सिद्ध जिननाह, संतनिके भवभय हरे ॥४८ ॥

ओं ह्रीं भयवदो महावीरवड्ढमाणं नमः अर्घं ।

क्षपकश्रेणी आरूढ़, निजभावी योगी यथा ।
निश्चय दर्श अमूढ़, सिद्ध योग सब ही जजों ॥ ४९ ॥

ओं ह्रीं णमो योगसिद्धाणं नमः अर्घं ।

वीतराग परधान, ध्यान करे तिनको सदा ।

सोई ध्येय महान, णमो सिद्ध हम अघ हरो ॥ ५० ॥
ओं ह्रीं णमो ध्येयसिद्धाणं नमः अर्घं ।
लोक शिखर शिव थान, अचल विराजत सिद्ध जिन ।
लोकवास सर्वान, भए सिद्ध प्रणमूं सदा ॥ ५१ ॥
ओं ह्रीं णमो मङ्गलसिद्धाणं नमः अर्घं ।
औरन करत कल्याण, आप सर्व कल्याणमय ।
सोई सिद्ध महान, मंगलहेतु नमूं सदा ॥५२॥
ओं णमो स्वस्तिसिद्धाणं नमः अर्घं ।
तीन लोकके पूज, सर्वोत्तम सुखदाय है ।
जिन सम और न दूज, तिनपद पूजों भाव युत ॥ ५३ ॥
ओं ह्रीं अर्हं सिद्धाणं नमः अर्घं ।
लोकोत्तम परधान, तिन पद पूजत हैं सदा ।
तातैं सिद्ध महान, सर्व पूज्यके पूज्य हो ॥ ५४ ॥
ओं ह्रीं अर्हं सिद्ध सिद्धाणं नमः अर्घं ।

परम धरम निज साध, परमातम पद पाइयो ।
सोई धर्म अबाध, पूजत हमको दीजिये ॥ ५५ ॥

ॐ ह्रीं परमातमसिद्धाणं नमः अर्घं ।

सर्व रिद्ध नव निद्ध, सिद्ध भये नहिं सिद्ध हो ।
निजपद साधत सिद्ध, होत सही तिनको णमों ॥ ५६ ॥

ॐ ह्रीं परमसिद्धाणं नमः अर्घं ।

परमागमकी शाख, परम अगम गुणगण सहित ।
सोई मनमें राख, श्रद्धायुत पूजा करों ॥ ५७ ॥

ॐ ह्रीं परमागमसिद्धाणं नमः अर्घं ।

गुण अनंत परकाश, महाविभव मय लसत है ।
आवर्णित पद नाश, ते पूजूं प्रणमूं सदा ॥ ५८ ॥

ॐ ह्रीं णमो प्रकाशमानसिद्धाणं नमः अर्घं ।

स्वयं सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाश मय ।
लसत नमूं मन आन, मम उर चिंता दुख हरो ॥ ५९ ॥

ओं ह्रीं णमो स्वयंभूसिद्धाणं नमः अर्घं ।

मन इन्द्रियसों भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर ।
सोई ब्रह्म अखिन्न, साधित सद्ध भए नमूं ॥ ६० ॥
ओं ह्रीं णमो ब्रह्मसिद्धाणं नमः अर्घं ।

द्रव्य अनन्त गुणातम, परणामी परसिद्धके,
सोई पद निज आतम, सापत सिद्ध अनन्त गुण ॥ ६१ ॥
ओं ह्रीं णमो अनन्तगुणसिद्धाणं नमः अर्घं

सर्व तत्वमय पर्म, गुण अनन्त परमातमा ।
सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनको नमूं ॥ ६२ ॥
ओं ह्रीं णमो परमअनन्तसिद्धाणं नमः अर्घं ।

लोक सिखरके वास, पायो अविचल थान निज ।
सब लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनको नमों ॥ ६३ ॥
ओं ह्रीं लोकनाथसिद्धाणं नमः अर्घं ।

काल विभाग अनादि, शास्वत रूप विराजते ।
यातैं नहिं सो आदि, नमि अनादि सिद्धानको ॥ ६४ ॥

ओं ह्रीं णमो अनादिसिद्धाणं नमः अर्घं ।

गीता छन्द।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नृत्यमुं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमलैं ॥ १ ॥
ते कर्मवर्त नसाय युगपति, ज्ञान निर्मल रूप है,
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप है ।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चाहुं, ज्ञेय द्यो हम शुभ मती ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अर्हंतजिनादिसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं ।

५

अथ जयमाला ।

दोहा—तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, जापद करत प्रणाम ।
हम किह मुख वर्णन करैं, तिन महिमा अभिराम ॥ १ ॥

चौपाई ।

जय भवि कुमुदन मोदन चंदा, जय दिनन्द त्रिभुवन अरविंदा ।
भव तप हरण शरण रस कूपा, मद ज्वर जरन हरण घन रूपा ॥२॥
अकथित महिमा अमित अथाईं, निर उपमेय सरसता नाईं ।
भावलिंग विन कर्म खिपाईं, द्रव्य लिंग विन शिवपद पाईं ॥ ३ ॥
नय विभाग विन वस्तु प्रमाणा, दया भाव विन जिन कल्याणा ।
पंगु सुमेरु चूलिका परसै, गुंग गान आरंभे स्वरसै ॥ ४ ॥
यों अजोग कारज नहिं होईं, तुम गुण कथन कठिन है सोईं ।
सर्व जैन शासन निजमाहीं, भाग अनन्त धरै तुम नाहीं ॥ ५ ॥
गोखुरमें नहीं सिंधु समावै, वायस लोक अन्त नहिं पावै ।

... पावन करौं अपावन उर हम ॥ ...
तातैं केवल भक्ति भाव तुम, पावन करौं अपावन उर हम ॥
जे तुम यश निज मुख उच्चारैं, ते तिहुं लोक सुजस विस्तारैं।
तुम गुण गान मात्र कर प्रानी, पावै सगुण महासुखदानी ॥ ७ ॥
जिन चित ध्यान सलिल तुमधारा, ते मुनि तीरथ है निरधारा।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवासी, वचन जालमें लेत न फासी ॥ ८ ॥
जगत वंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि।
अक्षय शिव स्वरूप श्रिय स्वामी, पूर्ण निजानन्द विश्रामी ॥ ९ ॥
शरणागत सर्वस्व सुहितकर, जन्म मरण दुख आधि व्याधि हर।
संत भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी ॥ १०॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः महार्घं निर्वपामि स्वाहा।

घत्तानन्द छन्द।

जय सुखसागर सुजस उजागर, गुणगण आगर तारण हो।
जय ... विपति विडारण, सुख विस्तारण कारण हो ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, तापद करत प्रणाम ।
हम किह मुख वर्णन करें, तिन महिमा अभिराम ॥ १ ॥

चौपाई ।

जय भवि कुमुदन मोहन चंदा, जय दिनन्द त्रिभुवन अरविंदा ।
[illegible] जय हरण शरण सम कूपा, मद ज्वर जरन हरण घन रूपा ॥२॥
[illegible] महिमा अमित अथाई, निर उपमेय सरसता नाहीं ।
[illegible] बिन कर्म खिपाई, द्रव्य लिंग बिन शिवपद पाई ॥ ३ ॥
जय [illegible] बिन वस्तु प्रमाणा, दया भाव बिन जिन कल्याणा ।
पंगु सुमेरु चूलिका परसे, गुंग गान आरंभे स्वरसे ॥ ४ ॥
यों अजोग कारज नहिं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई ।
सर्व जैन शासन निजमाहीं, भाग अनन्त धरे तुम नाहीं ॥ ५ ॥
गोखुरमें नहीं सिंधु समावे, वायस लोक अन्त नहिं पावे ।

तातें केवल भक्ति भाव तुम, पावन करो अपावन उर हम ॥ ६ ॥
जे तुम यश निज मुख उच्चारें, ते तिहुं लोक सुजस विस्तारे।
तुम गुण गान मात्र कर प्रानी, पावै सुगुण महासुखदानी ॥ ७ ॥
जिन चित ध्यान सलिल तुमधारा, ते मुनि तीरथ है निरधारा।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवासी, वचन जालमें लेत न फासी ॥ ८ ॥
जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वसिधि।
अक्षय शिव स्वरूप श्रिय स्वामी, पूर्ण निजानन्द विश्रामी ॥ ९ ॥
शरणागत सर्वस्व सुहितकर, जन्म मरण दुख आधि व्याधि हर।
संत भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी ॥ १०॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः महार्घं निर्वपामि स्वाहा।

घत्तानन्द छन्द।

जय सुखसागर सुजस उजागर, गुणगण आगर तारण हो।
संत उधारण विपति विडारण, सुख विस्तारण कारण हो॥

[illegible] मत्र प्रमान विधान करूं।
[illegible] अरहंतो भवको व्याधि हरूं

[illegible]

[illegible] पूजा।

[illegible] हकार विराजै,
[illegible] कणिका अन्त सु छाजै।
[illegible] अम्बुज तत्त्व संधिधर,
[illegible] मत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
[illegible] वर्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाशको।
[illegible] पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करौ ॥ १ ॥
[illegible] श्रीमदष्टोत्तर [illegible] १२८ गुण-

सहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित निररोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनं।

अथाष्टकं।

चाल चारागारा छन्द।

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकान्तमणि, मनतें श्रवै हुलसधारा हो।
कंज सुवासित प्रासुक जलसों, पूजूं अंतर अनुसारा हो॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो।
चौंसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरण सुमिरतहीं भव पारा हो॥१॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसे अष्टाङ्ग गुणसंयुक्ताय श्री सम्म-
णाणदंसणवीर्यं सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्याबाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं।१।

तुम गुण गान परम फलदान, सो मंत्र प्रमान विधान करूं।
जहरी, कर्मनि वैरी की कहरी, असहैरी भवको व्याधि हरूं॥

इत्याशीर्वादः।

इति चतुर्थपूजा समाप्तं॥

अथ पंचमी पूजा।

छप्पै छन्द।

ऊरध अधो सुरेफ सु बिंदु हंकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिपर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर॥
फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाशको।
केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करों॥ १॥
ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अष्टाधिकशतगुणसंयुक्त १२८ गुण-

...गतमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। मम सन्निहितो भव भव वषट्।

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग।
सिद्धचक्र सो थापहूं, मिटै उपद्रव योग॥

इति यंत्रस्थापनं।

अथाष्टकं।

चाल बारामासा छन्द।

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकान्तमणि, मनतें श्रवै हुलसधारा हो।
कंज सुवासित प्रासुक जलसों, पूजूं अंतर अनुसारा हो॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचरण उर धारा हो।
चौंसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरण सुमिरतही भव पारा हो॥१॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसे अठाईस गुणसंयुक्ताय श्री समत्त-णाणदंसणवीर्य सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वावाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं॥१॥

सुरमन मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं।
सो चन्दन नन्दनवन भूषण, तुम पद कमल चढ़ावत हैं॥
लोकाधीश०, चौसठ० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसे अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय श्री समत्त णाण दंसण वीर्य सुहमतहेव अवगाहणंअगुरुलघुमव्वाबाहं संसारतापविनाशनाय चन्दनं०

चपक हीके भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए,
शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुंजधार पद कंज नये।
लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्ध चरण उर धारा हो,
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरण सुमिरत ही भवपारा हो॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहित श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवगाहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३ ॥

मदन वदन दुतिहरन वरन रति लोचन अलिगण छाय रहे।
पुष्पमाल वासित विसाल सो, भेंट धरत उर काम दहे॥
लोकाधीश० चौसठ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्यं सुहम-तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ४

चिंतवत मन वरणत रसना रस, स्वाद लेत ही तृप्त थये।
जन्मांतरहू छुधानिवारैं, सो नेवज तुम भेट धरे ॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरन, सुमरत ही भवपारा हो ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्यं सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

लवमणिप्रभा अनूपम सुर निज, शीश धरणको रास करे हो।
या बिन तुच्छ विभव निज जानें, सो दीपक तुम भेट धरे हो ॥
लोकाधीश०, चौसठ० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्यं सुहमत्त-हेव अवग्गहणं अगुरुघुमव्वावाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

नीलंजसा करी नभमें ज्यों, ऋषभ भक्तिकर नृत्य कियो हो।

सुरमन मणिधर जास वास लहि, मद तजि गंध लुभावत हैं।
सो चन्दन नन्दनवन भूषण, तुम पद कमल चढ़ावत हैं॥
लोकाधीश०, चौसठ० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने एकसे अट्ठाईसगुणसंयुक्ताय श्री समत्त णाण दंसण वीर्य सुहुमतहेव अवग्गहणंअगुरुलघुमव्वाबाहं संसारतापविनाशनाय चन्दनं०

चंपक होके भ्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भये,
शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुंजधार पद कंज नये।
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्ध चरण उर धारा हो,
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरण सुमिरत ही भवपारा हो॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहित श्रीसमत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३ ॥

मदन वदन दुतिहरन वरन रति लोचन अलिगण छाय रहे।
पुष्पमाल वासित विसाल सो, भेंट धरत उर काम दहै॥
लोकाधीश० चौसठ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-नहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ४

चिनवन मन वरणत रसना रस, स्वाद लेत ही तृप्त थये।
जन्मांतरहू क्षुधानिवारें, सो नेवज तुम भेट धरै ॥
लोकाधीश शीश चूड़ामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौंसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरन, सुमरत ही भवपारा हो ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमसहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

रत्नमणिप्रभा अनूपम सुर निज, शीश धरणकी रास करे हो।
या विन तुच्छ विभव निज जानें, सो दीपक तुम भेट धरे हो ॥
लोकाधीश०, चौंसठ० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्त-हेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

नीलंजसा करी नभमें ज्यों, ऋषभ भक्तिकर नृत्य कियो हो।

सो तुम सन्मुख धूप उड़ावत, तिसछविकोनहिभाव लियो हो।
लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो।
चौसठ दुगुण सुगुण मणि सुवरन सुमिरत ही भवपारा हो॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-नहंव अवगहणं अगुरुयुमव्वावाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं॥ ७॥

सेव रंगीले अनार रसीले, केलाकी लै डाल फली हो।
डालो हू नृपमाली हू, नांतर प्रासुकताको रीति भली हो॥
लोकाधीश०, चौसठ०॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-नहंव अवगहणं अगुरुयुमव्वावाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं॥ ८॥

एकसे एक अधिक सोहत वसु, जाति अर्घ करि चरण नमूं हूं।
आनंद आरति आरत तजिकैं, परमारथ हित कुमति वमूं हूं॥
लोकाधीश०, चौसठ०॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने १२८ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसणवीर्यं सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अनर्घपदप्राप्तये अर्घं ।

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपाइन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ॥
ते कर्मवर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है,
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप है ।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय चाहूं, ज्ञेय द्यो हम शुभमती ॥

ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिअधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घं ।

अथ एकसै अठाईस गुण सहित अर्घ ।

त्रोटक छन्द ।

निरबाध सु तत्त्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो ।
अति शुद्ध सुभाविक छायक है, नमूं दर्श महासुखदायक है ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नमः अर्घं ।

निरमोह अक्रोह अबाधित हो, परभाव थकी न विराधित हो ।
निरसंस चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सु ज्ञान प्रमानत हैं ॥२ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नमः अर्घं ।

सब राग विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन है ।
परमें न कभू निज भाव बहै, अति सम्यक्चारित्र नाम यहै ॥३॥

ओं ह्रीं सम्यक्चारित्राय नमः अर्घं ।

उतपाद विनाश न बाध धरैं, परनाम सुभाव नहीं निसरै ।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहां ॥४॥

ओं ह्रीं अस्तित्वधर्माय नमः अर्घं ।

ॐ ह्रीं अमूर्तित्वधर्माय नमः अर्घं ।

परको न कदाचित धर्म गहैं, निजधर्म सरूप न छांडत हैं ।
अतिउत्तम धर्म सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं समकितधर्माय नमः अर्घं ।

जितने कछु हैं परिणाम विषैं, सब ज्ञान स्वरूप सु जान तिसैं ।
सुख ज्ञानमई गुण धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानधर्माय नमः अर्घं ।

चिन्मय चिन्मूरति जीव सही, अति पूरणता विन भेद कही ।
निज जीव सुभाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं जीवधर्माय नमः अर्घं ।

मनको नहिं वेग लखावत हैं, जिस वेन नहीं बतलावत हैं ।
अति सूक्षम भाव सु धारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मधर्माय नमः अर्घं ।

ओं ह्रीं अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं ।

सुख सम्यक्त आदि महागुण को, तुम साधित सिद्ध भए अबही ।
यह उत्तम भाव सुधारत हैं, हम पूजत पाप विडारत हैं ॥ १९ ॥

ओं ह्रीं सम्यक्त्वादिगुणान्वितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं ।

दोहा—निश्चय पंचाचार सब, भेद रहित तुम साध ।
चेतनकी अति शक्तिमें, सूचत सब निरबाध ॥ २० ॥

ओं ह्रीं पंचाचारचार्येभ्यो नमः अर्घ्यं ।

चौपाई ।

सब विकल्प तजि भेद सरूपी, निज अनुभूति मग्न चिद्रूपी ।
निश्चय रत्नत्रय परकासो, पूजूं भाव भेद हम नासो ॥ २१ ॥

ओं ह्रीं रत्नत्रयप्रकाशाय नमः अर्घ्यं ।

करण भेद रत्नत्रय धारी, कर्म भेद निज भाव संसारी ।
करता भेद आप परिणामी, भेदाभेद रूप प्रणमामी ॥ २२ ॥

ओं ह्रीं स्वस्वभावकर्मसाधुभ्यो नमः अर्घ्यं ।

दोहा—समारम्भ क्रोधित सुमन, परकारित दुख नाहिं।
परमातम पद पाइयो, नमूं सिद्ध गुण ताहि॥ २७॥
ओं ह्रीं अकारितमनःक्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नमः अर्घ

भुजंगप्रयात छन्द।

समारम्भ क्रोधी मनोयोग माहीं, धरे मोदना भावका जीव ताहीं।
भये आप संतुष्ट पे त्याग भावा, नमूं सिद्ध सो दोषनाहीं उपावा।२८।
ॐ ह्रीं नानुमोदितमनःक्रोधसमारम्भपरमानंदसंतुष्टाय नमः अर्घं।

पद्धड़ी छन्द।

निज क्रोधित मन आरम्भ ठान, जग जिय दुखमें सुख रहे मान।
सो आप त्याग संक्लेश भाव, भये सिद्ध नमूं धर हिये चाव॥ २९॥
ॐ ह्रीं अकृतमनःक्रोधारम्भस्वसंस्थानाय नमः अर्घं।

क्रोधित मनसो आरम्भ हेत, प्रेरित निज अपराध लेत।
जग जीवनकी विपरीत रीति, तुम त्याग भये शिव वर पुनीत।३०।
ओं ह्रीं अकारितमनःक्रोधारम्भवन्धसंस्थानाय नमः अर्घं।

अडिल्ल छन्द ।

समारम्भ परिवर्तमान युत मन धरे,
विकल्पमई उपकरण विविध इकठे करै ।
महा कष्टको हेत भाव यह ना गहो,
प्रणमूं सिद्ध अनन्त सुखातम गुण लहो ॥ ३५ ॥
ओं ह्रीं अकृतमनोमानसमारम्भगुणात्मगुणाय नमः अर्घं ।

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करै,
समारम्भ पर कृत्य करावन विधि वरै ।
तहां कष्टको हेत भाव यह ना गहो,
प्रणमूं सिद्ध अनन्यगुणातम पद लहो ॥ ३६ ॥
ओं ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भ अनन्यगताय नमः अर्घं ।

जोडे चित न समाज विविध जिस काजमें,
समारम्भ तिस नाम सो मति जिनराजमें ।

मानै मानी मन आनन्द सु नमातिसे
नमूं सिद्ध है अतुल वीर्य त्यागत तिसे ॥ ३७ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारंभअनन्तवीर्याय नमः अर्घं।

अशुभ काज परिवर्त नाम आरम्भको,
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो।
जगवासी जिय नित प्रति पाप उपाय है,
णमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय है ॥ ३८ ॥
ओं ह्रीं अकृतमनोयोगमानारम्भअनन्तसुखाय नमः अर्घं।

दोहा—मनो मान आरम्भके, भये अकारित आप।
अतुल ज्ञान धारी भए, नमत नसै सब पाप ॥ ३९ ॥
ओं ह्रीं अकारितमनो मानारम्भअनन्तज्ञानाय नमः अर्घं।

मनो मान आरम्भमें, नानुमोदि भगवंत।
गुण अनन्त युत सिद्धपद, पूजत हैं नित संत ॥ ४० ॥

ओं ह्रीं अकृत मनोमायारम्भसमभावाय नमः अर्घं ।

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप ।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान ॥४८॥

ओं ह्रीं अकारित मनोमायारंभनिराकुलाय नमः अर्घं ।

दोहा–मायावी आरम्भ करि, मनमें आनन्द मान ।
सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान ॥ ४९ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमनोमायारंभअनन्तसुखाय नमः अर्घं ।

लोभी मन द्वारे नहीं, करे सदा समरंभ ।
हम अनन्तदृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथंभ ॥५०॥

ओं ह्रीं अकृतमनोलोभसंरम्भअनन्तदृगाय नमः अर्घं ।

लोभी मन समरंभको, परसों नाहिं कराय ।
दृगानन्द भावातमा, सिद्ध नमूं मन लाय ॥ ५१ ॥

ओं ह्रीं अकारितमनःलोभसंरंभदृगानन्दभावाय नमः अर्घं ।

लोभी मन समरंभमें, मानै नहीं आनन्द।
नमूं नमूं परमातमा, भये सिद्ध जगवंद ॥ ५२ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसंरंभसिद्धभावाय नमः अर्घं ।

समारम्भ नहि करत हैं, लोभी मनके द्वार।
चिदानन्द चिद्देव तुम, नमूं लहूं पद सार ॥५३॥

ओं ह्रीं अकृतमनोलोभसमारम्भनिर्द्वंद्वाय नमः अर्घं ।

परसों भी पूर्वोक्त विधि, कबहूं नहीं कराय।
निराकार परमातमा, नमूं सिद्ध हर्षाय ॥ ५४ ॥

ओं ह्रीं अकारितमनो लोभसमारंभअनाकाराय नमः अर्घं ।

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित होवे नाहिं।
चितसरूप साकारपद, धारत हूं उरमाहिं ॥ ५५ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमनो लोभसमारम्भसाकाराय नमः अर्घं ।

रचना हिंसा काजकी, लोभी मनके द्वार।

नहीं करैं हैं ते नमूं, चिदानन्द पद सार ॥ ५६ ॥

ओं ह्रीं अकृतमनोलोभारंभचिदानंदाय नमः अर्घं ।

लोभी मन प्रेरित नहीं, परको आरम्भ हेत ।
चिनमय रूपी पद धरे, नमूं लहूं निज खेत ॥ ५७ ॥

ओं ह्रीं अकारितमनोलोभारम्भचिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घं ।

मन लोभी आरंभमें, आनन्द लहे न लेस ।
निजपदमें नित रमत हैं, ध्याऊं भक्ति विशेष ॥ ५८ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारंभस्वरूपाय नमः अर्घं ।

अडिल्ल छन्द ।

क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोगको,
रचना विधि संकल्प नाम समरंभ सो ।
तामें करैं प्रवृत्ति पाप उपजावते,
नमूं सिद्ध या बिन वचगति उपावते ॥ ५९ ॥

ओं ह्रीं अकृतवचनक्रोधसंरंभवाग्गुप्ताय नमः अर्घं ।

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावही,
वचन योग करि विधि संरंभ करावही ।
सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो,
नमूं उरानन्द धार चिदानन्द रूप हो ॥ ६० ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनक्रोधसंरंभस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सोरठा—क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो संरंभमें ।
सो तुम भाव विडार, नमूं स्वानुभव लब्धियुत ॥ ६१ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसंरंभस्वानुभवलब्धये अर्घं ।

दोहा—क्रोध सहित वाणी नहीं, समारंभ परवृत्त ।
स्वानुभूति रमणी रमण, नमूं सिद्ध कृतकृत्य ॥ ६२ ॥

ओं ह्रीं अकृतवचनक्रोधसमारंभस्वानुभूतिरमणाय नमः अर्घं ।

समारंभ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार ।

नमूं सिद्ध इस कर्म विन, धर्मधरा साधार ॥ ६३ ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारंभसाधारणधर्माय नमः अर्घं ।

समारंभ मय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध ।

नमूं सिद्ध या विन लहो, परम शांति सुख बोध ॥ ६४ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारंभपरमशांताय नमः अर्घं ।

छन्द मोतियादाम ।

वैर वचयोग धरै जिय रोप, करैं विधि भेद अरम्भ सदोप ।

तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमूं परमामृत तुष्ट अवार ।६५।

ओं ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भपरमामृततुष्टाय नमः अर्घं ।

अकारित वैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार अरम्भ अबोध

भये समरूप महारस धार, नमैं हम सिद्ध लहैं भवपार ।६६

ओं ह्रीं अकारितवचनक्रोधारम्भसमरसाय नमः अर्घं ।

दोहा—नानुमोद आरम्भमें, क्रोध सहित वच द्वार ।

परम प्रीति निज आतमरति, नमूं सिद्ध सुखकार ॥ ६७ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारंभपरमात्मने नमः अर्घं ।

अडिल्ल ।

वचन द्वार संरम्भ मानयुत जे करें,
जोड़ करन उपकरण मानसो ऊचरें ।
नाना विधि दुख भोग निजातमको हरें,
नमूं सिद्ध या विन अविनश्वर पद धरें ॥ ६८ ॥

ओं ह्रीं अकृतवचनमानसंरम्भ अविनश्वरधर्माय नमः अर्घं ।

मान प्रकृति करि उदे करावे ना कदा,
वचन न करि संरम्भ भेद वरणूं यदा ।
मन इन्द्रिय अव्यक्त स्वरूप अनूप हो,
नमूं सिद्ध गुण सागर स्वातम रूप हो ॥ ६९ ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनमानसंरम्भअव्यक्तस्वरूपाय नमः अर्घं ।

मायायुत वचननको प्रयोग, संरंभ करावत अशुभ भोग।
तुम यह कलंक नहीं धरो लेश, हो अमृत शशी पूजूं हमेश ।७८।
ओं ह्रीं अकारितवचनमायासंरंभअमृतचन्द्राय नमः अर्घं ।

वचमायायुत संरंभ कीन, सो पापरूप भावी मलीन।
तिस त्याग अनेक गुणात्म रूप, राजत अनेक मूरत अनूप ।७९।
ओं ह्रीं नानुमोदितवचनमायासंरंभअनेकमूर्तये नमः अर्घं ।

तुम समारंभकी विधि विधान, नहीं करत कुटिलता भेद ठान।
हो नित्य निरञ्जन भाव युक्त, मैं नमूं सदा संशय विमुक्त ॥८०॥
ओं ह्रीं अकृतवचनमायासमारंभनित्यनिरञ्जनस्वभावाय नमः अर्घं ।

दोहा—मायायुत निज वैनतैं, समारंभके हेत।
नहीं प्रेरित परको नमूं, निजगुण धर्म समेत ॥ ८१ ॥
ओं ह्रीं अकारितवचनमायासमारंभआत्मकधर्माय नमः अर्घं ।

मायाकरि बोलत नहीं, समारंभ हर्षाय।
सूक्ष्म अतीन्द्रिय गुण नमूं, नमूं सिद्ध मन लाय ॥ ८२ ॥

वर्तावन संरंभ हेत परके तईं,
लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई ।
नमूं सिद्ध पद यह विपरीति सु जिन हरो,
सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण धरो ॥ ८७ ॥
ओं ह्रीं अकारितवचनलोभसंरंभव्यापकगुणाय नमः अर्घं ।

लोभी वच संरंभ हर्ष परकाशनं,
नाना विधि सञ्चरे पाप दुख राशनं ।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपद पाइयो,
नमूं अचल गुण सहित सिद्ध मन भाइयो ॥ ८८ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसंरंभअचलाय नमः अर्घं ।

सोरठा—समारम्भके वेन, लोभ सहित पर आसतजि ।
तज निरलम्बी पेन, नमूं सिद्ध उर धारिके ॥ ८९ ॥
ओं ह्रीं अकृतवचनलोभसमारंभनिरालंबाय नमः अर्घं ।

समारंभ उपदेश, लोभ उदै थिति मेटिकें ।

पायौ अचल स्वदेश, नमूं निराश्रय सिद्ध गुण ॥ ९० ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनलोभसमारम्भनिराश्रयाय नमः अर्घं ।

नानुमोद वच लोभ, समारंभ परवृत्तमें ।
नमूं तिन्हें तजि क्षोभ, नित्य अखण्ड विराजतें ॥ ९१ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारम्भअखण्डाय नमः अर्घं ।

दोहा—लोभ सहित आरंभको, करत नहीं व्याख्यान ।
नूतन पंचम गति लहो, नमूं सिद्ध भगवान ॥ ९२ ॥

ओंह्रीं अकृतवचनलोभारम्भपरीतावस्थाय नमः अर्घं ।

लोभ वचन आरंभको, कहत न परके हेत ।
समैसार परमातमा, नमत सदा सुख देत ॥ ९३ ॥

ओं ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भसमयसाराय नमः अर्घं ।

सोरठा—नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरम्भमय ।
अजर अमर सुखदाय, नमूं निरन्तर सिद्धपद ॥ ९४ ॥

७

ओं ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भनिरंतराय नमः अर्घं ।

अडिल्ल—क्रोधित रूप भयंकर हस्तादिक तनी,
करत समस्या सो संरम्भ प्रकाशनी ।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तदा,
दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमूं सदा ॥ ९५ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायक्रोधसंरंभकायगुप्तये नमः अर्घं ।

सोरठा—पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित संरम्भ तज ।
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमूं सदा ॥ ९६ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायक्रोधसंरंभशुद्धकायाय नमः अर्घं ।

हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय समरम्भमें ।
त्यागत भये अकाय, नमूं सिद्ध पद भावयुत ॥ ९७ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसंरंभ अकायाय नमः अर्घं ।

समारम्भ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोधकी ।
स्वे गुणपर्य समेट, भक्ति सहित प्रणमूं सदा ॥ ९८ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायक्रोधसमारंभस्वान्वयगुणाय नमः अर्घं ।

दोहा—समारम्भ विधि क्रोध युत, तनसों नहीं कराय ।
नित प्रति रति निजभावमें, वंदूं तिनके पाइ ॥ ९९ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भभावरतये नमः अर्घं ।

समारम्भ सो कायसों, क्रोध सहित परसंस ।
स्वे अभिन्न पद पाइयो, नमूं त्याग सरवंस ॥ १०० ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसमारम्भसान्वयधर्माय नमः अर्घं ।

क्रोधित कायारम्भ तजि, परसों रहित स्वभाव ।
शुद्ध द्रव्यमें रत नमूं, निज सुख सहज उपाव ॥ १०१ ॥

ओं ह्रीं अकृतकायक्रोधारंभशुद्धद्रव्यरताय नमः अर्घं ।

क्रोधित कायारम्भ नहीं, रंच प्रपंच कराय ।
पंच रूप संसार हनि, नमूं पंचमगति राइ ॥ १०२ ॥

ओं ह्रीं अकारितकायक्रोधारम्भसंसारछेदकाय नमः अर्घं ।

क्रोधित कायारम्भमें, हर्ष विषाद विडार ।

अनेकान्त वस्तुत्व गुण, धरै नमों पद सार ॥ १०३ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारम्भजैनधर्माय नमः अर्घं ।
मान सहित संरम्भको, तनसो रचना त्याग ।
पर प्रवेश जिन रूप निज, लियो नमूं बडभाग ॥ १०४ ॥
ओं ह्रीं अकृतमानकायसंरंभस्वरूपगुप्तये नमः अर्घं ।
मान उदय संरंभ विधि, तनसों नहीं कराय ।
निज कृत पर उपकार जिन, लियो नमूं तिन पाइ ॥ १०५ ॥
ओं ह्रीं अकारितमानकायसंरम्भनिजकृतये नमः अर्घं ।
मान सहित संरंभमें, तिनसों हर्ष न लेश ।
ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमूं अशेश ॥ १०६ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमानकायसंरंभध्येयभावाय नमः अर्घं ।
मदयुत तनसों रंच भी, समारंभ विधि नाहिं ।
परमाराधन योगपद, पायो प्रणमूं ताहि ॥ १०७ ॥
ओं ह्रीं अकृतमानकायसमारंभपरमाराधनाय नमः अर्घं ।

समारंभ निज कायसों, मदयुत नहीं कराय।
ज्ञानानंद सुभाव युत, प्रणमूं शीश नवाय ॥ १०८ ॥
ओं ह्रीं अकारितमानकायसमारंभआनंदगुणाय नमः अर्घं।

समारंभ मय विधि सहित, तनसों हर्ष न होय।
निजानन्द नंदित तिन्हें, नमूं सदा मद खोय ॥ १०९ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितमानकायसमारंभस्वानंदनंदिताय नमः अर्घं।

अर्द्ध चौपाई।

अकृत मानारम्भ शरीर, पर अनिंद्य वन्दूं वर धीर ॥ ११० ॥
ओं ह्रीं अकृतमानकायारम्भसंतोषाय नमः अर्घं।

कायारम्भ अकारित मान, स्वसरूपरत वन्दूं तान ॥ १११(अ) ॥
ओं ह्रीं अकारितमानकायारम्भस्वसरूपरताय नमः अर्घं।

मानारम्भ अनंदित काय, प्रणमूं विमल शुद्ध पर्याय ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायारम्भशुद्धपर्यायाय नमः अर्घं।

दोहा—मायायुत संरम्भ विधि, तनसों करत न आप।
गुप्त निजामृत रस लहै, नमूं तिन्हैं तज पाप॥ ११२॥
ओं ह्रीं अकृतकायमायासंरम्भअमृतगर्भाय नमः अर्घं।

मायायुत संरम्भ वि.ध, तनसों नहीं कराय।
मुख्य धर्म चैतन्यता, विनवै प्रणमूं पाय॥ ११३॥
ओं ह्रीं अकारितकायमायासंरम्भचैतन्यताय नमः अर्घं।

मायायुत संरम्भ मय, नानुमोद्युत काय।
वीतराग आनंद पद, समरस भावन भाय॥११४॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायमायासंरम्भसमरसीभावाय नमः अर्घं।

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद।
वन्ध दशा स्वै पर द्विविधि, नमत नसै भव खेद॥ ११५॥
ओं ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भभवछेदकाय नमः अर्घं।

समारम्भ तन कुटिलसों, [illegible] अकारित स्वामि।

निज परिणति परिणमन विन, गुण स्वातंत्र नमामि ॥११६॥
ओं ह्रीं अकारितकायमायासमारम्भस्वातंत्रधर्माय नमः अर्घं ।

नानुमोदि तन कुटिलता, समारंभ विधि देव ।
गुण अनंत युत परिणमूं, धर्म समूही एव ॥ ११७ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भधर्मसमूहाय नमः अर्घं ।

मायायुत निज देहसों, नहीं आरम्भ करेह ।
परमातम सुख अक्ष विन, पायो वन्दूं तेह ॥ ११८ ॥
ओं ह्रीं अकृतकायमायारम्भपरमात्मसुखाय नमः अर्घं ।

मायारम्भ शरीर करि, परसों नहीं करान ।
निष्टातम स्वस्थित नमूं, सिद्धराज गुणखान ॥ ११९ ॥
ओं ह्रीं अकारितकायमायारम्भनिष्टात्मने नमः अर्घं ।

मायारम्भ शरीरसों, नानुमोद भगवन्त ।
दर्शज्ञानमय चेतना, सहित नमों नित सन्त ॥ १२० ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायारम्भचेतनाय नमः अर्घं ।

अर्द्ध पद्धडी

संरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग ।१२१

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसंरम्भपरमचितपरिणताय नमः अर्घं ।

संरम्भ अकारित लोभ देह ।

निज आतम रत स्वसमेय तेह ॥ १२२ ॥

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसंरम्भस्वसमयरताय नमः अर्घं ।

संरम्भ लोभ तन हत नाश ।

नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश ॥ १२३ ॥

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसंरम्भव्यक्तधर्माय नमः अर्घं ।

सोरठा—लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाशके ।

ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजूं सिद्धपद ॥ १२४ ॥

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भनित्यगुणाय नमः अर्घं ।

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि ।
पायो पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजूं सदा ॥ १२५ ॥
ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भअकषायाय नमः अर्घ ।

पूरववत् नानन्द, परिग्रह इच्छा मेटिकें ।
पायो शौच स्वछन्द, नमूं सिद्धपद भक्ति युत ॥ १२६ ॥
ओं ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नमः अर्घ ।

दोहा--काय द्वार आरम्भको. लोभ उदय विधि नाश ।
नमो चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश ॥ १२७ ॥
ओं ह्रीं अकृतलोभारम्भचिदात्मने नमः अर्घ ।

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय ।
निज अवलम्बित पद लियो, नमूं सदा तिन पाइ ॥ १२८ ॥
ॐ ह्रीं अकारितकायलोभनिरालंबाय नमः अर्घ ।

लोभी तन आरम्भमें, आनंद रीती मेंट ।

नमूं सिद्ध पद पाइयो, निज आतम गुण श्रेष्ठ ॥ १२६ ॥

ओं ह्रीं नानुमोदितकायलोभारम्भआत्मने नमः अर्घं ।

सवैया इकतीसा—जैते कछु पुद्गल परमाणु शब्दरूप,
भये हैं अतीत काल आगे होनहार हैं ।
तिनको अनन्त गुण करत अनन्तवार,
ऐसे महाराशी रूप धरैं विसतार हैं ॥
सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातमके,
मानो गुण गण उचरन अर्थ धार है ।
तौभी इक समयके अनन्त भाग आनंदको
कहत न कहैं हम कौन परकार हैं ॥

ओं ह्रीं अष्टाविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

१०८ वार जाप देना चाहिये ।

अथ जयमाला ।

दोहा—त्रिभुवन [illegible] भाव उर, भक्ति भाव [illegible] ।
केवल निज आनंद की, [illegible] ॥

[illegible] छन्द ।

जय मदन कदन मन [illegible] नाश, जय [illegible] निज सुख [illegible] ।
जय कपट सुभट पट [illegible] सूर, जय [illegible] ॥१॥
पर परणति सो अत्यन्त भिन्न, निज [illegible] सो अति ही [illegible] ।
अत्यन्त विमल सब ही विशेष, [illegible] लेश [illegible] न [illegible] ॥२॥
मणि दीप [illegible] निर्विघ्न ज्योति, [illegible] निज [illegible] होत ।
त्रैलोक्य शिखर [illegible] अखण्ड, [illegible] ॥३॥
मुनि मन मन्दिरको अन्धकार, [illegible] ।
सो सुलभ रूप पायें निजार्थ, [illegible] ॥४॥

जो कष्ट कालमें होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध ।
भवि पतितनको उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत ॥ ५ ॥
तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर शरीर नहीं पार पाह ।
जो भवदधि पार अभव्य रास, पावे न वृथा उद्यम प्रयास ॥ ६ ॥
जिन मुख द्रहसों निकसो अभंग, अति वेग रूप सिद्धान्त गंग ।
नय सप्त भंग कल्लोल मान, तिहुँ लोक यही धारा प्रमान ॥ ७ ॥
सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढ़त आनंद विशाल ॥
याते जगमें तीरथ सुधाम, कहिलायो है सत्यार्थ नाम ॥८॥
सो तुम हो सो हैं शोभनीक, नातर जल सम जु बहै सु ठीक ।
निजपर आतम हित आत्म भूत, जयसे है जग उतपत्ति सूत ॥ ९ ॥
ज्यों महाशीत हो हिम प्रवाह, है मेटन समरथ अगिन दाह ।
त्यों आप महामंगल स्वरूप, पर विघन विनाशन सहज रूप ॥ १० ॥

फुनि अन्त ही वेढ्यो परम सुर, ध्यावत ही अरि नागको ।
है केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीक०

दोहा—सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग ।
सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ॥ २ ॥

इति यंत्रस्थापनं ।

अथाष्टक ।

गीताछन्द ।

अति नम्रता तिहुं योगमें निज भक्ति निर्मल भावहीं ।
यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं ।
द्वै अर्द्धशत पट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

...सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहम-
सहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं ॥ १ ॥

अति वास विषय न वासनायुत मलय शील सुभावहीं.
अरु चन्दनादि सुगन्ध द्रव्य मनोग्य प्राशुक लावहीं ।
यह उभय० ॥ द्वै अर्द्ध शत पट० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-
सहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं संसारतापविनाशनाय चन्दनं ॥ २ ॥

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावहीं.
तिस सार अक्षत अखय स्वच्छ सुवास पुंज बनावहीं ।
यह उभय द्रव्य संजोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं.
द्वै अर्ध शत पट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने दोसेछप्पन गुण सहित विराजमान श्रीसमत्तणाणदंसण
सत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

फुनि अन्त ही वेढ्यो परम सुर, ध्यावत ही अरि नागको।
है केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीक०

दोहा—सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग।
सकल सिद्ध सो थापहूं, मिटे उपद्रव योग ॥ २ ॥

इति यंत्रस्थापनं।

अथाष्टक।

गीताछन्द।

अति नम्रता तिहुं योगमें निज भक्ति निर्मल भावहीं।
यह शुद्ध जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावहीं ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं।
द्वै अर्द्धशत पट अधिक नाम उचार विरद सु गावहीं ॥

मन पाग भक्त्यनुराग आनंद तान मालपुरावही।
निम भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागवास सु लावही॥
यह उभय०। ह्रौं अर्द्ध शत पट०॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ह्रीमंछ्यन गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहंय अवग्गहण अगुरुलघुमव्याबाह कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामि स्वाहा।

जिन भक्ति रसमें तृमना मन आन स्वाद न चावही।
अंतर चरु बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावही॥
यह उभय०। ह्रौं अर्द्ध शत पट०॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहंय अवग्गहण अगुरुलघुमव्याबाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०॥ ५॥

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावही।
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेंट धरावही॥
यह उभय०। ह्रौं अर्द्ध शत पट०॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समयसार दर्शन वीर्य सूक्ष्म-
त्वहेत अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ॥ ६ ॥

आनन्द धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र सु उड़ावहीं ।
गंधित दरब शुभ घ्राण प्रिय अति अलि संग जगावहीं ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं हैं अर्घ० ।

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहित श्री समयसार दर्शन वीर्य सूक्ष्म-
त्वहेत अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

शुभ चिंतवन फल विविध रस युत भक्ति नर उपजावहीं ।
*रसना लुभावन कल्पतरुके सुर असुर मन भावहीं ॥
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावहीं हैं अर्घ० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुणसहित श्री समयसार दर्शन वीर्य सूक्ष्म-
त्वहेत अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

* "केला नारंगी निम्ब आम्र सु नाक कामन भावहीं" ऐसा पाठ 'क' प्रतिमें है।

मन थाग भक्त्यनुराग आनंद तान मालपुरावही ।
निस भाग कुसुम सुहाग अर सुर नागवास सु लावही ॥
यह उभय० । द्वै अर्द्ध शत पट० ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने दोसैछप्पन गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेवअवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामि स्वाहा ।

जिन भक्ति रसमें तृप्तता मन आन स्वाद न चावही ।
अंतर चरु वाहिज मनोहर रसिक नेवज लावही ॥
यह उभय० । द्वै अर्द्ध शत पट० ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने २५६ गुण सहित श्री समत्तणाण दंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

सरधान दीप प्रदीप्त अंतर मोह तिमिर नशावही ।
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेंट धरावही ॥
यह उभय० । द्वै अर्द्ध शत पट० ॥

मुनि ध्येय सेय अभेय च्याहूं. गुणगेह श्री हम शुभमनो ।१।

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धचक्राधिपतये सम्मत्तणाणादि अष्टगुणाणं पूर्णार्घं ।

अथ २५६ गुण सहित नामावली अर्घ ।

चौपाई--मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरंजन विधि संसारा ।

तिस हनि समरथ अतिशय रूपा, केवल पाय नमूं शिव भूपा ॥१॥

ॐ ह्रीं चिरतरसंसारकारणज्ञाननिर्द्वंद्व केवलज्ञानातिशयसंपन्नाय सिद्धाधिपतये नमः अर्घं ।

मन इंद्रियनिमित मति ज्ञाना, योग देश निघ्न पद जाना ।

क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अभिनिबोधवारकविनाशकाय अर्घं ।

द्वादश अंगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद बखाना ।

क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं द्वादशांगश्रुतावरणीकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

है असंख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञानके भेद सु तेते।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं असंख्यभेदलोक अवधिज्ञानावर्णविमुक्ताय नमः अर्घं ।
है असंख्य परमान प्रमाना, मनपर्ययके भेद बखाना।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं असंख्यप्रकारमनःपर्ययज्ञानावर्णकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।
निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञानं, सत स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमानं।
केवल आवर्णी विधि नाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं निखिलरूपगुणपर्यायबोधककेवलज्ञानावरणविमुक्ताय नमः अर्घं ।
द्वारपती भूपतिके ताईं, रोक रहे देखन दे नाहीं।
सोई दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ७ ॥
ओं ह्रीं सकलदर्शनावरणीकर्मविनाशकाय नमः अर्घं ।
मूर्तीक पदको प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवै परकाशन।

चक्षु दर्शनावरण विनाशो, नमो [illegible] स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं चक्षुर्दर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

दृगविन अन्य इन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उघारे ।
अदृग दर्शनावरणविनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं अचक्षुर्दर्शनावरणकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

देशकाल द्रव भाव प्रमानं, अवधि दर्श होवे सव ठानं ।
अवधि दर्श आवरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १० ॥

ओं ह्रीं अवधिदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घं ।

विन मर्याद सकल तिंहु काल, होय प्रगट घटपट तिहं हाल ।
केवल दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं केवलदर्शनावरणरहिताय नमः अर्घं ।

बैठे खड़ें पड़ें घुम्मरिया, देखे नहीं निद्राकी विरिया ।
निद्रा दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं निद्राकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

सावधान कितनी को जावे, रंच नेत्र उघड़न नहीं पावे ।
निद्रा निद्रा कर्म विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

मंदरूप निद्राका आना, अवलोकें जाग्रतहि समाना ।
प्रचला दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

मुखसों लार बहै अति भारी, हस्त पाद कंपत दुखकारी ।
प्रचला प्रचला वर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

सोता हुआ करै सब काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा ।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमो सिद्धुध स्वज्ञान प्रकाशो ॥ १६॥

ओं ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जे पदार्थ है इन्द्रीय योग, ते सब वेदे जिय निज जोग।
सोई नाम वेदनी होई, नमूं सिद्ध तुम नासो सोई ॥ १७।

ओं ह्रीं वेदनीकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

रनिके उदय भोग सुखकार, भोगे जिय शुभ विविध प्रकार
नाना भेद वेदनी होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥ १८ ॥

ओं ह्रीं सातावेदनीकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार।
एही भेद असाता होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय ॥ १९ ॥

ओं ह्रीं असातावेदनीकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

ज्यों असावधानी मद्पान, करत मोह विधितें सो जान।
ता विधि करि निज लाभ न होय, नमूं सिद्ध तुम नाशो सोय॥

ओं ह्रीं मोहकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जाके उदय तत्त्व परतीत, सत्य रूप नहीं हो विपरीत।

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, चक्रताको जहं उद्योत है।
है प्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३०॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नमः अर्घं।
मोह लोभ चरित जे जिय वसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसै।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो॥३१॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नमः अर्घं।
अडिल—प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरें,
देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरें।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है॥ ३२॥
ओं ह्रीं प्रत्याख्यानीक्रोधविमुक्ताय नमः अर्घं।
प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है, जास उदय पूरणसंयम अव्यक्त है।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥३३॥

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, यक्तताको जहं उद्योत है।
है प्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३०॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नमः अर्घं।
मोह लोभ चरित जे जिय वसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसै।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो॥३१॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नमः अर्घं।
अडिल्ल—प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल-व्रत नाहीं धरें।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है॥ ३२॥
ओं ह्रीं प्रत्याख्यानीक्रोधविमुक्ताय नमः अर्घं।
प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है, जास उदय पूरणसंयम अव्यक्त है।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥३३॥

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, चक्रताको जहं उद्योत है।
है प्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३०॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नमः अर्घं।
मोह लोभ चरित जे जिय वसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसै।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३१॥
ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नमः अर्घं।
अडिल—प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरें।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥ ३२॥
ओं ह्रीं प्रत्याख्यानीक्रोधविमुक्ताय नमः अर्घं।
प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है, जास उदय पूरणसंयम अव्यक्त है।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥३३॥

... प्रत्याख्यानावरणमानरहिताय नमः अर्घं ।

प्रत्याख्यानी माया मुनि पदकों हतै, श्रावक व्रत पूरण नहीं खण्डे जासतै।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥ ३४ ॥

ओं ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायारहिताय नमः अर्घं ।

श्रावक पदमें जास लोभको वास है । प्रत्याख्यानी श्रुतमें संज्ञा तास है।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥ ३५॥

ओं ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभरहिताय नमः अर्घं ।

भुजगप्रयात छन्द ।

यथाख्यात चारित्रको नाश कारा, महाव्रत्तको जासमें हो उजारा ।
यही संज्वलन क्रोध सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नसाया।३६

ओं ह्रीं संज्वलनावरणक्रोधरहिताय नमः अर्घं ।

रहै संज्वलन रूप उद्योत जैते, न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते ।
यही संज्वलन मान सिद्धांत गाया, नमूं सिद्धके चरण ताको नशाया

ओं ह्रीं संज्वलनमानरहिताय नमः अर्घं ।

देशव्रती श्रावक नहीं होत है, वक्ताको जहं उद्योत है।
है प्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो ॥३०॥

ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नमः अर्घं।

मोह लोभ चरित जे जिय वसे, देशव्रत श्रावक नहीं ते लसै।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमूं तिन नासियो॥३१॥

ओं ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नमः अर्घं।

अडिल्ल—प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल व्रत नाहीं धरें।
चारित्र मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमूं सिद्ध शिवधाम है ॥ ३२॥

ओं ह्रीं प्रत्याख्यानीक्रोधविमुक्ताय नमः अर्घं।

प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है, जास उदय पूरणसंयम अव्यक्त है।
चारित मोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है, नाश कियो० ॥३३॥

ओं ह्रीं जुगुप्साकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जो नर नारि रमावनकी, निजसों अभिलाष धरै मनमाहीं,
सो अति ही परकाश हिये नित, कामकी दाह मिटै छिन नाहीं ।
सो जिनराज बखान नपुंसक, वेद हनो विधिके वश ऐसो,
हे भगवंत ! नमूं तुमको तुम जीति लियो छिनमें अरि तैसो ॥

ओं ह्रीं नपुंसकवेदरहिताय नमः अर्घं ।

जो तिय संग रमें विधि यो मन, औरनसे कछु आनन्द माने ।
किंचित् काम जगै उरमें नित, शांति सुभावनको शुधि ठाने ॥
सो जिनराज बखानत है नर, वेद हनो विधिके वश ऐसो ।
हे भगवन्त ! नमूं तुमको तुम, जीत लियो छिनमें अरि तैसो ॥

ओं ह्रीं पुरुषवेदरहिताय नमः अर्घं ।

जो नर संग रमें सुख मानत, अन्तर गूढ न जानत कोई ।
हाव विलास हि लाज धरे मन, आतुरता करि तृप्त न होई ॥

सो जिनराज वखानत है तिय, वेद हनो विधिके वश ऐसा।
हे भगवन्त नमूं तुमको तुम, जीति लियो छिनमें अर तैसो ॥४८

ओं ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय नमः अर्घं ।

वसंततिलका छन्द ।

आयु प्रमाण दृढ वन्धन और नाहीं, गत्यानुसार थिति पूरण कर्ण नाहीं ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ॥

ओं ह्रीं आयुकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जो है कलेश अवधी सव होत जासो, तेतीस सागर रहै थिति नर्कतासो ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ॥

ओं ह्रीं नरकायुरहिताय नमः अर्घं ।

याही प्रकार जितने दिन देव देही, नासै अकाल नहि जे सुर आयुले ही ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ॥

ओं ह्रीं देवायुरहिताय नमः अर्घं ।

जासो करै त्रिजगकी थिति आउ पूरी, सोई कहो त्रिजग आयु महालघूरी।

सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ।५२।

ओं ह्रीं तिर्यंचायुरहिताय नमः अर्घ्यं ।

जेते नरायु विधि के रस आप जाको, ते ते प्रजाय नर रूप भुगाय ताको ।
सोई विनाश कीनों तुम देवनाथा, वंदूं तुम्हें तरण कारण जोर हाथा ।।

ओं ह्रीं मनुष्यायुरहिताय नमः अर्घ्यं ।

पद्धड़ी छन्द—जो करे जीवको बहु प्रकार, ज्यों चित्रकार चित्राम सार ।
सो नाम कर्म तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ५४

ओं ह्रीं नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं ।

जासों उपजे तिर्यंच जीव, रहै ज्ञान हीन निर्मल सदीव ।
सो तिर्यंचगति तुम नाश कीन ।। मैं नमूं सदा० ।। ५५।।

ओं ह्रीं तिर्यंचगतिरहिताय नमः अर्घ्यं ।

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय ।
सो नर्कगती तुम नाश कीन ।। मैं नमूं सदा० ।। ५६ ।।

ओं ह्रीं नर्कगतिरहिताय नमः अर्घ्यं ।

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय ।
सो देवगती तुम नाश कीन ॥ मैं नमूं० ॥ ५७ ॥
ओं ह्रीं देवगतिकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जा उदय भये मानुष्य होत, लहै नीच ऊंच ताको उद्योत ।
सो मानुष गति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्ति लीन ।५८
ओं ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय नमः अर्घं ।

कामिनीमोहन छन्द ।

एक ही भाव सामान्यका पावना, जीवकी जातिका भेद सो गावना ॥
होत जो थावरा एक इंद्री कहो, पूज हूं सिद्धके चरण ताको दहो ॥
ओं ह्रीं एकइन्द्रीजातिरहिताय नमः अर्घं ।

फर्सके साथमें जीभ जो आमिलें, पायसों आपने आप भूपर चलें ।
गामिनी कर्म सो दोय इन्द्री कहो, पूजहूं सिद्धके चरण ताको दहो ॥
ओं ह्रीं दोइन्द्रीजातिरहिताय नमः अर्घं ।

९

नाक हो और दो आदिके जोड़में, हो उदय चालना योगसों दोलमें।
गामिनी कर्म सो तीन इन्द्री कहो, पूजहूं सिद्धके चरण ताको दहो ६१

ओं ह्रीं त्रीइन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घं।

आंख हो नाक हो जीभ हो फर्श हो, कानके शब्दका ज्ञान जामें न हो।
गामिनी कर्म सो चार इन्द्री कहो, पूजहूं० ॥ ६२ ॥

ओं ह्रीं चतुरिंद्रियजातिरहिताय नमः अर्घं।

कान भी आमिलें जीभ जा जातिमें, हो असंज्ञी सुसंज्ञी यह दो भांतिमें।
गामिनी कर्मकी पञ्च इन्द्री कहो, पूजहूं० ॥ ६३ ॥

ओं ह्रीं पंचेन्द्रियजातिरहिताय नमः अर्घं।

छन्द लावनी—हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्मकी प्रकृति भनी,
लहैं औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृतिके उदय तनी।
भये अकाय अमूरति आनन्द, पुंज चिदातम ज्योति घनी,
नमूं तुम्हें कर जोर युगल तुम, सकल रोगथल काय हनी।६४।

ओं ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय नमः अर्घं।

नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहैं।
भग अकाय० ॥ नमूं तुम्हें० ॥६८॥
ओं ह्रीं कारमाणशरीररहिताय नमः अर्घं।

इन्द्रवज्रा छन्द।

जेते प्रदेशा तन योग्य आवें, सारे मिलें जोड़ न छिद्र पावें।
संघात नामा जिय देह जाना, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म भानो।६९।
ओं ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय नमः अर्घं।
ऐसे प्रकारा तनमें अहारा, संधी मिलाया करवेतसारा।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म भानो।७०।
ओं ह्रीं आहारकसंघातरहिताय नमः अर्घं।
वैक्रियके जोड़ जो होत नाहीं, संघातनामा जिन चेन माहीं।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म भानो।७१।
ओं ह्रीं वैक्रियकसंघातरहिताय नमः अर्घं।

तेजस्कं अङ्ग उपंग न्यारे संधी मिलाया तिन मांहि धारे ।
संघात नामा तिय भेद जानो पूजूं तुम्हें सिद्ध वह कर्म भानो ॥७२॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

आहारादि आवर्गणा जो कर्म काया, ताको मिलाया अङ्ग माहिं गाया।
संघात नामा तिय भेद जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध वह कर्म भानो ॥७३॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

चौबोला छन्द—पुद्गलोक परमाणु जोग तैं जब जिय करत अहारा ।
प्रणवाय तिनको एकत्र करि, बंध उदय अनुसारा ॥
यहां औदारिक बन्धन तुमने, छेद किये निरधारा ।
भए अबन्ध अकाय अनूपम, नमूं भक्ति उर धारा ॥७४॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

वैक्रियक तनु परमाणु मिल, स्कन्धन अनिवारा ।
हो स्कन्ध रूप पर्याई, यह बन्धन परकारा ॥
वैक्रियिक तनु बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा॥ भए० ॥

कुब्ज नाम संस्थान ताहि वर्णौं जिन वानी।
यह विपरीत० ॥ बीजभूत कल्याण० ॥८२॥
ओं ह्रीं कुब्जकनामसंस्थानरहिताय नमः अर्घं।

लघुसों लघु ठिगना रूप एम तन होवे जाको,
वामन है परसिद्ध लोकमें कहिये ताको।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमूं, भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥८३॥
ओं ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय नमः अर्घं।

जिततित बहु आकार कहीं नहिं हो यक सारू,
हुंडक अति असुहावन पाप फल प्रगट उघारू।
यह विपरीत० ॥ बीजभूत कल्याण० ॥८४॥
ओं ह्रीं हुंडकसंस्थानरहिताय नमः अर्घं।

लक्ष्मीधरा छन्द—जीव आप भावसों जु कर्मकी क्रिया करेत,
अङ्ग वा उपङ्ग सो शरीरके उदय समेत।

सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सुपाइयो अबाध वास ॥८५॥
ओं ह्रीं औदारिकआङ्गोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

देव नारकी शरीर मांस रक्तसे न होत,
तासको अनेक भांति आप देसकै उद्योत ।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥८६॥
ओं ह्रीं वैक्रियिकआंगोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

साधुके शरीर मूलतें कहे प्रशंस योग,
संशयको विध्वंस कार केवली सु लेत भोग ।
आहारक सो शरीर अंग वा उपंग नाश
सिद्ध रूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥८७॥
ओं ह्रीं आहारकआंगोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

कुब्ज नाम संस्थान ताहि वरणें जिन वानी ।
यह विपरीत० ॥ बीजभूत कल्याण० ॥८२॥
ओं ह्रीं कुब्जकनामसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।

लघुसों लघु ठिगना रूप एम तन होवे जाको,
वामन है परसिद्ध लोकमें कहिये ताको ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजातम पद,
बीजभूत कल्याण नमूं, भव्यनि प्रति सुखप्रद ॥८३॥
ओं ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।

जिततित बहु आकार कहीं नहिं हो यक सारू,
हुंडक अति असुहावन पाप फल प्रगट उघारू ।
यह विपरीत० ॥ बीजभूत कल्याण० ॥८४॥
ओं ह्रीं हुंडकसंस्थानरहिताय नमः अर्घं ।

लक्ष्मीधरा छन्द—जीव आप भावसों जु कर्मकी क्रिया करेत,
अङ्ग वा उपङ्ग सो शरीरके उदय समेत ।

सो औदारिकी शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सुपाइयो अबाध वास ॥८५॥
ओं ह्रीं औदारिकआङ्गोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

देव नारकी शरीर मांस रक्तसे न होत,
तासको अनेक भांति आप देसके उद्योत ।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपंग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥८६॥
ओं ह्रीं वैक्रियिकआंगोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

साधुके शरीर मूलतें कहें प्रशंस योग,
संशयको विध्वंस कार केवली सु लेत भोग ।
आहारक सो शरीर अंग वा उपंग नाश
सिद्ध रूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ॥८७॥
ओं ह्रीं आहारकआंगोपांगरहिताय नमः अर्घं ।

पद त्याग बन्ध अबन्ध निवसो परम आनंद धार हो ॥९३॥

ॐ ह्रीं स्फाटिकसंहननरहिताय नमः अर्घं ।

दोहा—वर्ण विशेषण स्वेत है, नामकर्म तन धार ।

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥ ९४ ॥

ॐ ह्रीं श्वेतनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन पीत है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ ९५

ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन रक्त है, नामकर्म तन धार ॥

स्वच्छ स्वरूपी हो नमूं, ताहि कर्मरज टार ॥

ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन हरित है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ०

ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

वर्ण विशेषन कृष्ण है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥

ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेपन नर्म है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०६ ॥

ॐ ह्रीं मृदुत्वस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेपन कठिन है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०७॥

ॐ ह्रीं कठिनस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेपन भार है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०८ ॥

ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेपन अगुर है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १०९ ॥

ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेपन शीत है, नामकर्म तनधार ॥ स्वच्छ० ॥ ११० ॥

ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेपन उष्ण है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ १११ ॥

ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय नमः अर्घं ।

फर्स विशेपण चिक्कण है, नामकर्म तन धार ॥ स्वच्छ० ॥ ११२ ॥

विग्रहसौं चालमें अन्तरालमें धरैं पूर्व आकार ।
सो देव नाम करि गावत० ॥ तुम ताहि नशायो० ॥ ११६ ॥
ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घं ।

हो मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुष्यगति सार,
विग्रहसौं चालमें अन्तरालमें धरै पूर्व आकार ।
सो मनुष्य नाम करि गावत० ॥ तुम ताहि नशायो० ॥ ११७।
ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नमः अर्घं ।

छन्द त्रोटक ।

तनभार भए निज घात ठने, तिसकी कछु विधि ऐसी जु बने ।
अपघात सुकर्म सिद्धांत भनों, जग पूज्य भए तसु मूल हनों ॥११८।
ॐ ह्रीं अपघातकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

विष आदि अनेक उपाधि धरै, पर प्राणनिको निर्मूल करै ।
परघाति सु कर्म सि[illegible]

ॐ ह्रीं विहायोगतिकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

इक इन्द्रिय जात विरोध मई, चतुरांति सुभावक प्राप्त भई ।
त्रस नाम सु कर्मसिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२४॥

ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

इक इन्द्री जातहि पावन हैं, अरु शेष न ताहि धरावत हैं ।
यह थावर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२५॥

ॐ ह्रीं थावरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

परमैं परवेश न आप करैं, परको निजमें नहिं थाप धरैं ।
यह बादर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२६॥

ॐ ह्रीं बादरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जलसों दवसों नहीं आप मरे, सब ठौर रहै परको न हरे ।
यह सूक्षम कर्मसिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२७॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

ॐ ह्रीं विहायोगतिकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

इक इन्द्रिय जात विरोध भई, चतुरांति सुभावक प्राप्त भई ।
त्रस नाम सु कर्मसिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२४

ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मविमुक्ताय नमः अर्घं ।

इक इन्द्री जातहि पावन है, अरु शेष न ताहि धरावत है ।
यह थावर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२५ ॥

ॐ ह्रीं थावरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

परमैं परवेश न आप करैं, परको निजमें नहिं थाप धरैं ।
यह बादर कर्म सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२६॥

ॐ ह्रीं बादरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

जलसों दवसों नहीं आप मरै, सब ठौर रहै परको न हरै ।
यह सूक्षम कर्मसिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो ॥१२७॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

इह भेद निगोद सिद्धांत भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनों ।१३२

ॐ ह्रीं साधारणनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

उपेन्द्रवज्रा छन्द ।

चले न जो धातु तजै न वासा, यथाविधी आप धरै निवासा ।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३३

ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अनेक थानं मुख गौण घातं, चलंति धारं निजवास धातं ।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३४

ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

यथाविधी देह विलास सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै ।
यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ।१३५।

ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

असुन्दराकार शरीरमाहीं, लखों जहासों चिटरूप ताहीं

यही प्रकारा अशुभ नाम भासो, नमामि देवं तिस देह नासो १३६

ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी ।
सुभगताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ॥१३७

ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

धरैं अनेका गुण तोन जासों, करैं कभी प्रीति न कोइ तासों ।
दुर्भाग ताको यह भेद भासो, नमामि देवं तिस देह नासो ।१३८

ॐ ह्रीं दुर्भगकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द ।

ध्वनि वीन भांति ज्यों मधुर वैन, निसरै पिक आदिक सुरस देन ।
यह सुस्वर नामा प्रकृति कहाय, तुम हनों नमूं निज सीस लाय ॥

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय नमः अर्घं ।

गर्दभस्वर[1] जैसो कहो भास, तैसो रव अशुभ कहो सु भास ।

१ अस्पष्ट भूतवानी समान, असुहावन भयंकर शब्द जान। ऐसा पाठ "क" प्रतिमें है ।

ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४५॥

ओं ह्रीं निर्माणनामकर्मरहिताय नमः अर्घं।

पंचकल्याणक चोतिस अतिशय राज ही,
प्रातिहार्य अठ समोशरण द्युति छाज ही।
तीर्थंकर विधि विभव नाश स्वै पद लहो,
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो ॥१४६॥

ओं ह्रीं तीर्थंकरप्रकृतिरहिताय नमः अर्घं।

चाल छन्द–जो कुम्भकारकी नाईं, छिन घट छिन करत सराईं।
सो गोत कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४७॥

ओं ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घं।

लोकनिमैं पूज्य प्रधाना, सब करत विनय मनमाना।
यह ऊंच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा ॥१४८॥

ओं ह्रीं ऊंचगोत्रकर्मरहिताय नमः अर्घं।

मोतीयादाम छन्द।

न हो परिणाम विषै कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै विन भेद।
निजाश्रित भाव रमै सुखधाम, करूं तिस आनन्दकों परिणाम
ओं ह्रीं आनन्दस्वभावाय नमः अर्घं ॥१६२॥

धरैं जितने परिणामन भेद, विशेषन ते सब ही विन खेद।
पराश्रितता विन आनन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहुं पद शर्म।
ओं ह्रीं आनन्दधर्माय नमः अर्घं।१६३॥

न हो परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसे निज आनन्द भाव।
यही वरणो परमानन्द धर्म, नमूं तिन पाय लहुं पद शर्म॥
ओं ह्रीं परमानन्दधर्माय नमः अर्घं॥१६४॥

कभूं परसों कछु द्वेष न होत, कभूं फुनि हर्ष विशेष न होत।
रहै नित ही निज भावन लीन, नमूं पद साम सुभाव सु लीन॥
ओं ह्रीं साम्यस्वभावाय नमः अर्घं॥१६५॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणाय नमः अर्घं ॥१७८॥

गेरमे गेर हो ज्ञापमें ले रहो-स्वैनतुर मतमें नाम पायो।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो, मैं तुम्हें भक्तिधुन शीश नायो

ॐ ह्रीं अनन्तधर्माय नमः अर्घं ॥१७९॥

साधना जबतइं होत है तबतइं, दोऊ परिमाणको काज जामें।
आप स्वैपद लियो तिन जलांजलि दियो
अन्य नहीं चहत निज शुद्धतामें

ॐ ह्रीं परिमाणविमुक्ताय नमः अर्घं ॥१८०॥

तोमर छन्द—द्रग ज्ञान पूरणचन्द्र-अकलंक ज्योति अमन्द।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप नित पूजहुं चिद्रूप

ॐ ह्रीं ब्रह्मस्वरूपाय नमः अर्घं ॥१८१॥

सब ज्ञानमयी परिणाम, वर्णादिको नहिं काम।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहुं चिद्रूप ॥ १८२ ॥

ओं ह्रीं ब्रह्मगुणाय नमः अर्घं ।

निज चेतनागुण धार, त्रिन रूप हो अविकार ।
निरद्वंद ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूं चिद्रूप ॥ १८३ ॥

ओं ह्रीं ब्रह्मचेतनाय नमः अर्घं ।

सुन्दरी छन्द ।

अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा ।
कहते हैं मुनि शुद्ध सुभावजी, नमूं सिद्ध सदा निज पायजी ।१८४।

ओं ह्रीं शुद्धस्वभावाय नमः अर्घं ।

पर परिणामनसों नहिं मिलत है, निज परिणामन सों नहिं चलत है ।
*शुद्ध परिणामी तुम पद नमूं, नमत तुम पद सब अघको दमूं ॥१८५

ओं ह्रीं शुद्धपरिणामकाय नमः अर्घं ।

वस्तुता व्यवहार नहीं ग्रहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै ।

* 'परिणामी शुद्धस्वरूप एक, नमूं सिद्ध सदा निज पांय नेक'। ऐसा पाठ 'क' प्रतिमें है।

११

शुद्ध स्वच्छनताकरि साध्य है, निर्विकल्प समाधि अराध्य है ।१८६

ओं ह्रीं अशुद्धरहिताय नमः अर्घं ।

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभवमें विकल्प नहिं कोऊ ।
सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम तिसपद परनीत हो ॥१८७॥

ओं ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय नमः अर्घं।

चौपाई—क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षाइक रूप उघारो ।
युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ।१८८।

ओं ह्रीं अनन्तदृगस्वरूपाय नमः अर्घं।

जब पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनन्द उपायो ।
अविनाभाव स्वयं पद देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥ १८९ ॥

ओं ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय नमः अर्घं ।

नाश सु पूर्वक हो उतपाता, सत लक्षण परिणति मरजादा ।
क्षय उपशम नन क्षायक पेखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥ १९० ॥

द्रव्य-दृष्टिमें यह गुण देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ॥ १९१ ॥
ओं ह्रीं अनन्तत्वाय नमः अर्घं ।

कर्म नाश जो स्वापद पावे, रञ्च मात्र फिर अन्त न आवे ।
यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा । १९२ ।
ओं ह्रीं अव्ययभावाय नमः अर्घं ।

पर नहीं व्यापे तुमपद मांही, परमें रमण भाव तुम नाहीं ।
निज करि निजमें निज गुण देखा, ध्यावत हूं मन हर्ष विशेखा ।१९३
ओं ह्रीं अनन्तनिलयाय नमः अर्घं ।

शंखनारी छन्द ।

अनन्ताभिधानो, गुणाकार जानो । धरो आप सोई, नमूं मान खोई १९४
ओं ह्रीं अनंताकाराय नमः अर्घं ।

अनन्ता स्वभावा, विशेषन उपावा । धरो आप सोई, नमूं मान खोई ।१९५।
ओं ह्रीं अनन्तस्वभावाय नमः अर्घं ।

चिनाकार रूपा यह चिन्मय स्वरूपा। धरो आप सोई, नमूं मान खोई ।१९६

ओं ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय नमः अर्घ ।

सदा चेतनामें, न हो अन्यतामें। धरो आप सोई, नमूं मान खोई ।१९७

ओं ह्रीं चिद्रूपाय नमः अर्घं ।

दोहा—जो कछु भाव विशेष है, सब चिद्रूपी धर्म ।
असाधारण पूरण भये, नमत नशें सब कर्म ॥ १९८ ॥

ओं ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घ ।

परकृति व्याधि विनाशके, स्वै अनुभवकी प्राप्त ।
भई, नमूं तिनको, लहूं यह जगवास समाप्त ॥ १९९ ॥

ओं ह्रीं स्वानुभवउपलब्धिरमाय नमः अर्घ ।

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभवकी डोर ।
गह्रो लह्रो थिरता रह्रो, रमण ठोर नहीं ओर ॥ २०० ॥

सर्वोत्तम लोकाक रस, सुधा कृपन सब त्याग।
निज पद परमामृत रसिक, नमूं चरण बड़भाग ॥ २०१ ॥

ॐ ह्रीं परमामृतरसाय नमः अर्घं ।

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान।
जान निजानन्द परमरस, तुष्ट सिद्ध भगवान ॥ २०२ ॥

ॐ ह्रीं परमामृततुष्टाय नमः अर्घं ।

शंकातीत अतीतसो, धरे प्रीति निज माहिं ।
अमल लिये संतनि प्रिये, परम प्रीति नम ताहि ॥ २०३ ॥

ॐ ह्रीं परमप्रीताय नमः अर्घं ।

अक्षय आनन्द भाव युत, निज हितकार मनोग ।
सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग ॥ २०४ ॥

ॐ ह्रीं परमवल्लभयोगाय नमः अर्घं ।

शब्द गन्धरसफरस नहीं, नहीं वरण आकार ।

बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुन भाव निरधार ॥ २०५ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तभावाय नमः अर्घं ।

सर्व द्रव्यसों भिन्न है, नहिं अभिन्न तिहुंकाल ।

नमूं सदा परकाश धर, एक हि रूप विशाल ॥ २०६ ॥

ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सर्व द्रव्यतैं भिन्नता, जिम गुण निजमें वास ।

नमूं अखंड परमातमा, सदा सुगुणकी राश ॥ २०७ ॥

ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय नमः अर्घं ।

सर्व द्रव्य परिणामसों, मिलै न निज परिणाम ।

नमूं निजानन्द ज्योति घन, नित्य उदय अभिराम ॥ २०८ ॥

ओं ह्रीं एकत्वभावाय नमः अर्घं ।

चौपाई—पर संयोग तथा समवाय, यह संबाद न हो द्वै भाय ।

ॐ ह्रीं द्वैतभावी...काय नमः अर्घ्यं ।

पूर्व पर्याय नासियो सोई, जाको फिर उतपाद न होई ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमं सुखधाम ॥२१०

ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घ्यं ।

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव ।
अव्यय अविनाशी अभिराम. शाश्वत रूप नमं सुखधाम॥२११॥

ॐ ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय नमः अर्घ्यं ।

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरे निज ज्ञान ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमं सुखधाम ॥२१२

ॐ ह्रीं शाश्वतउद्योताय नमः अर्घ्यं ।

ज्ञानानंद सुधाकरचन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमं सुखधाम॥२१३॥

ॐ ह्रीं शाश्वतामृतचन्द्राय नमः अर्घ्यं ।

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निरविच्छेद अभेद अपार ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमूं सुखधाम ॥२१४॥
ओं ह्रीं शाश्वतअमृतमूर्तये नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द—मन इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, है सूक्ष्म नाम सरूप तेह।
मनःपर्यय जाकूं नाहिं पाय, सो सूक्ष्म परम सुगुण नमाय ॥२१५॥
ओं ह्रीं परमसूक्ष्माय नमः अर्घं ।

यहु रास नभोदरमें समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताकों न पाय ।
इकसों इककों बाधा न होहि, सूक्ष्म अविनाशी नमों सोहि ॥२१६॥
ओं ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय नमः अर्घं ।

नभ गुण ध्वनि हो यह जोग नाहिं, हो जिसो गुणी गुण तिसो ताहिं
सो राजत हो सूक्ष्म स्वरूप, नमहूं तुम सूक्ष्म गुण अनूप ॥२१७॥
ओं ह्रीं सूक्ष्मगुणाय नमः अर्घं ।

तुम त्याग द्वैतताको प्रसंग, पायो एकताकी छवि अभंग ।

जाको कबहूं अनुभव न होय, नमूं परम रूप है गुन सोय ॥२१८॥

ओं ह्रीं परमरूपगुणाय नमः अर्घं ।

छंद त्रोटक—सर्वार्थविमानिक देव तथा, मन इन्द्रिय भोगन शक्ति यथा।
इनके सुखको इक सीम सही, तुम आनंदको पर अन्त नहीं ॥२१९॥

ओं ह्रीं निरवधिगुणाय नमः अर्घं ।

जग जीवनिको नहिं भाग्य यहै, निज शक्ति उदय करि व्यक्ति लहै ।
तुम पूरण क्षायक भाव लहो, इम अन्त विना गुणरास गहो ।२२० ।

ओं ह्रीं निरवधिगुणाय नमः अर्घं ।

भवि-जीव सदा यह रीति धरें, नित नूतन पर्य विभाव धरें ।
तिस कारणको सब व्याधि दहो, तुम पाइ सुरूप जु अन्त न हो ।२२१

ओं ह्रीं निरवधिगुणाय नमः अर्घं ।

अवधि मनःपर्यय सु ज्ञान महा, द्रव्यादि विषै मरजाद लहा ।
तुम ताहि उलंघ सुभावमई, निजबोध लहो जिस अन्त नहीं ।२२२।

ओं ह्रीं अतुलज्ञानाय नमः अर्घ ।

हुं काल तिहूं जगके सुखको, कर चार अनंत गुणा इन को ।
तुम एक समय सुखकी समता, नहीं पाय नमूं मन आनंदता ।२२३।

ॐ ह्रीं अतुलसुखाय नमः अर्घं ।

नाराच छंद—सर्व जीव राशके सुभाव आप जान हो,
आपके सुभाव अंश और कौन ज्ञान हो।
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो,
राज हो सदीव देव चरण दास संत हो।२२४।

ओं ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घं ।

आपकी गुणोघ वेलि फैलि है अलोकलों,
शेषसे भ्रमाय पत्रकी न पाय नोकलों ।
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो,
राज हो सदीव देव चरण दास सन्त हो ।। २२५।

ओं ह्रीं अतुलगुणाय नमः अर्घं ।

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव भव छेद कराय।
असंसार पदको नमूं, यह भव त्रास नशाय॥ २३८॥
ओं ह्रीं असंसाराय नमः अर्घं।

नागरूपिणी तथा अर्धनाराच छन्द।

हरो सहाय कर्णको, सुभोगता विवर्णको।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥ २३९॥
ओं ह्रीं स्वानन्दाय नमः अर्घं।

न हो विभावता कदा, स्वभावमें सुखी सदा।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥ २४०॥
ओं ह्रीं स्वानन्दभावाय नमः अर्घं।

अखंद रूप सर्वथा, उपाधिकी नहीं व्यथा।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही॥ २४१॥
ओं ह्रीं स्वानंदस्वरूपाय नमः अर्घं।

दुभेदता न वेद ही, सचेतना अभेद ही।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही ॥ २४२ ॥

ॐ ह्रीं स्वानंदगुणाय नमः अर्घं ।

न अन्यकी प्रवाह है, अचाह है न चाह है।
निजातमीक एक ही, लहो अनंद तास ही ॥ २४३ ॥

ॐ ह्रीं स्वानंदसंतोषाय नमः अर्घं ।

सोरठा—रागादिक परिणाम, हैं कारण संसारके।
नाश लियो सुखधाम, नमत सदा भव भय हरूं ॥२४४ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय नमः अर्घं ।

उदइक भाव विनाश, प्रगट कियो निज अर्थको।
स्वातम गुण परकाश, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४५ ॥

ॐ ह्रीं स्वतंत्रधर्माय नमः अर्घं ।

निजगुण पर्ययरूप, स्वयं-सिद्ध परमातमा।

राजत हैं शिव भूप, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४६ ॥
ओं ह्रीं आत्मस्वभावाय नमः अर्घं ।
विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणतिमई ।
राजे हैं सुखखानि, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४७ ॥
ओं ह्रीं परमचित्परिणामाय नमः अर्घं ।
दर्श ज्ञानमई धर्म, चेतन धर्म प्रगट कहो ।
भेदाभेद सुधर्म, नमत सदा भव भय हरूं ॥ २४८ ॥
ओं ह्रीं चिद्रूपधर्माय नमः अर्घं ।
दर्शज्ञान गुणसार, जीवभूत परमातमा ।
राजत सब परकार, नमत सदा भव भय हरण ॥ २४९ ॥
ओं ह्रीं चिद्रूपगुणाय नमः अर्घं ।
अष्ट कर्म मल जार, दीप्तरूप निज पद लहो ।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५० ॥
ओं ह्रीं परमज्ञानकाय नमः अर्घं ।

रागादिक मल सोध, दोऊ विविध विधान विन।
लह्यो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५१ ॥
ॐ ह्रीं स्नातकधर्माय नमः अर्घं।

विधि आवरण विनाश, दर्श ज्ञान परिपूर्ण हो।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५२ ॥
ॐ ह्रीं सर्वावलोकाय नमः अर्घं।

निजकर निजमें वास, सर्व लोकसों भिन्नता।
पायो शिव सुख रास, नमत सदा भव भय हरण ॥२५३॥
ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घं।

ज्ञान-भानकी जोति, व्यापक लोकालोकमें।
दर्शन विन उद्योत, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५४ ॥
ॐ ह्रीं लोकालोकव्यापकाय नमः अर्घं।

जो कछु धरत विशेष, सब ही सब आनन्दमय।

क्लेश न भाव क्लेश, नमूं सदा भव भय हरण ॥ २५५ ॥

ॐ ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घं ।

जिस आनन्दको पार, पावत नहीं यह जगतजन ।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५६ ॥

ओं ह्रीं आनंदविधानाय नमः अर्घं ।

* नीचे लिखा पाठ "क" प्रतिमें है।

नित्य शर्म सुखकार, दर्शन ज्ञान चरित्रमय ।
मनतों दुविधा टार, नमत सदा भवभय हरो ॥ २५५ ॥

ओं ह्रीं रत्नत्रयसंयुक्ताय नमः अर्घं ।

सब जीवनके हेत, दशविधि धर्म बताइयो ।
जासों होय, सुचेत, आलस तजि धारण करो ॥ २५६ ॥

ओं ह्रीं दशधर्मसंयुक्ताय नमः अर्घं ।

ओं ह्रीं आनंदपूर्णाय नमः अर्घं ।

ॐ ह्रीं षट्पंचाशत्‌अधिकद्विशतगुणयुक्ताय सिद्धाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(यहां १०८ वार जाप देना चाहिये ।)

अथ जयमाला ।

दोहा—थावर शब्द विषय धरे, त्रस थावर पर्याय ।
यो न होय तो तुम सुगुण, हम किहविधि वर्णाय ।१।
तिसपर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान ।
बालक जल शशिबिंबको, चहत ग्रहण निज पान । २ ।

पद्धडी छन्द ।

जय पर जग निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध स्वरूप भाग ।
जय जग पालन बिन जगत देव, जय दयाभाव विन शांतिभेव ॥१॥
परसुख दुखकरण कुरीति टार, परसुख दुख कारण शक्ति धार ।
फुनि फुनि नव नव नित जन्मरीत, विन सर्वलोक थापी पुनीत ।२।

क्लेश न भाव कलेश, नमूं सदा भव भय हरण ॥ २५५ ॥
ॐ ह्रीं अतुलभावाय नमः अर्घं ।
जिस आनन्दको पार, पावत नहीं यह जगतजन ।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव भय हरण ॥ २५६ ॥
ओं ह्रीं आनंदविधानाय नमः अर्घं ।

---

* नीचे लिखा पाठ "क" प्रतिमें है।
नित्य शर्म सुखकार, दर्शन ज्ञान चरित्रमय ।
मनसों दुविधा टार, नमत सदा भवभय हरो ॥ २५५ ॥
ओं ह्रीं रत्नत्रयसंयुक्ताय नमः अर्घं ।
सब जीवनके हेत, दशविधि धर्म बताइयो ।
जासों होय, सुचेत, आलस तजि धारण करो ॥ २५६ ॥
ओं ह्रीं दशधर्मसंयुक्ताय नमः अर्घं ।

दोहा—इत्यादिक आनन्द गुण, धारत सिद्ध अनन्त ।
तिन पद आठों द्रव्यसों, पूजत हों निज सन्त ॥

ॐ ह्रीं आनंदपूर्णाय नमः अर्घं।
ॐ ह्रीं षट्पंचाशनअधिकद्विशतगुणयुक्ताय सिद्धाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।
(यहां १०८ वार जाप देना चाहिये।)

अथ जयमाला।

दोहा—थावर शब्द विषय धरे, त्रस थावर पर्याय।
यो न होय तो तुम सुगुण, हम किहविधि वर्णाय।१।
तिसपर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान।
बालक जल शशिबिंबको, चहत ग्रहण निज पान। २।

पद्धडी छन्द।

जय पर जग निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध स्वरूप भाग।
जय जग पालन विन जगत देव, जय दयाभाव विन शांतिभेव॥१॥
परसुख दुखकरण कुरीति टार, परसुख दुख कारण शक्ति धार।
फनि फुनि नव नव नित जन्मरीत, विन सर्वलोक थापी पुनीत।२।

जय लीला रास विलास नाश, स्वाभाविक निजपद रमण वास।
शयनासन आदि क्रिया कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप।३।
विन कामदाह नहीं नार भोग, निरद्वंद निजानंद मगन योग।
वरमाल आदि शृंगार रूप, विन शुद्ध निरंजन पद अनूप॥ ४॥
जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश पुंज चिद्रूप सार।
उपकरण हरण दव सलिलधार, स्वै शक्ति प्रभाव उदय अपार॥ ५॥
नभ सीम नहीं अरु होत होउ, नहीं काल अन्त लहो अन्त सोउ।
पर तुम गुण रास अनंत भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग।६।
आनंद जलधि धारा प्रवाह, विज्ञानसुरी सुखद्रह अथाह।
निज शांति सुधारस परम खान, समभाव वीज उत्पत्ति थान।७।
निज आत्मलीन विकल्प विनाश, शुद्धोपयोग परिणति प्रकाश।
द्रग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव।८।
निज गुणपर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम।

अव्यय अबाध पद स्वयं सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध । ९ ।
एकाग्ररूप चिंता निरोध, जे ध्यावें पावें स्वयं बोध ।
गुण मात्र संत अनुराग रूप, यह भाव देहु तुम पद अनूप । १० ।

घत्ता--दोहा—सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मन्त्रराज है सार ।
सर्व सिद्ध दातार है, सर्व विघन हर्तार । ११ ।

ॐ ह्रीं अर्हं षट्पंचाशदधिकद्विशतलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घं नि०।

तीन लोक चूडामणी, सदा रहो जयवन्त ।
विघन हरण मंगल करण, तुम्हें नमें नित संत । १२ ।

इत्याशीर्वादः ।

इति षष्ठी पूजा सम्पूर्ण ।

अथ सप्तमी पूजा प्रारम्भ।

छप्पय छन्द—ऊरध अधो सरेफ बिंदु हंकार विराजं,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे।
वर्गन पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधि धर,
अग्रभागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर।
फुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम सुर, ध्यावत ह्री अरि नागको।
ह्वै केहरि सम, पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् द्वादशाधिकपंचशत ५१२ गुणसंयुक्त विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् (आह्वाननम्) अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं) अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधीकरणं)

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग।
सिद्धचक्र सो थाप हूं, मिटै उपद्रव योग ॥ २ ॥

अथाष्टकं ।

चाल-बारामासा छन्द ।

सुरमणि कुम्भ क्षीरभर धारत, मुनि मन शुद्ध प्रवाह वहावहीं ।
हम दोऊ विधि लाइक नाहीं, कृपा करहु लहि भवतट भावहिं ॥
शक्ति माफ़ सामान्य नीरसों, पूजूं हूं हे शिवतियके स्वामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ॥ १

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण सहित श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं जन्मजरारोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

नतु कोऊ चन्दन नतु कोऊ केसरि, भेट किये भवपार भयो है ।
केवल आप कृपा द्रग हीसों, यह अथाह दधि पार लयो है ॥
रीति सनातन भक्तिनकी लख, चन्दनकी यह भेट धरामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तहेव अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं संसारतापविनाशनाय चंदनं नि० ॥२॥

इन्द्रादिक पद हू अनवस्थित, दीखत अन्तर रुचि न करें हैं।
केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपदकी चाह धरें हैं॥
तातें अक्षतसों अनुरागी, हूं सो तुम पद पूज करामी।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक नाम उचारत हूं सुखधामी ॥३

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण संयुक्ताय श्रीसमत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तेव अवगाहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०।

पुष्प बाण हीसो मन्मथ जग, विजई जगमें नाम धरावे।
देखहु अद्भुत रीति भक्तकी, तिस ही भेट धर काम हनावे॥
शरणागतिकी चूक न देखी, तातें पूज्य भए शिरनामी॥
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ॥४

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण संयुक्ताय श्री समत्तणाणदंसण वीर्य सुहमत्तेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वाबाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि०।

हनन असाता पीर नहीं यह, भीर परे चरु भेटन लायो।
भक्त अभिमान मेंट हो स्वामी, यह भव कारण भाव सतायो॥

स्व उद्यम करि करम आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ।५।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुण संयुक्ताय श्रीसमचणाणदंसण वीर्य सुहम-त्व अवगाहन अगुरुलघुअव्याबाधं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी ।
तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी ॥
मोह अन्ध विनसो निज कारण, दीपनसों अर्चूं अभिरामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ।६।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसमचणाण दंसण वीर्य सुहमत्व अवगाहनं अगुरुलघुअव्याबाधं मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ।

धूप नहीं उपरैं प्रजरैं मणि, हम धरैं तुम पदपर वारूं ।
बारम्बार आरती जोरि करि, बार बार निज शीश न हारूं ॥
पुष्ट धार ममतन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ।७।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसम्यक्त्वणाणदंसण वीर्यं सुहम-त्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वावाहं अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

तुम हो वीतराग निज पूजन, वन्दन थुति परवाह नहीं है ।
अरु अपने समभाव चहै कछु, पूजा फलकी चाह नहीं है ॥
तौभी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामी ।
द्वादश अधिक पंचशत संख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी ॥८

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसम्यक्त्वणाण दंसण वीर्यं सुहमत्तहेव अवगहणं अगुरुलघुमव्वावाहं मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

तुमसे स्वामीके पद सेवत, यहविधि दुष्ट रंक कहा कर है ।
ज्यों मयूरध्वनि सुनि अहि निज विल, विलय जाय छिन विलम न धर है ।
तातें तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुं मुदामी ।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ५१२ गुणसंयुक्ताय श्रीसम्मत्तणाणदंसण वीर्य सुहम-
पहेय अवग्गहणं अगुरुलघुमव्वावाहं सर्वगुणप्राप्तये अर्घं नि० ।

गीता छन्द ।

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरु प्रचुर स्वादसु विधि घनी।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।
ते कर्म वर्न नशाय युगपति, ज्ञान निर्मल रूप हैं॥
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अछेद शिव कमलापती॥
मुनि ध्येय सेय अमेय चाहूं गुण-गेह द्यो हम शुभ मती॥

ॐ ह्रीं अह सिद्धचक्राधिपतये नमः सम्मत्तणाणादि अष्टगुणार्णं पूर्णपदप्राप्तये महार्घं ।

पांचसैबारह गुणसहित नाम अर्घ

अथ नामावलि प्रत्येक अर्घ

अर्द्ध छन्द जोगीरासा।

लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकाशी।
भव्यन मन तम मोह विनाशक, वन्दूं शिव थल वासी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अरहंताय नमः अर्घ।

सुरनर मुनिमन कुमुदन मोदन, पूरण चन्द्र समाना।
हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, वन्दूं श्री भगवाना ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नमः अर्घ।

केवल दर्श ज्ञान किरणावलि, मंडित तिहुं जग चन्दा।
मिथ्या तप हर जल आदिक करि, वन्दूं पद अरविन्दा ॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नमः अर्घ।

घाति कर्म रिपु जारि छारकर, स्वे चतुष्ट पद पायो।

निज स्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं अर्हच्चिद्रूपगुणाय नमः अर्घं ।

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल भान उगायो ।
भव्यनको प्रतिबोध उधारे, वहुर मुक्ति पद पायो ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अर्हन्ज्ञानाय नमः अर्घं ।

धर्म अधर्म तास फल दोनों, देखो जिम कर रेखा ।
वतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिनमें देखा ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनाय नमः अर्घं ।

मोह महा द्रढ बंध उघारो, करभिसतंतु समाना ।
अतुल बली अरहंत कहायो, पाय नमूं शिवथाना ॥ ७ ॥
ओं ह्रीं अर्हद्वीर्याय नमः अर्घं ।

युगपति लोकालोक विलोकन, है अनन्त द्रगधारी ।
गुतरूप शिवमग दरसायो, तिनपद धोक हमारी ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनगुणाय नमः अर्घं ।

घटपटादि सब परकाशत जद, हो रवि किरण पसारा।
तैसो ज्ञान भान अरहंतको, ज्ञेय अनंत उघारा ॥ ९ ॥
ओं ह्रीं अर्हज्ज्ञानगुणाय नमः अर्घं।

आसन शयन पान भोजन बिन, दीप्त देह अरहंता।
ध्यान बान कर तान हान विधि, भए सिद्ध भगवंता ॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यगुणाय नमः अर्घं।

सप्त तत्त्व षट् द्रव्य भेद सब, जानत संशय खोई।
ताकरि भव्य जीव संबोधे, नमूं भये सिद्ध सोई ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सम्यक्त्वगुणाय नमः अर्घं।

ध्यान सलिलसों धोय लोभ मल, शुद्ध निजातम कीनो।
परम शौच अरहंत स्वरूपी, पाय नमूं शिव लीनो। १२।
ओं ह्रीं अरहंतशौचगुणाय नमः अर्घं।

नय प्रमाण श्रुतज्ञान प्रकारा, द्वादशांग जिनवानी।
प्रगटायो परतक्ष ज्ञानमें, नमूं भये शिव थानी ॥ १३ ।

ॐ ह्रीं अर्हद्‌... नमः अर्घं ।

मन इन्द्रिय बिन सकल चराचर, जगपद करि प्रगटायो ।
यह अरहन्त मतो कहलायो, वंदूं तिन शिव पायो ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हदभिनिबोधकाय नमः अर्घं ।

अनुभव गम नहीं होन दिव्यध्वनि, ताको भाग अनंता ।
जानो गणधर यह श्रुत अवधी, पाइ नमूं अरहन्ता ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हच्छ्रुतावधिगुणाय नमः अर्घं ।

मर्यादधि निधि वृद्धि प्रवाही, केवल सागर मांही ।
एक भयो अरहन्त अवधि यह, मुक्त भए नमि ताही ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हदवधिगुणाय नमः अर्घं ।

अति विशुद्ध मय विपुलमती लहि, हो पूर्वोक्त प्रकारा ।
गह अरहन्त पाय मनः पर्यय, नमूं भए भवपारा ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मनःपर्ययमायाय नमः अर्घं ।

मोह मलिनता जग जिय नाशे, केवलता गुण पावें ।

सर्व शुद्धता पाइ नमत हैं, हम अरहन्त कहावैं ॥ १८ ॥

ओं ह्रीं अरहन्तकेवलगुणाय नमः अर्घं ।

मोह जनित सो रूप विरूपी, तिस विन केवलरूपा ।
श्री अरहन्त रूप सर्वोत्तम, वन्दूं हो शिवभूपा ॥ १९ ॥

ओं ह्रीं अर्हत्केवलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

तास विरोधी कर्म जीति करि, केवल दरशन पायो ।
इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भावसहित शिर नायो ॥२०।

ओं ह्रीं अर्हत्केवलदर्शनाय नमः अर्घं ।

निर आवरण करण विन जाको, शरण हरण नहीं कोई ।
केवलज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलज्ञानाय नमः अर्घं ।

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो ।
केवल वल अरहन्त नमें हम, शिव थल वास करानो ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलवीर्याय नमः अर्घं ।

भव विधि अघन विघ्न निवारण, आरत विघ्न विडारी ।
मंगलमय अर्हंत सर्वदा, नमूं मुक्ति पदधारी ॥ २३ ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय नमः अर्घं ।

नष्ट आदि मल विघन विदूरित, ज्ञायक मंगलकारी ।
यह अर्हंत दर्श पायो मैं, नमूं भये शिव धारी ॥ २४ ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलदर्शनाय नमः अर्घं ।

निजपर संशय आदि अंत बिन, निरावरण विकसानो ।
मंगलमय अरहंत ज्ञान है, वन्दूं शिव सुख थानो ॥ २५ ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलज्ञानाय नमः अर्घं ।

परकृत जरा आदि संकट बिन अतुल बली अर्हंता ।
नमूं सदा शिवमारगके संग, सुखसों केलि करंता ॥ २६ ॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलवीर्याय नमः अर्घं ।

पापरूप एकान्त पक्ष बिन, सर्व तत्त्व परकाशी ।

द्वादशांग अरहंत कहो मैं, नमूं भये शिववासी ॥ २७ ॥

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलद्वादशांगाय नमः अर्घं ।

बिन प्रतक्ष अनुमान सबाधित, सुमतिरूप परिणामा ।
मंगलमय अर्हतमती मैं, नमूं देउ शिवधामा ॥ २८ ॥

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलअभिनिबोधकाय नमः अर्घं ।

नय विकलप श्रुतांग पक्षके, त्यागी हैं भगवन्ता ।
ज्ञाता द्रष्टा वीतराग, विख्यात नमूं अरहन्ता ॥२९॥

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलश्रुतात्मकजिनाय नमः अर्घं ।

मंगलमय सर्वावधि जाकरि, पावै पद अरहन्ता ।
वन्दूं ज्ञान प्रकाश नाश भव, शिव थल वास करंता ॥ ३०॥

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलावधये नमः अर्घं ।

वर्धमान मनपर्यय ज्ञान करि, केवल भानु उगायो ।
भव्यनि प्रति शुभ मार्ग बतायो, नमूं सिद्ध पद पायो ॥ ३१ ॥

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलमनःपर्ययाय नमः अर्घं ।

जा बिन और अज्ञान सकल, जग कारण बंध प्रधाना ।
नमूं पाइ अरहन्त मुक्ति पद, मंगल केवलज्ञाना ॥ ३२ ॥
ओं ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलज्ञानाय नमः अर्घं ।

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमई राजें ।
केवलरूप नमूं सब अघहर, श्री अरहन्त विराजें ॥ ३३ ॥
ओं ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

चक्षु आदि सब भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया ।
श्री अरहन्त नमूं शिववासी, इह जग पाप नशाया ॥३४॥
ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलदर्शनाय नमः अर्घं ।

जग मंगल सब विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता ।
मंगलमय सब मंगलदायक, नमूं कियो जग अन्ता ॥३५॥
ओं ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलाय नमः अर्घं ।

केवलरूप महामंगलमय, परम शत्रु छयकारा ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो, नमूं पाय भवपारा ॥ ३६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलरूपाय नमः अर्घं ।

शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानन्द विराजैं ।
सो अरहन्त परम मंगलमय, नमूं शिवालय राजैं ॥ ३७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्माय नमः अर्घं ।

सब विभावमय विघन नाशकर, मंगल धर्म स्वरूपा ।
सो अरहन्त भये परमातम, नमूं त्रियोग निरूपा ॥ ३८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ।

सर्व जगत सम्बन्ध विघन नहीं, उत्तम मंगल सोई ।
सो अरहन्त भये शिववासी, पूजत शिवसुख होई ॥ ३९ ॥

ओं ह्रीं अर्हन्मंगलउत्तमाय नमः अर्घं ।

लोकातीत त्रिलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी ।
लोकशिखर सुखरूप विराजैं, तिनपद धोक हमारी ॥ ४० ॥

तिनको त्याग भये [illegible] बन्द, काटो बन्ध [illegible] ॥ ४१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणाय नमः अर्घं ।

मिथ्या मतिकर सहित ज्ञान, अज्ञान जगतमें सारो ।
ता विन ज्ञान अरहन्त कहाये, लोकोत्तम पूज हमारो ॥४२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं ।

क्षायक दरशन है अरहन्ता, और लोकमें नाहीं ।
सो अरहन्त भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई ॥ ४३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं ।

कर्मवलीने सब जग बांध्यो, ताहि हनो अरहन्ता ।
यह अरहन्त वीर्य लोकोत्तम, पायो सिद्ध अनन्ता ॥ ४४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं ।

अक्षयतीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला ।
सो अरहंत नमूं शिवनाइक, पाऊँ भवदधि कूला ॥ ४५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअभिनिबोधकाय नमः अर्घं ।

परमावधि ज्ञानसो छानी, केवलज्ञान प्रकाशी।
पहै अवधि अरहन्त नमूं मैं, संशय तमको नाशी ॥ ४६ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकोत्तमअवधिज्ञानाय नमः अर्घ।

जो अरहन्त धरै मनपर्यय, सो केवलके माहीं।
साक्षात् शिवरूप नमो मैं, अन्य लोकमें नाहीं ॥ ४७ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकोत्तममनःपर्ययज्ञानाय नमः अर्घं।

तीन लोकमें सार श्री अरहंत स्वयंभू ज्ञानी।
नमूं सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी ॥ ४८ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नमः अर्घं।

सर्वोत्तम तिहुं लोक प्रकाशित, केवलज्ञान स्वरूपी।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ४९ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नमः अर्घं।

ज्ञान तरंग अभंग वहै लोकोत्तम धार अनूपी।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकाऽसाधारणगुणाय नमः अर्घं ।

असाधारण गुण पर्यय सहित सब केवलज्ञान सरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोककेवलज्ञानाय नमः अर्घं ।

जगजिय सब अशुद्ध कहो, एक केवल शुद्ध सरूपी ।
सो अरहन्त नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोककेवलाय नमः अर्घं ।

त्रिविध कुरूप सबै जगवासी, केवल स्वयं सरूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोककेवलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

हीनाधिक धिक धिक जग प्राणी, धन्य एक प्रभु रूपी ।
सो अरहंत नमूं शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी ॥ ५४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकप्रभावाय नमः अर्घं ।

दोहा—संसारिनके भाव सब, बन्ध हेतु वरणाय ।

सिद्धचक्र विधान १९९

मुक्तिरूप अरहंतके, भाव नमूं सुखदाय ॥ ५५ ॥
ओं ह्रीं अर्हं लोकोत्तमभावाय नमः अर्घं ।
कबहुं न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश ।
मुक्तिरूप प्रणमूं सदा, नाशे विघन विशेष ॥ ५६ ॥
ओं ह्रीं अर्हं लोकोत्तमस्थिरभावाय नमः अर्घं ।
जो सेवत वेवत स्वसुख, सो सर्वोत्तम देव ।
शिववासी नाशी त्रिजग-फांसी नमहूं एव ॥ ५७ ॥
ओं ह्रीं अर्हं शरणाय नमः अर्घं ।
जिन ध्यायो निज पाइयो, निश्चय सो सुखरास ।
शरण स्वरूपी जिन नमूं, करें सदा शिववास ॥ ५८ ॥
ओं ह्रीं अर्हं शरणरूपाय नमः अर्घं ।
पद्धड़ी छन्द ।
स्वाभाविक गुण अरहंत गाय, जासों पूरण शिवसुख उहाय ।
[illegible] जिन जाँच नाम आनंद पाय ॥५९॥

ओं ह्रीं अर्हद् गणशरणाय नमः अर्घं ।

विन केवलज्ञान न मुक्ति होय. पायो है श्री अरहन्त जोय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।६०।

ओं ह्रीं अर्हं ज्ञानशरणाय नमः अर्घं ।

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, भाख्यो है शिव मारग अभेव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।६१।

ओं ह्रीं अर्हं दर्शनशरणाय नमः अर्घं ।

संसार विषम बन्धन उछेद, अरहन्त वीर्य पायो अखेद ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।६२।

ओं ह्रीं अर्हं वीर्यशरणाय नमः अर्घं ।

सब कुमति विगत मत जिन प्रतीत, हो जिसते शिवसुख दे अभीत ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।६३

ओं ह्रीं अर्हं द्वादशांगशरणाय नमः अर्घं ।

...आदिक साधित विज्ञान, अरहन्त मती प्रत्यक्ष जान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६४।
ॐ ह्रीं अर्हं दभिनिबोधकशरणाय नमः अर्घं।
जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय॥६५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतशरणाय नमः अर्घं।
प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधि शिव-सुख कराय।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय॥६६।
ॐ ह्रीं अर्हं दवधिबोधशरणाय नमः अर्घं।
मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिव वास देत।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय।६७।
ॐ ह्रीं अर्हं न्मनःपर्ययशरणाय नमः अर्घं।
आवर्ण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन ...

हम शरण गही मन वचन काय, नित नमें मन्त आनन्द पाय।६८।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानाय नमः अर्घ्यं।

मुनि केवलज्ञानी निज अराध, पावें शिव-सुख निरुपम अबाध।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमें सन्त आनन्द पाय।६९।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलशरणाय नमः अर्घ्यं।

शिव-सुखदायक निज आतम ज्ञान, सो केवल पावे जिन महान।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमें सन्त आनन्द पाय।७०।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलधर्मशरणाय नमः अर्घ्यं।

यह केवल गुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाव।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमें सन्त आनन्द पाय।७१।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं।

संसार रूप सब विघन टार, मंगल गुण श्री जिन मुक्तिकार।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमें सन्त आनन्द पाय।७२।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलगुणशरणाय नमः अर्घ्यं ।

क्षय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता विन जिन ज्ञानी शिव सुरूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।७३।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलज्ञानशरणाय नमः अर्घ्यं ।

अरहन्त दर्श मंगल स्वरूप, तामें दरशै शिव-सुख अनूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।७४।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलदर्शनशरणाय नमः अर्घ्यं ।

अरहन्त बोध है मंगलीक, शिव मारग प्रति वरते अलीक ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।७५।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलबोधशरणाय नमः अर्घ्यं ।

निज ज्ञानानन्द प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं सन्त आनन्द पाय ।७६।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलकेवलशरणाय नमः अर्घ्यं ।

इनहीसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं पद गुण पाय नमन यातैं करा ॥८९॥
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणपुष्टाय नमः अर्घ्यं।

क्षयोपशम सम्यापित ज्ञान कलाहरी,
पूरण ज्ञायक स्वयंबुद्धि श्रीजिनवरी।
इनहीसों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं पद गुण पाय नमन यातैं करा ॥९०॥
ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] नमः अर्घ्यं।

जनमत ही दश अतिशय शासनमें कही,
स्वयं शक्ति भगवान आप निजको लही।
इनहीसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं पद गुण पाय नमन यातैं करा ॥९१॥
ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] नमः अर्घ्यं।

इनहीसों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,

हम हूं यह गुण पाय नमन यातें करा ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं दन्तगुणसमुत्पन्नाय नमः अर्घं ।

क्षयोपशम सम्बाधित ज्ञान कल्याहरी,

पूरण ज्ञायक स्वयंबुद्ध श्रीजिनवरी।

इनहीसों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,

हम हूं यह गुण पाय नमन यातें करा ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं विज्ञानस्वयंभवे नमः अर्घं

जनमत ही दश अतिशय शासनमें कही,

स्वयं शक्ति भगवान आप निरखो सही।

इनहीसों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,

हम हूं यह गुण पाय नमन यातें करा ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं दशअतिशयसम्पन्नाय नमः अर्घं ।

दश अतिशय के घांति कर्मको छय करैं,
महा विभवको पाय मोक्ष-नारी वरैं ।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥ १२ ॥
ओं ह्रीं अर्हं दशअतिशयघातिक्षयाय नमः अर्घ ।
केवल विभव उपाय प्रभू जिनपद लहो,
चौदै अतिशय देवन करि सेवन कियो ।
इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥ १३ ॥
ओं ह्रीं अर्हं चतुर्दशअतिशयदेवकृताय नमः अर्घ ।
चौतीस अतिशय जे पुराण वरनी महा,
मुक्ति समाज अनूपम श्रीगुरुने कहा ।

इनहींसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥८९॥
ॐ ह्रीं अर्हं दनन्तगुणप्रगुष्टाय नमः अर्घं ।

क्षयोपशम मय्याधिन ज्ञान कल्याहरी,
पूरण ज्ञायक स्वयंबुद्ध श्रीजिनवरी ।
इनहीसों हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥९०॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वित्ज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घं

जनमत ही दश अतिशय शासनमें रही,
स्वयं शक्ति भगवान आप निनको लही।
इनहीसो हैं पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥९१॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्वाभाविकातिशयाय नमः अर्घं ।

उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया।९८

ओं ह्रीं अर्हं न्द्अनन्तगुणाय नमः अर्घं।

आतम शक्तिजाम करि छीनी, ताम नाश प्रभुनाईं लीनी।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया।९९।

ओं ह्रीं अर्हं न्परमात्मने नमः अर्घं।

निज गुण निज ही माहि समाये, गणधरादि वरनन करि नाये।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया॥

ओं ह्रीं अर्हद्गुणस्वरूपाय नमः अर्घं॥ १००।

दोधक छन्द।

जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।

ओं ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥१०१॥

इनहीसों है पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूं यह गुण पाय नमन यातैं करा ॥ १४ ॥
ओं ह्रीं अर्ह चतुर्स्त्रिशदतिशयविराजमानाय नमः अर्घ।

त्राटक छन्द।

लोकालोक आतम सम जानो, ज्ञानानंद सुगुण पहिचानो।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया।१५
ओं ह्रीं अर्हं ज्ञानानन्दगुणाय नमः अर्घं।

समरस सुथिर भाव उदारा, युगपति लोकालोक निहारा।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया ॥१६।
ओं ह्रीं अर्ह स्वध्यानान-तध्येयाय नमः अर्घं।

इक इक गुणका भाव अनन्ता, पर्यायरूप सो है अरहन्ता।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया १७
ओं ह्रीं अर्हं दर्शनगुणाय नमः अर्घं।

...गुन सब लख चौरासी, पूरण चारित भेद प्रकाशी।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया।९८
ओं ह्रीं अर्हन्पदअनन्तगुणाय नमः अर्घं।

आतम शक्तिजाम करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया।९९।
ओं ह्रीं अर्हन्परमात्मने नमः अर्घं।

निज गुण निज ही माहि समाये, गणधरादि वरनन करि नाये।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया, भाव सहित हम शीश नवाया॥
ओं ह्रीं अर्हद्गुणस्वरूपाय नमः अर्घं॥ १००॥

दोधक छन्द।

जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई।
लोक शिरोमणि है शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।
ओं ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घं॥१०१॥

सरव विरूप विरुद्ध संरूपी, स्वातंम रूप विशुद्ध अनूपी।
लोक शिरोमणि हे शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।

ओं ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं ॥१०२॥

पराश्रित सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अबाध अपारा।
लोक शिरोमणि हे शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।१०३।

ॐ ह्रीं सिद्धगुणेभ्यो नमः अर्घं।

आकुलता सब ही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी।
लोक शिरोमणि हे शिव स्वामी, भाव सहित तुमको प्रणमामी।१०४

ओंह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नमः अर्घं।

जीव अजीव लखे अविचारा, हो नहीं अन्तर एक प्रकारा।
लोक शिरोमणि हे शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी।१०५।

ओं ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नमः अर्घं।

अन्तर बाहिर भेद उघारी, दर्शं विशद आप सम्यकारी।

लोक शिरोमणि हे शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी ।१०६।

ओं ह्रीं सिद्धशुद्धसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घं ।

एक अणुमल कर्म लजावे, सोय निरंजनता नहि पावे ।
लोक शिरोमणि हे शिवस्वामी, भावसहित तुमको प्रणमामी । १०७।

ॐ ह्रीं सिद्धनिरंजनेभ्यो नमः अर्घं ।

अर्धरोला छन्द—चारों गतिको भ्रमण नाशकर थिरता पाई ।
निज स्वरूपमें लीन, अन्य सो मोह नशाई ॥ १०८॥

ओं ह्रीं सिद्धअचलपदप्राप्ताय नमः अर्घं ।

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो ।
संख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो ॥ १०९ ॥

ओं ह्रीं संख्यातीतसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

असंख्यात मरजाद एक ताहू सो बीते ।
विजय लक्ष्मीनाथ, महाबल सब विधि जीते ॥ ११० ॥

ओं ह्रीं असंख्यातसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

काल आदि मर्याद आदि, सो इह विधि जारी ।
भए अनन्त दिगम्बर साधु जु, शिवपद धारी ॥ १११ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

पुष्करार्द्ध सागर लों, जो जल थान बखानो ।
देव सहाइ उपाइ, ऊर्ध्व गति गमन करानो ॥ ११२ ॥

ओं ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

वन गिर नगर गुफादि सर्व थलसों, शिव पाई ।
सिद्धक्षेत्र सब ठोर बखानत, श्री जिनराई ॥ ११३ ॥

ओं ह्रीं स्थलसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

नभहीमें जिन शुक्लध्यान, बल कर्म नाश किय ।
आउ पूर्ण वश ततछिन, ही शिवधाम जाय लिय ॥ ११४ ॥

गर्भ कल्याणक आदि युत, तीर्थंकर सुख धाम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परिणाम है ॥ ११९ ॥
ओं ह्रीं तीर्थंकरसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

तीर्थंकरके समयमें, केवली जिन अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें, तिनके पद परिणाम है ॥ १२० ॥
ओं ह्रीं तीर्थंकरअनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

पंच शतक पच्चीस फुनि, धनुषकाय अभिराम है।
सिद्ध भये तिहुं योगतें तिनके पद परिणाम है ॥ १२१ ॥
ओं ह्रीं उत्कृष्टअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

आदि अन्त अन्तर विषैं, मध्यवगाहन नाम है।
सिद्ध भये तिहुं जोगतें, तिनके पद परिणाम है ॥ १२२ ॥
ओं ह्रीं मध्यमअवगाहनसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

केवली तन तीन अर्ध, हस्त प्रमाण कहाय है।

समय एक दो तीन धाराप्रवाही, कियो कर्म छय अंतराय होय नाहीं।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥
ओं ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥१३६॥

हुये हो सु होगे सुहो है अचारी, त्रिकालं सदा मोक्ष पंथा विहारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥
ओं ह्रीं त्रिकालसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥१३७॥

तिहुं लोकके शुद्ध सम्यक्त धारी, महा भार संजम धरे हैं अचारी।
भये सिद्ध राजा निजानंद साजा, यही मोक्ष जाना नमः सिद्ध काजा॥
ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ॥१३८॥

मरहठा छन्द—तिहुं लोक निहारा; सब दुखकारा, पापरूप संसार।
ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भये सिद्ध अधिकार॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार॥
मैं नमूं त्रिकालज्ञ को अघ [illegible]

हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥१४२॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलदर्शनेभ्यो नमः अर्घं ।

निजबंधन डोरी छिनमें तोरी, स्वयं शक्ति परकाश ।
निरभय निरमोही परम अछोही, अन्तराय विधि नाश ॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥ १४३॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलवीर्येभ्यो नमः अर्घं ।

जाके प्रसादकर सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय ।
रुपराग निवारा सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय ॥
हे जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥ १४४॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलसम्यक्त्वेभ्यो नमः अर्घं ।

मैं नमूं त्रिकाल्या हो अघ काल्या, नयहर शशि उनहार ॥१४७॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलअगुरुलघुगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

पुद्गल कृत सारी विविध प्रकारी, है स्वभाव अधिकार।
सब भांति निवारी निज सुखकारी, पायो पद अविकार ॥
हैं जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूं त्रिकाल्या हो अघ काल्या, नयहर शशि उनहार ॥ १४८॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलअव्याबाधितेभ्यो नमः अर्घं ।

अवगाह प्रणामी ज्ञानागामी, दर्शन वीर्य अपार।
सूक्षम अवकाशी अज अविनाशी, अगुरुलघु सुखकार ॥
हैं जगत्रय नायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार।
मैं नमूं त्रिकाल्या हो अघ काल्या, नयहर शशि उनहार ॥ १४९॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

[illegible] अडिल्ल।

निज गुणपरधान सम्यकज्ञान, आदि अन्त ज्ञानकार ॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघटाला, तपहर शशि उनहार ॥ १५० ॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलअष्टस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं ।

मंगल अरहन्तं अष्टम भन्तं, सिद्ध अष्ट गुण भास ।
ये ही विलसावे, अन्य न पावें, असाधारण परकाश ।
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।
मैं नमूं त्रिकाला हो अघ-काला, तपहर शशि उनहार ॥ १५१ ॥
ओं ह्रीं सिद्धमंगलअष्टप्रकाशकेभ्यो नमः अर्घं ।

निर आकुलताई सुख अधिकाई, परम शुद्ध परिणाम ।
संसार निवारण बन्ध विडारन, यही धर्म सुखधाम ॥
हे जगत्रयनायक मंगलदायक, मंगलमय सुखकार ।

मैं नमूं त्रिकाला हो अघ काला, तपहर शशि उनहार ॥१५२॥

ओं ह्रीं सिद्धमंगलधर्मेभ्यो नमः अर्घं ।

चूलिका छन्द—तीन काल तिहुं लोकमें, तुम गुण और न माहिं लखाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥ १५३ ॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

लोकत्रय शिर छत्र मणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो सिद्धराज, सुखसाज बखाने ॥ १५४॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं।

अमल अनूप तेजघन, निरावरण निजरूप प्रमाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५५॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमस्वरूपाय नमः अर्घं ।

*लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५६॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घं ।

सकल दर्शनावरण बिन, पूरन-दरसन जोत उगाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५७॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घं ।

अतुल अतीन्द्रिय वीरजकर, भोगे नित शिवनारि अघाने ।
लोकोत्तम परसिद्ध हो, सिद्धराज सुख साज बखाने ॥१५८॥

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घं ।

त्रोटक छन्द ।

बिन कारण ही सबके मितु हो, सर्वोत्तम लोकविषें हितु हो ।
इनही गुणसें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१५९।

ओं ह्रीं सिद्धलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घं ।

---

* 'लोकत्रयशिर छत्रमणि, लोकत्रय वर पूज्य प्रधाने' ऐसा पाठ 'क' प्रतिमें है ।

तुम रूप अनूपम ध्यान किये, निज रूप दिखावत स्वच्छ हिये।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१६०।
ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपशरणाय नमः अर्घं।

निरभेद अछेद विकाशित हैं, सब लोक अलोक विभासित हैं।
इनही गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१६१।
ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नमः अर्घं।

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वंद अबंध अभय अजई।
इनही गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥१६२॥
ओं ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नमः अर्घं।

हित कारण तारण तरण कहे, अप्रमाद प्रसाद प्रयास न है।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं॥ १६३॥
ओं ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नमः अर्घं।

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम-तत्त्व प्रबोध लहा।

इनहीं गुणमें मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं॥ १६४॥
ओं ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नमः अर्घं ।

जिनको पूर्वापर अन्त नहीं, नित धार प्रवाह बहै अति ही।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६५।
ओं ह्रीं सिद्धअनन्तशरणाय नमः अर्घं ।

कबहूं नहीं अन्त समावत है, सु अनन्त अनन्त कहावत है।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६६।
ओं ह्रीं सिद्धअनन्तानन्तशरणाय नमः अर्घं ।

तिहुं काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषें थिर भाव सदा
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६७।
ओं ह्रीं सिद्धत्रिकालशरणाय नमः अर्घं ।

तिहुं लोक शिरोमणि पूजि महा, तिहुं लोक प्रकाशक तेज कहा
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६८।
ओं ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ।

गिनती परमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करे।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१६९।

ओं ह्रीं सिद्धअसंख्यातलोकशरणाय नमः अर्घं।

पूर्वापर एकहि रूप लसे, नित लोक सिंहासनवास वसै।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७०।

ओं ह्रीं सिद्धध्रौव्यगुणशरणाय नमः अर्घं।

जगवास परजाय विनाश कियो, अवनीश्वर रूप विशुद्ध भयो।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७१।

ओं ह्रीं सिद्धउत्पादगुणशरणाय नमः अर्घं।

परद्रव्य थकी रुप राग नहीं, निज भाव विना कहुं लाग नहीं।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं।१७२।

ओं ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नमः अर्घं।

विन कर्म कलंक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत है।

इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१७३।

ओं ह्रीं सिद्धप्रत्यक्षगुणशरणाय नमः अर्घं ।

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहां, भय राग क्लेश प्रवेश न ह्यां।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१७४।

ओं ह्रीं सिद्धस्वस्थितगुणशरणाय नमः अर्घं ।

निज रूप विषें नित मगन रहैं, परयोग वियोग न दाह लहैं ।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।१७५।

ओं ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नमः अर्घं ।

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दुऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ ।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥१७६॥

ओं ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घं ।

परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोधन गुप्त कहा ।
इनहीं गुणमें मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ॥ १७७॥

ॐ ह्रीं सिद्धअव्यक्तगुणशरणाय नमः अर्घं।

मालिनी छन्द–निज गुणवर स्वामी शुद्ध संबोध नामी,
परगुण नहिं लेशा एक ही भाव शेषा।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्ख पूरं॥१७८॥

ॐ ह्रीं सिद्धगुणागुणस्वरूपाय नमः अर्घं।

सब विधि मल जारा वन्ध संसार टारा,
जग जिय हितकारी उच्चता पाय सारी।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्ख पूरं।१७९।

ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घं।

पर-परणतिखण्डं भेदबाधाविहण्डं,
शिवसदननिवासी नित्य स्वानंदगामी।

विधि वश सब प्रानी हीन आधिक्य ठानी,
तिस कर निरमूला साम्य रूपा धरूला ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८३॥
ॐ ह्रीं सिद्धअछेदरूपाय नमः अर्घं ।

जबलग परजाया भेद नाना धराया,
इक शिवपद मांही भेद आभास नांहीं ।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्ख पूरं ॥१८४॥
ॐ ह्रीं सिद्धअभेदगुणाय नमः अर्घं ।

अनुपम गुणधारी लोक संभाव टारी,
सुरनर मुनि ध्यावैं सो नहीं पार पावैं ।
मन वच तन लाईं पूजहौं भक्तिभाई,

... भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८५॥
ओं ह्रीं सिद्धअनुपमगुणाय नमः अर्घं।

जिस अनुभव सरसैं धार आनन्द बरसैं,
अनुपम रस सोई स्वाद जासो न कोई।
मन वच तन लाई पूज हों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८६॥
ओं ह्रीं सिद्धअमृततत्त्वाय नमः अर्घं।

सब श्रुत विस्तारा जास माहीं उजारा,
यही निजपद जानो आत्मसंभाव मानो।
मन वच तन लाई पूजहों भक्तिभाई,
भवि भव भय चूरं शाश्वतं सुक्खपूरं ॥१८७॥
ओं ह्रीं सिद्धश्रुतप्राप्ताय नमः अर्घं।

सुभाव निजातम अन्तर लीन, विभाव परातम आपद हीन।
भजों मन आनन्दसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ ॥१९६॥
ओं ह्रीं सिद्धअन्तराकाराय नमः अर्घं।

जहां लग द्वेष प्रवेश न होय, तहां लग सार रसायन होय।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरो चरणांवुजको निज माथ ॥१९७॥
ओं ह्रीं सिद्धसाररसाय नमः अर्घ।

जिसो निरलेप हुए विपतुंव्य, तिसो जग आग्र निराश्रय लुंव्य।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ ॥१९८॥
ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नमः अर्घं।

तिहूं जग शीस विराजित नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य।
भजो मन आनंदसों शिवनाथ, धरों चरणांवुजको निज माथ। १९९।
ओं ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नमः अर्घं।

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद।

भेद अगोचर रूप महासुख संभयो ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०३ ॥
ओं ह्रीं सूरिस्वरूपगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

तत्त्व प्रतीत निजातम रूप अनुभव कला,
पायो सत्यानन्द कुमारग दलमला ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०४ ॥
ओं ह्रीं सूरिसम्यक्त्वगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

वस्तु अनंत धर्म प्रकाशक ज्ञान है,
एक पक्ष हट गृहित निपट असुहान है ।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है ॥ २०५ ॥

निज-स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं॥ २०८॥
ओं ह्रीं षट्त्रिंशद्गुणेभ्यो नमः अर्घं।

पंचाचार आचार्य साध शिवपद लियो।
वास्तवमें ये गुण निजमें परगट कियो॥
निज-स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं॥२०९॥
ॐ ह्रीं पंचाचारगुणेभ्यो नमः अर्घं।

गुणसमुदाय सरूप द्रव्य आतम महा।
परसों भिन्न अभेद निजातम पद लहा॥
निज-स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं॥ २१०॥
ॐ ह्रीं द्रव्यगुणेभ्यो नमः अर्घं।
[illegible] सुखकार जू।

परम शुद्ध स्वसिद्ध भयो अनिवार जू ॥
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार हैं ।
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार हैं ॥ २११ ॥
ओं ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

छन्द चञ्चला (एक ह्रस्व एक दीर्घ)

आप सुक्खरूप हो सु, और सौख्यकार होत ।
ज्यूं घटादिको प्रकाश कार है सुदीप जोत ॥
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म, रूप जान ।
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१२ ॥
ओं ह्रीं सूरिमंगलेभ्यो नमः अर्घं ।

संस अंस भान वस्तु भावको प्रकाशमान ।
ज्ञान इन्द्रियाअनिन्द्रिया कहै उभय प्रमाण ॥
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान ।
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१३ ॥

ॐ ह्रीं पर्शिज्ञानमंगलेभ्यो नमः अर्घं ।

लोक उत्तमा सु वसु कर्मको प्रसंग टार,
शुद्ध बुद्ध रिद्ध पाय लोक वेदना निवार।
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१४ ॥

ॐ ह्रीं पर्शिलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

लोकभीतसो अतीत आदि अन्त एक रूप,
लोकमें प्रसिद्ध सर्व भावको अनूप भूप।
सूरि धर्मको प्रकाश सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१५ ॥

ॐ ह्रीं पर्शिज्ञानलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

वीर्यमें न अन्तराय, आप ही सुखाय धाय,
या अबाध धर्मको प्रकाशमें करे ...

सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्ष मान ॥ २१६॥
ओं ह्रीं सूरिदर्शनलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

मोह भारको निवार, शुद्ध चेतना सुधार,
येह वीर्यता अपार, लोकमें प्रशंसकार ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१७ ॥
ओं ह्रीं सूरिवीर्यलोकोत्तमेभ्यो नमः अर्घं ।

धर्म केवली महान, मोह अन्ध तेज भान,
सप्त तत्त्वको बखानि, मोक्ष-मार्गको निधान ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१८ ॥
ॐ ह्रीं सूरिकेवलधर्माय नमः अर्घं ।

शील आदि पूर भेद कर्मके कलाप छेद,

आत्म-शक्तिको प्रकाश, शुद्ध चेतना विलास ।
सूरि धर्मको प्रकाश, शुद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २१९ ॥
ओं ह्रीं सूरितपेभ्यो नमः अर्घं ।

लोक चाहकी न दाह, द्वेषको प्रवेश नाह,
शुद्ध चेतना प्रवाह, धृद्धता धरे अथाह ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥ २२० ॥
ओं ह्रीं सूरिपरमतपेभ्यो नमः अर्घं ।

मोहको न जोर जाय, घोर आपदा नसाय,
घोरतें तपो सु लोक शीश जाय मुक्ति पाय ।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध धर्म रूप जान,
मैं नमूं त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान ॥२२१ ॥
ओं ह्रीं सूरितपोघोरगुणेभ्यो नमः अर्घं ।

कामिनीमोहन छन्द मात्रा २० ।

वृन्दपर वृन्द गुण गहन नित हो जहाँ, शाश्वतं पूर्णता सातिशय गुण तहां ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥२२२॥

ओं ह्रीं सूरिवीरगुणपराक्रमेभ्यो नमः अर्घं ।

एक सम-भाव सम और नहीं ऋद्धि है, सर्व ही रिद्ध जाके भये सिद्ध है ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ।२२३।

ॐ ह्रीं सूरिरिद्धिरूपिभ्यो नमः अर्घं ।

जोगके रोकसे कर्मका रोक हो, गुप्त साधन किये साध्य शिवलोक हो ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ।२२४।

ओं ह्रीं सूरिगुप्तिगेभ्यो नमः अर्घं ।

ध्यान बल कर्मके नाशको हेतु है, कर्मको नाश शिववास ही देतु है ।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये ॥२२५॥

ओं ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नमः अर्घं ।

आचारमें आत्म अधिकार है, बाह्य आधार आधेय सुविकार है।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२६

ओं ह्रीं सूरिचारित्रेभ्यो नमः अर्घं।

सूर सम आप पर तेज करनार है, सूर ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२७।

ओं ह्रीं सूरिपार्श्वेभ्यो नमः अर्घं।

बाह्य छत्तीस अन्तर अभेदात्मा, आप-थिर रूप है सूर परमात्मा।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२८।

ओं ह्रीं सूरिगुणधरणाय नमः अर्घं।

ज्ञान उपयोगमें स्वस्थिता शुद्धता, पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही शुद्धता।
सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर मोक्षधामी भये।२२९।

ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणधरणाय नमः अर्घं।

शरण तुम्ह हरण पर आप को शर्ण है, आपने कार्यमें आपही कर्ण है।

सूरि सिद्धांतके पारगामी भये, मैं नमूं जोरकर म......मय।२३०।

ॐ ह्रीं गुरिमशरणाय नमः अर्घं।

दोहा—ज्यों कञ्चन विन कालिमा, उज्ज्वल रूप सुहाय।

त्योंही कर्म-कलंक विन, निज स्वरूप दरशाय॥ २३१॥

ॐ ह्रीं गुरिस्वरूपशरणाय नमः अर्घं।

भेदाभेद सु नय थकी, एक ही धर्म विचार।

पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि करि उद्धार॥ २३२॥

ॐ ह्रीं गुरिभांस्वरूपशरणाय नमः अर्घं।

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन।

पूरण ज्ञान स्वरूप यह, पायो सूरि सुधीन॥ २३३॥

ॐ ह्रीं गुरिज्ञानस्वरूपशरणाय नमः अर्घं।

सुखाभास इन्द्रीजनित, त्यागी सूरि महन्त।

पूरण सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त॥ २३४।

ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नमः अर्घं ।

अनेकांत तत्त्वार्थके, ज्ञाता सूरि महान ।
निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण ॥ २३५ ॥

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घं ।

मोहादिक रिपु नाशिके, सूर्य महा सामर्थ ।
शिव भामिन भरतार नित, रमै साध निज अर्थ ॥ २३६ ॥

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घं ।

पद्धडी छन्द ।

जिन निज आतम निष्पाप कीन, त सन्त करैं पर पाप छीन ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर । २३७ ।

ॐ ह्रीं सूरिमंगलशरणाय नमः अर्घं ।

रत्नत्रै जीव सुभाव भाय, भवि पतित उधारण हो सहाय ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२३८।

ॐ ह्रीं सूरि[illegible] नमः अर्घं ।

तपकर ज्यों कञ्चन आग जोग, ह्वै शुद्ध निजातम पद मनोग।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२३९

ॐ ह्रीं सूरितपःशरणाय नमः अर्घं ।

एकाग्रह चिंताकर निरोध, पावें अबाध शिव आतम बोध।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४०

ओं ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नमः अर्घं ।

केवलज्ञानादि विभूति पाइ, ह्वै शुद्ध निरंजन पद सुभाइ ।
शिव मग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४१

ओं ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नमः अर्घं ।

तिहुं लोकनाथ तिहुं लोक माहिं, यासम दूजो सुखदाय नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर । २४२

ओं ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नमः अर्घं ।

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुं काल भव्य पावें निर्वाण ।

शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४३।

ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नमः अर्घं ।

मध अधो उर्द्ध तिहुं जगतमाहिं, सब जीवन सुखकर और नाहिं।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४४

ओं ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलाय नमः अर्घं ।

तिहुं लोकमाहिं सुखकार आप, सत्यारथ मंगल हरण पाप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४५

ओं ह्रीं सूरित्रिलोकमंगलशरणाय नमः अर्घं ।

उत्तम मंगल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिव सुख स्वरूप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४६।

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलोत्तमशरणाय नमः अर्घं ।

शरणागत दुखनाशन महान, तिहुं जगहित कारण सुखनिधान।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनंद पूर ।२४७।

ओं ह्रीं सूरित्रिजगन्मंगलशरणाय नमः अर्घं ।

[illegible] शरणागत प्रतिपालन अकूज्य ।
[illegible] हम शरण गही आनंद पूर ।२४८

[illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] संसारातीत विमोहमुक्त ।
[illegible] हम शरण गही आनंद पूर ।२४९

[illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] छन्द ।

[illegible] जगमें यह मंत्र महान कहो ।
[illegible] प्रणमुं शिववास करें सुखदा ॥२५०॥

[illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] भव वास हरण तुम नाम निधी ।
[illegible] प्रणमुं शिववास करे सुखदा ॥२५१॥

[illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] यह मंत्र सु धर्म कहावत है ।

ॐ ह्रीं सूरिमंत्रगुणानन्दाय नमः अर्घं ।

परमात्तम सिद्ध परियाय कही, अति शुद्ध प्रसिद्ध सुखात्म मही ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमूं शिववास करे सुखदा ॥२६२॥

ओं ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नमः अर्घं ।

माला छन्द—शशि सन्ताप कलाप निवारण ज्ञान कला सरसै,
मिथ्यातम हरि भवि आनन्द करि अनुभव भा दरसै ।
सूरि निज भेद कियो परसैं,
भये मुक्ति मैं नमूं शीश निज जोर युगल करसै ॥ २६३ ॥

ओं ह्रीं सूरिअमृतचन्द्राय नमः अर्घं ।

पूरण चन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान सुधा वरसै,
भवि चकोर चित चाहत नित मनु चरण जोति परसै ।
सूरि निज भेद कियो परसैं, भये मुक्ति मैं नमूं शीश० ॥२६४॥

ओं ह्रीं सूरिसुधाचन्द्रस्वरूपाय नमः अर्घं ।

देव सुधा सम गुण निवाहकर सकल चराचरसे।
सूरि निज भेद कियो परसे, भये मुक्ति मैं नमूं शीश० ॥२६५॥
ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नमः अर्घं।

जा धुनि सुनि संशय विनसे जिम ताप मेघ बरसे,
मनहुं कमल मकरंद वृन्द अलि पाय सुधासरसे।
सूरि निज भेद कियो परसें, भये मुक्ति में नमूं शीश ०। २६६।
ओं ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नमः अर्घं।

अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यों मयूर हरसे,
गाजत घन बाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसें।
सूरि निज भेद कियो परसैं, भये मुक्ति में नमूं शीश ०। २६७।
ओं ह्रीं सूरिअमृतध्वनिसुरूपाय नमः अर्घं।

चकोर छंद—जो अपने गुण वा पर्याय, वरै निज धर्म न होत विनास।

द्रव्य कहावत है सु अनंत, स्वभाव धरैं निज आतम विलास ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम भये सुख काम नमूं वसु जाम ।२६८।

ओं ह्रीं सूरिद्रव्याय नमः अर्घं ।

ज्यों शशि जोति रहै सियरा नित, ज्यों रवि जोति रहै नित ताप ।
ज्यों निज ज्ञानकला परिपूरण, राजत हो निज करण सु आप ।
सूरि कहाय स कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २६९

ओं ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नमः अर्घं ।

हो अविनाश अनूपम रूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान ।
वे न तजै मरजाद रहै, जिम सिन्धु कलोल सदा परमाण ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७०

ओं ह्रीं सूरिपर्यायाय नमः अर्घं ।

जे कछु द्रव्य तनो गुण है, सु समस्त मिलै गुण आतम माहीं ।
ताकरि द्रव्य कहावत है, अविनाश नमैं हम ताईं ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७१

ओं ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जा गुणमें गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर ।
सो गुण रूप सदा निवसे, हम पूजत हैं करके कर जोर ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७२

ॐ ह्रीं सूरिगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

जो परणाम धरें तिनसो, तिनमेंकरहै वरते तिस रूप ।
सो पर्याय उपाय विना नित, आप विराजत हैं सु अनूप ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।

सुआतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७३

ओं ह्रीं सूरिपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घं ।

हो नित ही परणाम समै प्रति, सो उत्पाद कहो भगवान ।
सो तुम भाव प्रकाश कियो, निज यह गुणका उत्पाद महान ॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७४

ॐ ह्रीं सूरिगुणोत्पादाय नमः अर्घं ।

ज्यों मृतिका निज रूप न छांडत, है घटमांहि अनेक प्रकार ।
सो तुम जीव स्वभाव धरौ नित, मुक्त भए जगवास निवार ॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७५

ॐ ह्रीं सूरिध्रुवगुणोत्पादाय नमः अर्घं ।

पे जगमें सब भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार ।

सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७६

ॐ ह्रीं सूरिन्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घं।

जे जगमें पट्द्रव्य कहे, तिनमें इक जीव सु ज्ञान स्वरूपा।
और सभी विनज्ञान कहे, तुम राजत हो नित ज्ञान अनूपा॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७७

ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वाय नमः अर्घं।

ज्ञान सुभाव धरो नित ही, नहीं छाड़त हो कबहूं निज वान।
येही विशेष भयो सब सों नहीं, औरनमें गुण ये परधान॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २७८

ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वगुणाय नमः अर्घं।

हो कर्तावि अनेक प्रकार, निजातममें परमैं अनिवार।
सो परको न लगाव रहो, निज ही निजकर्म रहो सुखकार॥
सूरि कहाय सुकर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम।२७९।

ॐ ह्रीं सूरिजीवविद्भ्यो नमः अर्घं।

द्रव्य तथापि विभाव दऊ, विधि कर्म प्रवाह वहै विन आदि।
ते सब एक भये थिररूप, निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद॥
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमूं वसु जाम २८०

ॐ ह्रीं सूरिआश्रयविनाशाय नमः अर्घं।

मोदक छन्द—बंध दऊ विधिके दुख कारण, नाश कियो भवपार उतारण
सूरि भये निज ज्ञान कलाधर, सिद्ध भये प्रणमूं मैं मनधर।२८१।

ओं ह्रीं सूरिबंधबन्धविनाशाय नमः अर्घं।

[illegible]

सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भय प्रणमू मन में धर।२८२।

ओं ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घं।

ज्यूं मणि दीप अडोल अनूप ही, संवर तत्त्व निराकुलरूप ही।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मन में धर।२८३।

ओं ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घं।

संवरके गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सुध्यावत।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मन में धर।२८४।

ओं ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नमः अर्घं।

संवर धर्मतनी शिव पावहि, संवर धरम तहां दरशावहि।
सूरि महा निज ज्ञान कलाकर, सिद्ध भये प्रणमूं मन में धर।२८५।

ओं ह्रीं सूरिसंवरधर्माय नमः अर्घं।

दोहा—एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप।
नमूं निरजरा तत्त्वसों, पायो सिद्ध अनूप।२८६।

ओं ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वाय नमः अर्घं।

शुद्ध सुभाव जहाँ तहां, कहो कर्मको नाश।
एम निरजरा तत्त्वका, रूप कियो परकाश ॥ २८७ ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वस्वरूपाय नमः अर्घं ।

कोटि जन्मके विधि सकल, सूके तृण सम जान।
दहे निर्जरा अग्निसों, इह गुण है परधान ॥ २८८ ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म।
धर्मी सोई आतमा, एक हि रूप सुपर्म ॥ २८९ ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वरूपाय नमः अर्घं ।

समय समै गुण श्रेणिका, खिरै कर्म बल ध्यान।
पै सम्बंध निवार करि, करै मुक्ति सुख पान ॥ २९० ॥
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबंधाय नमः अर्घं ।

अतुल शक्ति थिर भावकी, सो प्रगटी तुम माहिं।
यही निर्जरा रूप है, नमूं भक्ति धर माहि ॥ २९१ ॥

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घं।

सर्व कर्मके नाश विन, लहै न शिव-सुखरास।
निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश ॥ २९२ ॥

ओं ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नमः अर्घं।

सकल कर्ममल नाशतैं, शुद्ध निरंजन रूप।
ज्यों कंचन विन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप ॥ २९३ ॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नमः अर्घं।

द्रव्य भाव दोनों सुविधि, करै जगतमें वास।
दोऊं विध वन्ध उखारके, भये मुक्त सुखरास ॥ २९४ ॥

ॐ ह्रीं सूरिवन्धमोक्षाय नमः अर्घं।

पर विकलप सुख दुख नहीं, अनुभव निज आनन्द।
जन्म मरण विधि नाशकर, राजत शिवसुख कंद ॥ २९५ ॥

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं।

जहां न दुखको लेश है, उदय कर्म अनुसार।
सो शिवपद पायो महा, नमूं भक्ति उर धार॥ २१६॥
ओं ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नमः अर्घं।

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध है, तिनसों नित्त प्रवन्ध।
जे जगवास विलास दुख, तिनसों नमूं अबन्ध॥ २१७॥
ओं ह्रीं सूरिमोक्षानुबंधाय नमः अर्घं।

जैसी निज तन आकृती, तज कीनो शिववास।
ते तैसें नित अचल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश॥ २१८॥
ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नमः अर्घं।

क्षयोपशम परिणाम कर, सधे न निजका रूप।
या निजपदमें लीनता; ये ही गुप्त स्वरूप॥ २१९॥
ओं ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नमः अर्घं।

इन्द्रियजनित न दुख जहां; सदा निजानन्द रूप।

निर आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप ॥ ३०० ॥

ॐ ह्रीं गुरिपरमात्मस्वरूपाय नमः अर्घं ।

गीता छन्द—संपूरण श्रुत सार निजातम बोध लहानो,

निज अनुभव शिव मूल मनुज उपदेश करानो ।

शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अंधियारा,

पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥ ३०१ ॥

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः अर्घं ।

मुक्ति मूल है आतमज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी,

तत्त्व ज्ञानसों लहै निजातम पद सुखदानी ।

शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अन्धियारा,

पाठक गुण संभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥ ३०२ ॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनाय नमः अर्घं ।

भवसागरतें भव्य-जीव तारण अनिवारा,

तुममें यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सभंवे सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०३॥
ओं ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नमः अर्घं।

दर्शन ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपी,
हीनाधिक विन अचल विराजत शुद्ध सरूपी।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सभंवे सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०४॥
ओं ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नमः अर्घं।

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरे है।
तिहुं काल प्रति अन्य भाव नहीं ग्रहण करे हैं।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,

पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०५॥

ओं ह्रीं पाठकद्रव्याय नमः अर्घं ।

सह भावी गुण सार जहां परभाव न लेसा,
अगुरुलघू परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा ।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०६॥

ओं ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नमः अर्घं ।

गुण समुदायी द्रव्य याहितें निरगुण नाहीं,
सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माहीं ।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०७॥

ओं ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नमः अर्घं ।

सरूप सब द्रव्य सधे नीके अबाधकर,

सो तुम सत्य सरूप विराजो द्रव्य भाव घर।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा।३०८।
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यसरूपाय नमः अर्घं।

जे जे हैं परनाम विना परनामी नाहीं,
परनामी परनाम एक ही है तुममाही।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यों रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा ॥३०९॥
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नमः अर्घं।

अगुरुलघू पर्याय शुद्ध परनाम वखानी,
निज सरूपमें अंतरगत श्रुतज्ञान प्रमानी।

दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजै।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्धध प्रति नमन हमारा।३१३।
ओं ह्रीं पाठकमंगलगुणस्वरूपाय नमः अर्घं।
आदि अनंत अविरुद्ध शुभ मंगलमय मूरति,
निज सरूपमें वसैं सदा परभाव विदूरित।
शिष्यनके अज्ञान हरैं ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्धधप्रति नमन हमारा।३१४।
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यमंगलाय नमः अर्घं।
जितनी परणति धरो सबहि मंगलमय रूपी,
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,

ओं ह्रीं पाठकमंगलपर्यायाय नमः अर्घं।

निश्चय वा विवहार सर्वथा मंगलकारी,
जग जीवनके विघन विनाशन सर्व प्रकारी।
शिष्यनके अज्ञान हरें ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा। ३१६।

ओं ह्रीं पाठकद्रव्यमंगलपर्यायाय नमः अर्घं।

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व बखानो,
वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्ध प्रति नमन हमारा। ३१७।

ओं ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमंगलाय नमः अर्घं।

सर्व विशेष प्रतिभासमान मंगलमय भासे,

दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजै ।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्धप्रति नमन हमारा ।३१३।
ओं ह्रीं पाठकमंगलगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।
आदि अनंत अविरुद्ध शुभ मंगलमय मूरति,
निज सरुपमें बसै सदा परभाव विदूरित ।
शिष्यनके अज्ञान हरै ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवे सिद्धप्रति नमन हमारा। ३१४।
ओं ह्रीं पाठकद्रव्यमंगलाय नमः अर्घं ।
जितनी परणति धरो सबहि मंगलमय रूपी,
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी ।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अन्धियारा,

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२२॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानाय नमः अर्घं ।

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम मानी ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२३॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

युगपत् निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥३२४॥
ओं ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घं ।

हम सोवत हैं नित मोही, देखे देखत तुमको ही ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२५॥
ओं ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

द्रगवंत महासुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा ।

निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे ।
शिष्यनके अज्ञान हरे ज्यूं रवि अंधियारा,
पाठक गुण सम्भवै सिद्ध प्रति नमन हमारा। ३१८।
ओं ह्रीं पाठकस्वरूपमंगलाय नमः अर्घं ।

पायता छन्द—निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मंगल सोई ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३१९ ।
ओं ह्रीं पाठकमंगलोत्तमाय नमः अर्घं ।

जगजीवनको हम देखा, तुम ही गुण सार विशेखा ।
तुम गुण अनन्य श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३२० ।
ओं ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३२१ ।
ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

निज ज्ञान शुद्धता पाई, जिस करि यह है प्रभुताई ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३२२ ॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानाय नमः अर्घं ।

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम मानी ।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३२३॥
ओं ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

युगपत् निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३२४ ॥
ओं ह्रीं पाठकदर्शनाय नमः अर्घं ।

हम सोवत हैं नित मोही, देखे देखत तुमको ही ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३२५॥
ओं ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

द्रगवंत महासुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा ।

तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥ ३२६ ॥

ओं ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नमः अर्घं।

निरशंस अनंत अबाधा, निज बोधन भाव अराधा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३२७॥

ओं ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नमः अर्घं।

सम्यक्त महा सुखकारी, निज गुण स्वरूप अविकारी।
तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥ ३२८ ॥

ओं ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नमः अर्घं।

निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया॥ ३२९ ॥

ओं ह्रीं पाठकवीर्याय नमः अर्घं।

निज भोग क्लेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त अदेशा।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नमः अर्घं ॥ ३३० ॥

परनाम सुथिर निज माहीं, उपजै न कलेस कदाही ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३१ ॥

द्रव्य भाव लहो तुम जैसो, पावै जगवासी नहि ऐसो ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ३३२ ॥

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनन्द सुभाव सु जीवत ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३३ ॥

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दर्शन माहिं लखावा ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायाय नमः अर्घं ॥ ३३४ ॥

एकवार लखे सबहीको, तद्रूप निजातम ही को ।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥

ओं ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घं । ३३५ ॥

सपरस आदिक गुण नाहीं, चिद्रूप निजातम माहीं ।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया । ३६।

ओं ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नमः अर्घं ।

सरनागति दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला ।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ।३३७।

ओं ह्रीं पाठकशरणाय नमः अर्घं ।

जिनशरण गही शिव पायो, हम शरण मही गुण गायो ।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३३८॥

ओं ह्रीं पाठकगुणशरणाय नमः अर्घं ।

अनुभव निज बोध कराने, यह ज्ञान शरण कहलावे ।

तुम गुण अनंत श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ॥३३९॥

[illegible], निज्जन शिववास कराना।
तुम गुण अनंत श्रुत गाना, हम मस्तक शीश नवाना ॥ ३७० ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं।

निरभेद [illegible] अनूपा, है अर्ज नमी शिव भूपा।
तुम गुण अनंत श्रुत गाना, हम मस्तक शीश नवाना ॥ ३७१ ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं।

निज [illegible] नसाया, इह कारण शिवपद पाया।
तुम गुण अनंत श्रुत गाना, हम मस्तक शीश नवाना ॥ ३७२ ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं।

[illegible] मसाना, तुम शरण गही भगवाना।
तुम गुण अनंत श्रुत गाना, हम मस्तक शीश नवाना ॥ ३७३ ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५२ ॥

ओं ह्रीं पाठकतपसाचाराय नमः अर्घं ।

मुक्तपद देन अतिशारी, मर्व बुध चरण आचारी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५३ ॥

ओं ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नमः अर्घं ।

शुद्ध रत्नत्रय धारी, निजातमरूप अविकारी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५४ ॥

ओं ह्रीं पाठकरत्नत्रयमहापाय नमः अर्घं ।

वो ध्रुव पंचमगती पाई, जन्म फुनि मरण छुटकाई ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३५५ ॥

ओं ह्रीं पाठकध्रुवसंमाराय नमः अर्घं ।

अनूपम रूप अधिकाई, असाधारण स्वपद पाई ।
॥ ३५६ ॥

ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६१ ॥
ओं ह्रीं पाठकएकत्वचेतनस्वरूपाय नमः अर्घं।

गहै नित निज चतुष्टयको, मिलै कबहुं नहीं परसों।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६२ ॥
ॐ ह्रीं पाठकएकत्वद्रव्याय नमः अर्घं।

स्वपद अनुभूत सुख राशी, चिदानन्द भाव परकासी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६३ ॥
ओं ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नमः अर्घं।

अन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि बाधक हो।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३६४ ॥
ओं ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नमः अर्घं।

स्वपर हितकार गुणधारी, परम कल्याण अविकारी।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया। ३७०।

ओं ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नमो अर्घं।

अहित परहार पद जो है, परम कल्याण तासो है।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया। ३७१।

ओं ह्रीं पाठककल्याणस्वरूपाय नमो अर्घं।

स्वसुख द्रव्याश्रयें माहीं, जहां कछु पर निमित्त नाहीं।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया।३७२।

ओं ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नमो अर्घं।

जोहै सोहै अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया। ३७३।

ओं ह्रीं पाठकतत्त्वगुणाय नमो अर्घं।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नमो अर्घं ।

विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुतिमें प्रगट सारा ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३७९॥

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नमो अर्घं ।

ज्ञानमों जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३८०॥

ॐ ह्रीं पाठकजीवचिदानंदाय नमः अर्घं ।

चराचर वस्तु स्वाधीना, एक ही समय लखलीना ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३८१ ॥

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नमः अर्घं ।

सकल जीवोंके सुख कारन, मरन तुमही हो अनिवारन ।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३८ ॥

ॐ ह्रीं [illegible]

। बिन आश्रवै नाहीं, भये निर आश्रवा ताही।
पूरण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३८७॥
ॐ ह्रीं पाठकआश्रवच्छेदाय नमः अर्घं।

आश्रव कारणका होना, कार्य था आपका खोना।
पूरण श्रुतज्ञ न फल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥ ३८८ ॥
ॐ ह्रीं पाठकआश्रवविनाशाय नमः अर्घं।

तत्त्व निर्बाध उपदेशा, विनाशे कर्म परवेशा।
पूरण श्रु ज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३८९॥
ओं ह्रीं पाठकआश्रवउपदेशछेदकाय नमः अर्घं।

प्रकृति सब कर्मकी चूरी, भाव मल नाश दुख पूरी।
पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥३९०॥
ओं ह्रीं पाठकबंधमुक्ताय नमः अर्घं।

न फिर संसार अवतारा, बंध विधि अन्त कर डारा।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३९१॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरनिधिविज्ञाय नमः अर्घं ।

आश्रव कर्म दुखदाई कहे, संवर गे सुखदाई ।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥ ३९२ ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवराय नमः अर्घं ।

सर्वथा जोग विनसाया, स्वसंवर रूप दरशाया ।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥ ३९[illegible] ॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरस्वरूपाय नमः अर्घं ।

भावमें कलुषता नाहीं, भये संवर करण नाहीं ।

पूरण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यारथ उवझाया ॥३९४॥

ॐ ह्रीं पाठकसंवरकरणाय नमः अर्घं ।

कुपरणति राग सब नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन ।

पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया ॥ ३९५ ॥

ओं ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नमः अर्घं।

कामदेव दाहै जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया॥ ३९६॥

ओं ह्रीं पाठकरूपछेदकाय नमः अर्घं।

चहुं विधि बंध विधि चूरा, दो विस्फोटक कहो पूरा।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया॥ ३९७॥

ओं ह्रीं पाठकर्मनिस्फोटकाय नमः अर्घं।

दऊ विधि कर्मका खोना, सोई है मोक्षका होना।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया॥ ३९८॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नमः अर्घं।

द्रव्य अर भाव मल टारा, नमूं शिवरूप सुखकारा।
पूर्ण श्रुतज्ञान बल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया॥ ३९९॥

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नमः अर्घं।

अरति रति परिणमित स्वोई, आत्म रति है प्रगट सोई।

ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नमः अर्घं।

जीव सदा चित भाव विलासी, आप ही आप सधे शिव राशी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ४०५

ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणद्रव्याय नमः अर्घं।

ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सवै प्रतिभाशी।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४०६

ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणाय नमः अर्घं।

एक हि वार स्वभाव अभेदा, दर्शनको सब रोग विछेदा।
साधु भये शिव साधन हारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४०७

ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नमः अर्घं। ४०८।

आपहि साधन साध्य तुम्हीं हो, एक अनेक अवाध तुम्हीं हो। साधु०।

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नमः अर्घं।

चेतनता निज भाव न [illegible]

ओं ह्रीं साधुमंगलाय नमः अर्घं ।

मंगल रूप अनूपम सोहे, ध्यान किये नित आनंद होहे ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ।४१४

ओं ह्रीं साधुमंगलस्वरूपाय नमः अर्घं ।

पाप मिटे तुम शरण गहेतें, मंगल शरण कहाय लहेतें ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४१५

ॐ ह्रीं साधुमंगलशरणाय नमः अर्घं ।

देखत ही सब पाप नसे हे, आनंद मंगलरूप लसे हे ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥४१६॥

ओं ह्रीं साधुमंगलदर्शनाय नमः अर्घं ।

जानत हैं तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटे तिनहीके ।
साधु भये शिव साधनहारे; सो सब साधु हरो अघ म्हारे ॥४१७॥

ओं ह्रीं साधुमंगलज्ञानाय नमः अर्घं ।

ज्ञानमई तुम हो गुणग्रामा, मंगल जोनि धरे रवि जैसा ।

ओं ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घं ।

तीन हि लोक लखे सब जोई, आप समान न उत्तम कोई ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो सब साधु हरो अघ म्हारे ४२३

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घं ।

लोक सभी विधि बन्धन माही, उत्तम रूप धरो तुम ताहीं । साधु०

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घं । ४२४ ।

लोकनके गुण पाय कलेशा, उत्तम रूप नहीं तुम जैसा । साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घं । ४२५ ।

लोक अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्हीं अभिरामी । साधु०॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घं । ४२६ ।

लोक सभी परद्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्हीं हम पाया । साधु०॥

ओं ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घं । ४२७ ।

ज्ञानमई चित उत्तम सोहै, ऐसो लोक [illegible] । साधु०॥



निज आतम रूपमें दृढ़ सरधा तुम पाई, थिर रूप सदा निवसो शिववास कराई
निज रूप मगन मन ध्यान धरे मुनिराजे, मैं नमूं सा० ॥ ४४७ ॥
ओं ह्रीं साधुआत्मशरणाय नमो अर्घं ।

तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा, तुम निरावरण निरद्वंद स्वदर्श सरूपा
निज रूप मगन मन ध्यान धरें मुनिराजें, मैं नमूं सा० ॥ ४४८ ॥
ओं ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमो अर्घं ।

तुम परम पूज्य परमेश परम पद पाया, हम शरण गही पूजें नित मनवचकाया
निज रूप मगन मन ध्यान धरें मुनिराजें, मैं नमूं सा० ॥ ४४९ ॥
ओं ह्रीं साधुपरमात्मशरणाय नमो अर्घं ।

तुममन इन्द्री व्यापार जीत सुभ भीता, हम शरण गही मनु आजकर्म रिपुजीता
निज रूप मगन मनु ध्यान धरें मुनिराजें, मैं नमूं साधु० ॥४५०॥
ओं ह्रीं साधुनिजात्मशरणाय नमो अर्घं ।

भवत्रास दुखी जे शरण गहैं तुम मनमें,
तिनको अवलम्ब उभारो भयहर छिनमें । निज रूप० मैं० ।४५१।

तुम काल अनन्तानन्त अबाध विराजो,
परनिमित्त विकार निवार सु नित्य जु छाजो । निज० मैं० । ४५६

ओं ह्रीं साधुध्रुवाय नमो अर्घं ।

तुम छायक लब्धि प्रभाव परम गुण धारी,
निवसो निज आनन्द मांहि अचल अविकारी । निज० मैं० । ४५७

ओं ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमो अर्घं ।

तेरम चौदस गुण थान द्रव्य है जैसो, रहे काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो ।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरैं मुनिराजे, मैं नमूं सा० । ४५८ ।

ओं ह्रीं साधुद्रव्यगुणध्रुवाय नमो अर्घं ।

फिर जन्म मरण नहीं होय जन्म यो पाया, संसार विलक्षण स्वै अपूर्व पद पाया
निज रूप मगन मन ध्यान धरे मुनिराजे, मैं नमूं सा० । ४५९ ।

ओं ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमो अर्घं ।

सूक्ष्म अलब्धि अपर्याप्त निगोद शरीरा, ते तुच्छ द्रव्य फल नाश भये भव तीरा

ओं ह्रीं साधुचेतनसरूपाय नमः अर्घं ।

चेतन विलास सुख रास नित्य परकाशी,
सो साधु दिगम्बर साधु भये अविनाशी । निज०, मैं० ।४६५

ओं ह्रीं साधुचेतनाय नमः अर्घं ।

तुम असाधारण अरु परमात्म प्रकाशी,
नहीं अन्य जीव यह लहै गहै भववासी ।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरै मुनिराजै,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप विराजै ॥

ॐ ह्रीं साधु परमात्मप्रकाशाय नमः अर्घं ॥ ४६६ ॥

तुम मोह तिमिर विन स्वयं सूर्य परकाशी,
गुण द्रव्य पर्य सब भिन्न भिन्न प्रतिभाशी । निज० मैं० ।

ओं ह्रीं साधु ज्योतिसरूपाय नमः अर्घ ॥ ४६७ ॥

ज्यों घटपटादि दीपकको ज्योति दिखावे,
ज्यों ज्ञान ज्योति सब भिन्न भिन्न ...

ॐ ह्रीं साधुज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४६८ ॥

सामान्य रूप अवलोकन युगपत सारा,
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरे अंधियारा। निज० मैं०।

ओं ह्रीं साधुदर्शनज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४६९ ॥

साकार रूप सु विशेष ज्ञान युति माहीं,
युगपत कर प्रतिबिंबित वस्तू प्रगटाई। निज०. मैं०।

ओं ह्रीं साधुज्ञानज्योतिप्रदीपाय नमः अर्घं ॥ ४७० ॥

जे अर्थजन्य कहैं ज्ञान वो झूठे वादी,
है स्वपर प्रकाशक आतम ज्योति अनादी। निज० मैं०।

ओं ह्रीं साधुआत्मज्योतिषे नमः अर्घं ॥ ४७१ ॥

है तारन तरण जिहाज अथित भवसागर,
हम शरण गहैं पावैं शिववास उजागर। निज० मैं०।

ॐ ह्रीं साधुशरणाय नमः अर्घं ॥ ४७२ ॥

सामान्य रूप सब साधु मुक्ति मग साधे,

हम पावैं निज पद नेमरूप आराधैं।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरैं मुनिराजै,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप विराजै॥
ओं ह्रीं साधु सर्वशरणाय नमः अर्घं॥ ४७३॥
त्रस नाड़ी ही में तत्त्वज्ञान सरधानी,
ताकर साधै निश्चय पावै शिवरानी। निज० मैं०।
ओं ह्रीं साधु लोकशरणाय नमः अर्घं॥ ४७४॥
तिहुं लोक करन हित वरते नित उपदेशा,
हम शरण गही मेटो भववास कलेशा। निज० मैं०।
ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नमः अर्घं॥ ४७५॥
संसार विषम दुखकार असार अपारा,
तिस छेदक भेदक सुखदायक हितकारा। निज० मैं०।
ओं ह्रीं साधुसंसारछेदकाय नमः अर्घं॥ ४७६॥

तद्यपि निज सप्त माहि भिन्नता साजै। निज० मैं०।
ओं ह्रीं साधुएकत्वाय नमः अर्घं ॥ ४७७ ॥

यद्यपि सामान्य सु पूरण ज्ञानी,
तद्यपि निज आश्रय भाव भिन्न परनामी। निज० मैं०।
ॐ ह्रीं साधुएकत्वगुणाय नमः अर्घं ॥ ४७८ ॥

है असाधारण एकत्व द्रव्य तुम माही,
तुम सम संसार मंझार और कोऊ नाहीं। निज० मैं०।
ओं ह्रीं साधुएकत्वद्रव्याय नमः अर्घं ॥ ४७९ ॥

यद्यपि सब ही हो असंख्यात परदेशी,
तद्यपि निजमें निज रूप स्वद्रव्य सुदेशी। निज० मैं०।
ओं ह्रीं साधुएकत्वस्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ४८० ॥

सामान्य रूप सब ब्रह्म कहावै ज्ञानी,
तिनमें तुम वृषभ सु परम ब्रह्म परणामी। निज० मैं०।
ओं ह्रीं साधुपरमब्रह्माय नमः अर्घं ॥ ४८१ ॥

सापेक्ष एक ही कहै सु नय विस्तारा,
तुम भाव प्रगट कर कहै सु निश्चै कारा। निज० मैं०।

ओं ह्रीं साधु परमस्याद्वादाय नमः अर्घं ॥ ४८२ ॥

है ज्ञान निमित यह वचन जाल परमाणा,
वाचक वाच्य संयोग ब्रह्म कहलाना। निज० मैं नमूं०।

ॐ ह्रीं साधु शुद्धब्रह्माय नमः अर्घं ॥ ४८३ ॥

षट् द्रव्य निरूपण करै सोई आगम हो,
तिसके तुम मूल निधान सु परमागम हो।
निज रूप मगन मनु ध्यान धरै मुनिराजैं,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप विराजैं॥

ओं ह्रीं साधु परमागमाय नमः अर्घं ॥ ४८४ ॥

तोर्थेश कहै सर्वज्ञ दिव्य धुनि माहीं,
तुम गुण अपार इम कहो जिनागम साखी। निज० मैं० ...

नम सर्व कर्ममल नाशि परम पद पायो। निज० मैं० ॥४८६॥

ओं ह्रीं साधु पवित्राय नमः अर्घं ।

नम रहो बन्धसों दूरि एकांत सुखाई,

ज्यों नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिसमाहीं। निज० मैं० ४९०

ओं ह्रीं साधु बन्धविमुक्ताय नमः अर्घं ।

सब द्रव्य भाव नोकर्म बन्ध छुटकाया,

नम शुद्ध निरंजन निज सरूप थिर पाया । निज० मैं० ॥४९१॥

ओं ह्रीं साधु बन्धमुक्ताय नमः अर्घं ।

अडिल्ल छन्द—भवाश्रव विन अतिशय सहित अबन्ध हो,

मेघ पटल विन ज्यों रवि किरण अबन्ध हो ।

मोक्षमार्ग वा मोक्षाश्रय सब साधु हैं,

नमन निरंतर हमहूं कर्मरिपुको दहैं ॥ ९२ ॥

तुम मंत्र शिव कारण शुद्ध अनूप हैं । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं माध् निमित्तमुक्ताय नमः अर्घं ॥ ४९७ ॥

संशय रहित सुनिश्चै सन्मतिदाय हो,

मिथ्या भ्रमतम नाशन सहज उपाय हो । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं माध् बोधधर्माय नमः अर्घं ॥ ४९८ ॥

अति विशुद्ध निज ज्ञान स्वभाव सु धरत हो,

भव्यनके संशय आदिक तम हरत हो । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं माध् बोधगुणाय नमः अर्घं ॥ ४९९ ॥

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो,

पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो । मोक्षमार्ग० नमत०

ॐ ह्रीं माध् सुगतिमात्राय नमः अर्घं ॥ ५०० ॥

जासो परे न और जन्म या मरण हो,

सो उत्तम उत्कृष्ट परम गतिको लहो । मोक्षमार्ग० नमत०

कर्म-शत्रु को जीत अर्हं पद पावही। मोक्षमार्ग० नमत०।
ओं ह्रीं णमो अर्हत्स्वरूपाय नमः अर्घं ॥ ५०६ ॥

परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो,
तीन लोक परमेष्ट परम पद पाइयो। मोक्षमार्ग० नमत०।
ओं ह्रीं णमो सिद्धपरमेष्ठिने नमः अर्घं ॥ ५०७ ॥

शिव मारग प्रगटावन कारण हो तुम्हीं,
भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्हीं। मोक्षमार्ग० नमत०।
ओं ह्रीं णमो चारित्रकाशिने नमः अर्घं ॥ ५०८ ॥

स्वपर स्वहितकरि परम बुद्धि भरतार हो,
ध्यान धरत आनंद बोध दातार हो। मोक्षमार्ग० नमत०।
ओं ह्रीं णमो उपाध्यायाय नमः अर्घं ॥ ५०९ ॥

पंच परम गुरु प्रगट तुम्हारो नाम है,
भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है। मोक्षमार्ग० नमत०।
ओं ह्रीं णमो अर्हंतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः अर्घं ॥ ५१० ॥

पद्धडी छन्द।

जय महामोह दल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनंदपूर।
जय दोऊ विधि कर्म विमुक्त, देव जय निजानंद स्वाधीन एव १
जय संशयादि भ्रम तम निवार, जय स्वात्मशक्ति द्युति धुति अपार।
जय युगपति सकल प्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष २
जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वंद निरामय निर उपाधि।
जय मन वच सब व्यापार नाश, जय थिरसरूप निज पद प्रकाश ३
जय पर निमित्त सुख दुख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार।
निजमें परको परमें न आप, परवेश न हो नित निर मिलाप ॥ ४ ॥
तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार।
तुम पंच परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त ५
एकादशांग सर्वांग पूर्व, स्वैं अनुभव पायो फल अपूर्व।
अन्तर बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधू पद लहाय ६

अथ अष्टमी पुजा १०२४ नाम सहित ।

छन्द—ऊरध अधो सरेफ विन्दु हंकार विराजैं,
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजैं ।
वर्गनि पूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्र भागमें मंत्र अनाहत सोहत अतिवर ॥
पुनि अन्त ह्रीं वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको,
ह्वै केहरि सम पूजन निमित्त, सिद्धचक्र मंगल करो ॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसहित विराजमान अत्रावतरावतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

इति यंत्र स्थापनं ।

दोहा—सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित निरोग ।

णाणदमण ... मलहेत्र अवगाहणं अगुरुलघुमव्याबाहं संसारतापविनाशनाय चन्दनं।

अक्षय अबाधित आदि अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो।
ज्यों तुम विना तंदुल दिपै त्यूं, निखिल अमल अभाव हो॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, अक्षतं पूजा करूं।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं॥ ३॥

ओं ह्रीं श्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्री समत्तणाणदमणवीर्य सुहमत्तहेत्र अवगाहणं अगुरुलघुमव्याबाहं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं।

गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कंठ पहिरैं भावसों।
जिनके मधुप मनरसिक लुब्धित, रमत नित प्रति चावसों॥
यातें उचित ही है जु तुमपद, पुष्पसों पूजा करूं।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं॥ ४॥

ओं ह्रीं श्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्री समत्तणाणदमण वीर्य सुहमत्तहेत्र अवगाहणं अगुरुलघुमव्याबाहं कामबाणविनाशनाय पुष्पं।

शुद्धात्म सरस सुपाक मधुर, समान और न ... ...।

... आस्वादी मो तुम सम, और संतुष्टित नहीं ॥
... त्रिचिन ... है जु तुमपद, चरुनसों पूजा करूं।
... अस चौबीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ ५ ॥

... चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसमत्तगण ... अवगाहणं अगुरुलघुमव्याबाहं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं।

... स्वभावधर, ज्यूं निज स्वरूप संभारने।
... त्रिकाल अनंत द्रव्य पर्याय, प्रगट निहारने ॥
... त्रिचिन ... है जु तुमपद, दीपसों पूजा करूं।
... अस चौबीस गुण गण, भावयुत मनमें धरूं ॥ ६ ॥

... सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्रीसमत्त- ... सूक्ष्मनंत्व अवगाहणं अगुरुलघुमव्याबाहं मोहांधकारविनाशनाय दीपं

... यान अगनि जराय वसुविधि, उर्द्धगमन स्वभावतें।
... अचल शिव थान नित, तिह धर्मद्रव्य अभावतें ॥

पातें उचित ही है जु तुमपद, धूपसों पूजा करूं।
इक सहस अरु चौबीस गुणगण, भावयुत मनमें धरूं॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्रीमम-
क्त्वाज्ञानदर्शनवीर्य सूक्ष्मत्व अवगाहन अगुरुलघुमव्याबाधं अष्टकर्मदहनाय धूपं।

सत्तारुहुष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा।
तीर्थेश पदको सफलकरि, अक्षय अमर शिवफल लहा॥
पातें उचित ही है जु तुम पद, फलनसों पूजा करूं।
इक सहस अरु चौबीस गुणगण, भावयुत मनमें धरूं॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्रीं सिद्धपरमेष्ठिने चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र १०२४ गुणसंयुक्ताय श्रीमम-
क्त्वाज्ञानदर्शनवीर्यं सूक्ष्मत्वं अवगाहनं अगुरुलघुमव्याबाधं मोक्षफलप्राप्तये फलं।

अष्टांग मूल सु विधि हरो, निज अष्ट गुण पायो सही।
अष्टमई गति संसार मेटि सु अचल ह्वै अष्टम मही॥

अथ १००८ नामगुणसहित अर्घ।

दोहा—[illegible] विश्व प्रकाश है, [illegible] [illegible], [illegible]।
जिनको [illegible] जिन भये, नमूं जिन [illegible]।१।

ॐ ह्रीं जिन[illegible] नमो अर्घं।

[illegible] [illegible] सु जिन, जिनने [illegible] [illegible]।
ताते नाम जिनेन्द्र है, नमूं सदा धरि ध्यान।२।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्राय नमो अर्घं।

[illegible] [illegible] जिन, शुद्ध निरंजन देव।
[illegible] जिनराज तुम, [illegible] हो स्वयमेव।३।

ॐ ह्रीं जिनराजाय नमः अर्घं।

[illegible] [illegible], [illegible], [illegible] जिन नहीं होय।
[illegible] [illegible], [illegible], [illegible] जिन है सोय।४।

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं।

इन्द्रादिक पूजत चरन, सेवत हैं तिहुं काल।
गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल। ५।

ओं ह्रीं जिनराजे नमः अर्घं।

गणधरादि सत पुरुष जे, वीतराग निरग्रन्थ।
तुमको सेवत जिन भये, साधत हैं शिवपंथ। ६।

ओं ह्रीं जिनाधिपाय नमः अर्घं।

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहंत।
द्रव्यभाव सर्वातमा, नमूं सिद्ध भगवंत। ७।

ओं ह्रीं जिनाधीशाय नमो अर्घं।

गणधरादि सेवत चरन, शुद्धातम लवलाय।
तीन लोक स्वामी भये, नमूं सिद्ध अधिकाय। ८।

ओं ह्रीं जिनस्वामिने नमो अर्घं।

नमत सुरासुर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान।

सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूं, पाऊँ शिवसुख थान। ९।

ओं ह्रीं जिनेश्वराय नमो अर्घं।

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात। १०।

ओं ह्रीं जिननाथाय नमो अर्घं।

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज।
नितप्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्य समाज। ११।

ॐ ह्रीं जिनपतये नमो अर्घं।

त्रिभुवन शिखाशिरोमणी, राजत सिद्ध अनन्त।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अन्त। १२।

ॐ ह्रीं जिनप्रभवे नमः अर्घं।

जिन आज्ञा त्रिभुवनविषैं, वरते सदा अखंड।
मिथ्यामति कुपथनको, देत नीति सों दंड। १३।

ओं ह्रीं जिनेश्वराय नमः अर्घं ।

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश।
राजत है विस्तीर्ण जिन, नमूं हरो भववास ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं जिनविभवे नमः अर्घं ।

आत्मज्ञ जिन नमन हैं शुद्धातमके हेत।
स्वामी हो तिहुं लोकके, नमूं वसे शिवखेत । १५ ।

ओं ह्रीं जिनभर्त्रे नमः अर्घं ।

मिथ्यामतिको नाश करि, तत्त्वज्ञान परकाश।
दीप्ति रूप रविसम सदा, करो सदा उर वास ॥ १६ ॥

ओं ह्रीं तत्त्वप्रकाशाय(श्रीजिनरवये) नमः अर्घं ।

कर्म शत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार॥
धर्म मार्ग प्रगटात है, शुद्ध सुलभ सुखकार ॥ १७ ॥

ओं ह्रीं जिनकर्मजिते नमः अर्घं ।

सिद्ध जिनेश्वर मैं नमूं, पाऊँ शिवसुख थान । ९ ।

ओं ह्रीं जिनेश्वराय नमो अर्घं ।

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात ।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात । १० ।

ओं ह्रीं जिननाथाय नमो अर्घं ।

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज ।
नितप्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्य समाज । ११ ।

ॐ ह्रीं जिनपतये नमो अर्घं ।

त्रिभुवन शिखाशिरोमणी, राजत सिद्ध अनन्त ।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अन्त । १२ ।

ॐ ह्रीं जिनप्रभवे नमः अर्घं ।

जिन आज्ञा त्रिभुवनविषैं, वरते सदा अखंड ।
मिथ्यामति दुरपक्षको, देत नीति सों दंड । १३ ।



ॐ ह्रीं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं ।

तीन लोक परिपूर्ण हैं, लोकालोक प्रकाश ।
गगन हैं निर्वाण जिन, नमूं तिन भगवान ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं जिनाधिपाय नमः अर्घ्यं ।

आत्मज्ञ जिन नमन हैं ज्ञानानन्द हैं ।
स्वामी हो तिहुं लोकके, नमूं तुम जिनेन्द्र ॥ १४ ॥

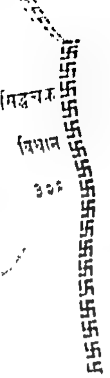
ॐ ह्रीं जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं ।

मिथ्यामतिको नाश करि, तत्त्वज्ञान परकाश ।
दीप्ति रूप रविसम सदा, करो सदा उर वास ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं तत्त्वप्रकाशाय श्रीजिनाय नमः अर्घ्यं ।

कर्मशत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार ॥
धर्ममार्ग प्रगटान हैं, शुद्ध शुद्ध सुखकार ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं जिनकर्मजित नमः अर्घ्यं ।



चार संघ नायक प्रभु, वन्दूं सिद्ध समाज । ३५ ।

ओं ह्रीं जिनकुञ्जराय नमः अर्घं ।

दीप्त रूप तिहुं लोकमें, है प्रचण्ड परताप ।
भक्तनको नित देत हैं, भोगें शिवसुख आप । ३६ ।

ओं ह्रीं जिनार्काय नमः अर्घं ।

रत्नत्रय मग साधकर, सिद्ध भये भगवान ।
पूरण निजसुख धरत हैं, निजमें निज परिणाम । ३७ ।

ओं ह्रीं जिनधौर्याय नमः अर्घं ।

तीन लोकके नाथ हो, ज्यूं तारागण सूर्य ।
शिव सुख पायो परम पद, वन्दों श्री जिन धूर्य्य । ३८ ।

ओं ह्रीं जिनधूर्याय नमः अर्घं ।

पराधीन विन परम पद, तुम विन लहै न और ।
उत्तमानमा में नमूं, तीन लोक शिरमौर । ३९ ।

ओं ह्रीं जिनाग्रमाय नमः अर्घं।

जहां न दुखको लेश है, तहां न परसों कार।
तुम बिन कहूं न श्रेष्टता, तीन लोक दुख टार। ४०।

ओं ह्रीं त्रिलोकदुःखनिवारणाय नमः अर्घं।

पूर्ण रूप निज लक्ष्मी, पाई श्री जिनराज।
परम श्रेय परमातमा, बन्दूं शिवसुख साज। ४१।

ओं ह्रीं जिनवराय (जिनवर्याय) नमः अर्घं।

निरभय हो निर आश्रय, निरसंगी निरबंध।
निज साधन साधक सुगुन, परसों नहिं सम्बंध। ४२।

ॐ ह्रीं जिननिःसंगाय नमः अर्घं।

अन्तराय विधि नाशकै, निजानन्द भयो प्राप्त।
संत नमैं करजोर युग, भव-दुख करो समाप्त॥ ४३॥

ओं ह्रीं जिनउद्धाराय नमः अर्घं।

शिवमारगमें धरत हो, जग मारगतैं काढ़।

धर्मधुरन्धर मैं नमूं, पाऊं भव वन वाढ़ ॥
ॐ ह्रीं जिनवृषभाय नमः अर्घं । ४४ ।

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार ।
रहो सु थिर निज धर्म में, मैं वन्दूं सुखकार ॥
ॐ ह्रीं जिनवृषभदेवाय नमः अर्घं । ४५ ।

जगते जीव विधि धूलि सों, लिप्त न लहै प्रभाव ।
रत्नराशि सम तुम दिपो, निर्मल सहज सुभाव ॥
ॐ ह्रीं जिनरत्नाय नमः अर्घं । ४६ ।

तीन लोकके शिखर पर, राजत हो विख्यात ।
तुम सम और न जगतमें, बड़ा कोई दिखलात ॥
ओं ह्रीं जिनोरसाय नमः अर्घं । ४७ ।

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोहशत्रु को जीत ।
रहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोकके मीत ॥
ओं ह्रीं जिनेशाय नमः अर्घं । ४८ ।

चारि घातिया कर्मको, नाश कियो जिनराय।
घाति अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय॥

ओं ह्रीं जिनाग्राय नमः अर्घं। ४९।

निज पौरुषकर साधियो, निज पुरुषारथ सार।
अन्य सहाय नहीं चहैं, सिद्ध सु वीर्य अपार॥

ओं ह्रीं जिनशार्दूलाय नमः अर्घं। ५०।

इन्द्रादिक नित ध्यावते, तुम सम और न कोय।
तीन लोक चूड़ामणी, नमूं सिद्ध सुख होय॥

ओं ह्रीं (त्रिलोकचूडामणये) जिनपुंगवाय नमः अर्घं। ५१।

निजानंद पदको लहो, अविरोधी मल नास।
समकित विन तिहुं लोकमें, और नहीं सुखरास।

ओं ह्रीं जिनप्रवेकाय नमः अर्घं। ५२।

जगत शत्रुको जीतिके, कल्पित जिन कहलाय।

मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय ॥
ओं ह्रीं जिनहंगाय नमः अर्घं । ५३ ।

द्रव्य भाव दोनों नहीं, उत्तम शिवसुख लीन ।
मन वच तन करि मैं नमूं, निज सम भवि जन कीन ॥
ओं ह्रीं जिनोत्तमगुणधारकाय नमः अर्घं । ५४ ।

चार संघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय ।
तारण तरण जहाज हो, मैं वन्दूं शिवराय ॥
ओं ह्रीं जिननायकाय नमः अर्घं । ५५ ।

स्वयं बुद्ध शिवमार्गमें, आप चले अनिवार ।
भविजन अग्रेश्वर भये वन्दूं भक्ति विचार ॥
ओं ह्रीं जिनाग्रण्ये नमः अर्घं । ५६ ।

शिव मारगके चिह्न हो, सुखसागरकी पाल ।
शिवपुरके तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल ॥ ५७ ॥

तुम सम और न जगतमें, उत्तम श्रेष्ठ कहाय।
आप तिरे भवि तार दे, वन्दूं तिनके पाय ॥ ५८ ॥

ओं ह्रीं जिनसत्तमाय नमः अर्घं।

स्वपर कल्याणक हो प्रभू, पंचकल्याणक ईश।
श्रीपति शिव-शंकर नमूं, चरणाम्बुज धरि शीश ॥ ५९ ॥

ओं ह्रीं जिनप्रभवाय नमः अर्घं।

मोह महाबल दलमलो, विजय लक्ष्मीनाथ।
परम ज्योति शिवपद लहो, चरण नमूं धरि माथ ॥ ६० ॥

ओं ह्रीं परमजिनाय नमः अर्घं।

चहुं गति दुःख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ।
नमूं सिद्ध कर जोरिकें, पाऊं मैं सर्वार्थ ॥ ६१ ॥

ओं ह्रीं जिनचतुर्गतिदुःखान्तकाय नमः अर्घं।

जीते कर्म निकृष्टको, श्रेष्ठ भये जिनदेव।
तुम सम और न जगतमें, वन्दूं मैं तिन भेव ॥ ६२ ॥

ओं ह्रीं जिनश्रेष्ठाय नमः अर्घं ।

आप मोक्ष मग साधियो, औरन सुलभ कराय ।
आदि पुरुष तुम जगतमें, धर्म रीत वरताय ॥ ६३ ॥

ओं ह्रीं जिनज्येष्ठाय नमः अर्घं ।

मुख्य पुरुषारथ मोक्ष है, साधत सुखिया होय ।
मैं वन्दूं तिन भक्तिकर, सिद्ध कहावे सोय ॥ ६४ ॥

ओं ह्रीं जिनमुख्याय नमः अर्घं ।

सुरपति सम अग्रेश हो, निज पर भासनहार ।
आप तिरे भवि तारियो, वन्दूं योग संभार ॥ ६५ ॥

ओं ह्रीं जिनाग्राय नमः अर्घं ।

रागादिक रिपु जीत तुम, श्री जिन नाम धराय ।
सिद्ध भये कर जोरिके, वन्दूं तिनके पाय ॥ ६६ ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनाय नमः अर्घं ।

विषय कषाय न लेश है, दृष्टि ज्ञान परिपूर्ण ।

उत्तम जिन शिवपद लियो, नमत कर्मको चूर्ण ॥ ६७ ॥
ओं ह्रीं जिनउत्तमाय नमः अर्घं ।

चहुं प्रकारके देवता, नित्य नमावत शीश ।
तुम देवनके देव हो, नमूं सिद्ध जगदीश ॥ ६८ ॥
ओं ह्रीं वृन्दारकाय नमः अर्घं ।

जो निज सुख होने न दे, सांचा रिपु है सोय ।
ऐसे रिपुको जीतके, नमूं सिद्ध जो होय ॥ ६९ ॥
ओं ह्रीं अरिजिताय नमः अर्घं ।

अविनाशी अविकार हो, अचलरूप विख्यात ।
जामें विघ्न न लेश है, नमूं सिद्ध कहलात ॥ ७० ॥
ओं ह्रीं निर्विघ्नप्रतये नमः अर्घं ।

रागदोष मद मोह अरु, ज्ञानावरण नशाय ।
शुद्ध निरंजन सिद्ध हैं, वन्दूं तिनके पाय ॥ ७१ ॥
ओं ह्रीं निरजसे नमः अर्घं ।

मत्सर भाव दुखी करैं, निजानन्दको घात।
सो तुम नाशो छिनकमें, शम सुखिया कहलात ॥७२॥
ओं ह्रीं निरस्तमत्सराय नमः अर्घं।

परकृत भाव न लेश है, भेद कह्यो नहि जाय।
वचन अगोचर शुद्ध हैं, सिद्ध महा सुखदाय ॥ ७३ ॥
ओं ह्रीं शुद्धाय नमः अर्घं।

रागादिक मल विन दिपो, शुद्ध सुवर्ण समान।
शुद्ध निरंजन पद लियो, नमूं चरण धरि ध्यान ॥ ७४ ॥
ओं ह्रीं निरंजनाय नमः अर्घं।

द्रव्य भाव दो विधि करम, नाश भये शिवराय।
वन्दूं मन वच काय कर, भविजनको सुखदाय ॥ ७५ ॥
ओं ह्रीं कर्मघ्ने नमः अर्घं।

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घातिया कर्म।

ॐ ह्रीं वीतरागाय नमः अर्घं ।

क्षुधा वेदनी नाशकर, स्वै सुख भुंजनहार।
निजानन्द सन्तुष्ट हैं, वन्दूं भाव विचार ॥ ८१ ॥

ओं ह्रीं (निजानंदाय) अक्षुधाय नमः अर्घं ।

एक दृष्टि सबको लखैं, इष्ट अनिष्ट न कोय।
द्वेष अंश व्यापै नहीं, सिद्ध कहावत सोय ॥ ८२ ॥

ओं ह्रीं अद्वेषाय नमः अर्घं ।

भवसागरके तीर हो, शिवपुरके हैं राह।
मिथ्यातमहर सूर्य हो, मैं वन्दूं हूं ताहि ॥ ८३ ॥

ॐ ह्रीं (तमोहराय) निर्मोहाय नमः अर्घं ।

जग जनमें यह दोष है, सुखी दुखी बहु भेव।
ते सब दोष निवारियो, उत्तम हैं स्वयमेव ॥ ८४ ॥

जनम मरण यह रोग है, तिनको कठिन इलाज।
परमौषध यह रोगको, वन्दूं मेटन काज ॥ ८५ ॥
ॐ ह्रीं अगदाय नमः अर्घं।

राग कहो ममता कहो, मोह कर्म सो होय।
सो जिन मोह विनाशियो, नमूं सिद्ध है सोय ॥ ८६ ॥
ओं ह्रीं निर्ममत्वाय नमः अर्घं।

तृष्णा दुखको मूल है, सुखी भये तिस नाश।
मन वच तन करि मैं नमूं, है आनन्द विलास ॥ ८७ ॥
ओं ह्रीं वीततृष्णाय नमः अर्घं।

अन्तर बाह्य निरइच्छ है, एकी रूप अनूप।
निष्पृह परमेश्वर नमूं, निजानन्द शिवभूप ॥ ८८ ॥
ओं ह्रीं असंगाय नमः अर्घं।

क्षायिक समकितको धरें, निर्भय थिरता रूप।

ओं ह्रीं अनन्तवीर्याय नमः अर्घं ।

सुखाभास जग जीवके, पर निमित्तसैं होय ।
निज आश्रय पूरण सुखी, सिद्ध कहावे सोय ॥ १०७ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घं ।

निज सुखमैं सुख होत है, पर सुखमें सुख नाहिं ।
सो तुम निज सुखके धनी, मैं वन्दूं हूं ताहि ॥ १०८ ॥

ओं ह्रीं अनन्तसौख्याय नमः अर्घं ।

तीन लोक तिहुं कालके, गुण पर्यय कछु नाहिं ।
जाको तुम जानो नहीं, ज्ञान भानुके माहि ॥ १०९ ॥

ओं ह्रीं विश्वज्ञानाय नमः अर्घं ।

द्रव्य तथा गुण पर्यको, देखै एकीवार ।
विश्व दर्श तुम नाम है, वन्दों भक्ति विचार ॥ ११० ॥

ओं ह्रीं विश्वदर्शिने नमो अर्घं ।

संपूरण अवलोकतें, दर्शन धरा अपार।
नमूं सिद्ध कर जोरिके, करो जगतमे पार ॥ ११० ॥

ओं ह्रीं अखिलार्थदर्शिने नमः अर्घं।

इन्द्रिय ज्ञान परोक्ष है, क्रमवर्ती कहलाय।
विन इन्द्रिय प्रत्यक्ष है, धरो ज्ञान सुखदाय ॥ ११२ ॥

ओं ह्रीं निष्पक्षदर्शनाय नमः अर्घं।

विश्व मांहि तुम अर्थ सब, देखो एकीबार।
विश्व चक्षु तुम नाम है, वन्दूं भक्ति विचार ॥ ११३ ॥

ओं ह्रीं विश्वचक्षुषे नमः अर्घं।

तीन लोकके अर्थ जे, बाकी रहो न शेष।
युगपत तुम सब जानियो, गुण पर्याय विशेष ॥ ११४ ॥

ॐ ह्रीं अशेषविदे नमः अर्घं।

पराधीन अरु ...

सो . वगतिमें तुम लियो, मैं वन्दूं सुखकंद ॥ ११५ ॥
ओं ह्रीं आनन्दाय नमः अर्घं ।

सत प्रशंसया नित्य है, या सद्भवा सरूप ।
सो तुममें आनन्द है, वन्दत हूं शिवभूप ॥ ११६ ॥
ओं ह्रीं सदानन्दाय नमः अर्घं ।

उदय महा सत् रूप है, जामें असत न होय ।
अन्तराय अरु विघन विन, सत्य उदै है सोय ॥ ११७ ॥
ओं ह्रीं सदोदयाय नमः अर्घं ।

नित्यानन्द महासुखी, हीनाधिक नहीं होय ।
नहीं गत्यन्तर रूप हो, शिवगतिमें है सोय ॥ ११८ ॥
ओं ह्रीं नित्यानंदाय नमः अर्घं ।

जासों परे न और सुख, अहमिन्द्रनमें नाहिं ।
सोई श्रेष्ठ सुख भोगते, वन्दूं हूं मैं ताहि ॥ ...

ओं ह्रीं परमौजसे नमः अर्घं ।

महातेजके पुंज हो, अविनाशी अविकार ।
झलकत ज्ञानाकार सब, दर्पण वत आधार ॥ १२४ ॥
ॐ ह्रीं परमतेजसे नमः अर्घं ।

परम धाम उतकृष्ट पद, मोक्ष नाम कहलाय ।
जासों फिर आवत नहीं, जन्म मरण नहीं पाय ॥ १२५ ॥
ॐ ह्रीं परमधाम्ने नमः अर्घं ।

जग गुरु सिद्ध परमातमा, जगत सूर्य शिव नाम ।
परम हंस योगीश हैं, लियो मोक्ष अभिराम ॥ १२६ ॥
ॐ ह्रीं परमहंसाय नमः अर्घं ।

दिव्यज्योति स्वज्ञानमें, तीन लोक प्रतिभास ।
शंका विन विश्वास कर, निजपर कियो प्रकाश ॥ १२७ ॥
ओं ह्रीं प्रत्यक्षज्ञात्रे नमः अर्घं ।

सो आतमके बोधतें, किया कर्मको नाश । १३२ ।

ओं ह्रीं प्रबोधात्मने नमः अर्घं ।

कर्म मैलसे लिप्त हैं, जगति आत्म दिन रैन ।
कर्म नाश महापद लियो, वन्दूं हूं सुख देन । १३३ ।

ओं ह्रीं महात्मने नमः अर्घं ।

आतमको गुण ज्ञान है, यही यथारथ होय ।
ज्ञानानन्द ऐश्वर्यता, उदय भयो है सोय । १३४ ।

ओं ह्रीं आत्ममहोदयाय नमः अर्घं ।

दर्श ज्ञान सुख वीर्यको, पाय परम पद होय ।
सो परमातम तुम भये, नमूं जोर कर दोय । १३५ ।

ओं ह्रीं परमात्मने नम अर्घं ।

मोहकर्मके नाशतें, शान्ति भये सुखदेन ।
[illegible] शान्ति हो, [illegible] नमूं सुख देन । १३६ ।

ओं ह्रीं प्रशांतात्मने नमः अर्घं ।

पूरण पद तुम पाइयो, यातें परे न कोय ।
तुम समान नहीं और हैं, वन्दूं हूं पद दोय । १३७ ।

ओं ह्रीं परमात्मने नमो अर्घं ।

पुद्गल कृत तन छारकें, निज आतममें वास ।
स्व प्रदेश ग्रहके विषें, नित ही करत विलास । १३८ ।

ओं ह्रीं आत्मनिकेताय नमः अर्घं ।

औरनको नित देत हैं, शिवसुख भोगें आप ।
परम इष्ट तुम हो सदा, निज सम करत मिलाप । १३९ ।

ओं ह्रीं परमेष्ठिने नमः अर्घं ।

मोक्ष लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत ।
महा इष्ट कहलात हो, वन्दूं शिवसुख हेत । १४० ।

ओं ह्रीं महितात्मने नमः अर्घं ।

रागादिक मल नासिकै, श्रेष्ठ भये जगमांहि।
सो उपासना करणको, तुम सम कोई नाहिं। १४१।
ओं ह्रीं श्रेष्ठात्मने नमो अर्घं।

परमें ममत विनाशकै, स्व आतम थिर धार।
पर विकल्प संकल्प विन, तिष्ठो सुख आधार। १४२।
ओं ह्रीं स्वात्मनिष्ठिताय नमो अर्घं।

स्व आतममें मग्न हैं, स्व आतम लवलीन।
परमें भ्रमण करैं नहीं, सन्त चरण शिर दीन। १४३।
ओं ह्रीं ब्रह्मनिष्ठाय नमो अर्घं।

तीन लोकके नाथ हो, इन्द्रादिक कर पूज।
तुम सम और महानता, नहि धारत हैं दूज। १४४।
ओं ह्रीं महाज्येष्ठाय नमो अर्घं।

तीन लोक परसिद्ध हो, सिद्ध तुम्हारा नाम।

सर्व सिद्धता ईश हो, पूरहु सबके काम । १२५ ।

ओं ह्रीं सिद्धात्मने नमः अर्घं ।

स्वै आतम थिरता धरें, नहीं चलाचल होय ।

निश्चल परम सुभावमें, भये प्रकृतिको खोय । १२६ ।

ओं ह्रीं दृढात्मने नमः अर्घं ।

क्षयोपशम नानाविधं, क्षायक एक प्रकार ।

सो तुममें नहीं और सो, वन्दूं भाव लगार । १२७ ।

ओं ह्रीं एकविद्याय नमः अर्घं ।

कर्म पटलके नाशतें, निर्मल ज्ञान उदार ।

तुम महान विद्या धरें, वन्दूं योग संभार । १२८ ।

ओं ह्रीं महाविद्याय नमो अर्घं ।

परम पूज्य परमेश पद, पूरण ब्रह्म कहाय ।

पायो सहज महान पद, वन्दूं तिनके पाय ।१२९ ।

ॐ ह्रीं महापदेश्वराय नमो अर्घं ।

पंच परम पद पाईयो, ब्रह्म नाम है एक ।
पूजूं मन वच काय करि, नाशै विघन अनेक । १५० ।

ओं ह्रीं पंचब्रह्मणे नमः अर्घं ।

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाव ।
हीनाधिक विन विलसते, वन्दूं ध्यान लगाय । १५१ ।

ओं ह्रीं सर्वस्वाय नमो अर्घं ।

पूरन पंडित ईश हो, बुद्धि धाम अभिराम ।
वन्दूं मन वच काय करि, पाऊं मोक्ष सुधाम ॥ १५२ ॥

ओं ह्रीं सर्वविदेश्वराय नमः अर्घ ।

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चाल ।
शुभ परिणाम धरैं सदा, वंदूं नित नमि भाल ॥ १५३ ॥

ओं ह्रीं शुचये नमो अर्घं ।

ज्ञान दृश, आवर्ण विन, दीपो नंताऽनंत।
सकल ज्ञेय प्रतिभास है, तुम्हें नमें निन संत ॥ १५४ ॥
ओं ह्रीं अनन्तदीप्तये नमो अर्घं।

इक इक गुण प्रति छेदको, पार न पायो जाय।
सो गुण रास अनंत हैं, वंदूं तिनके पाय। १५५।
ॐ ह्रीं अनन्तात्मने नमः अर्घं।

अहमिंद्रनकी शक्ति जो, करो अनंती रास।
सो तुम शक्ति अनंत गुण, करें अनंत प्रकाश। १५६।
ॐ ह्रीं अनन्तशक्तये नमः अर्घं।

छायक दर्शन जोतिमें, निरावरण परकास।
सो अनंत द्रग तुम धरो, नमें चरण नित दास। १५७।
ओं ह्रीं अनन्तदृशे नमः अर्घं।

जाकी शक्ति अपार है, हेतु अहेतु असिद्ध।

ॐ ह्रीं महापदेश्वराय नमो अर्घं ।

पंच परम पद पाईयो, ब्रह्म नाम है एक ।
पूजूं मन वच काय करि, नाशै विघन अनेक । १५० ।

ओं ह्रीं पंचब्रह्मणे नमः अर्घं ।

निज विभूति सर्वस्व तुम, पायो सहज सुभाव ।
हीनाधिक विन विलसते, वन्दूं ध्यान लगाय। १५१।

ओं ह्रीं सर्वस्वाय नमो अर्घं ।

पूरन पंडित ईश हो, बुद्धि धाम अभिराम ।
वन्दूं मन वच काय करि, पाऊं मोक्ष सुधाम ॥ १५२ ॥

ओं ह्रीं सर्वविद्येश्वराय नमः अर्घ ।

मोह कर्म चकचूरतें, स्वाभाविक शुभ चाल ।
शुभ परिणाम धरैं सदा, वंदूं नित नमि भाल ॥ १५३ ॥

ओं ह्रीं शुचये नमो अर्घं ।

इन्द्री मन व्यापारमें, जाको नहिं अधिकार।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार। १६७।
ओं ह्रीं अलक्षात्मने नमः अर्घं।

नहीं चलाचल अचल हैं, नहीं भ्रमण थिर धार।
सो शिवपुरमें वसत हैं, वन्दूं भक्ति विचार। १६८।
ओं ह्रीं अचलस्थानाय नमः अर्घं।

पर कृत निमित्त विगाड है, सोई दुविधा जान।
सो तुममें नहीं लेश है, निराबाध परमाण। १६९।
ओं ह्रीं निराबाधाय नमः अर्घं।

जैसे हो तुम आदिमें, सोई हो तुम अन्त।
एक भांति निवसैं सदा, वंदत हैं नित सन्त। १७०।
ॐ ह्रीं अनिज्ञानात्मने नमः अर्घं।

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि मानैं आन।

फरश आ दे पन इन्द्रियां, द्वार ज्ञान कछु नाहिं।
यातें अतिइन्द्रिय कहो, जिन-सिद्धांतके मांहि ॥ १७६ ॥
ओं ह्रीं अतींद्रियाय नमः अर्घं।

एक ज्ञान असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अंश।
केवल तुमको धर्म है, नमें तुम्हें नित संत ॥ १७७ ॥
ओं ह्रीं केवलाय नमः अर्घं।

लौकिक जन या लोकमें, तुम सारूं गुण नाहिं।
केवल तुमहीमें वसे, मैं वन्दूं हूं ताहि ॥ १७८ ॥
ओं ह्रीं केवलअवलोकनाय नमः अर्घ।

लोक अनंत कहो सही, तातें नन्तानन्त।
है अलोक अवलोकियो, तुम्हें नमें नित संत ॥ १७९ ॥
ओं ह्रीं लोकालोकअवलोकाय नमः अर्घं।

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैलो लोकालोक।
भिन्न भिन्न सब जानियो, नमूं चरण दे धोक ॥ १८० ॥

ओं ह्रीं विवृताय नमः अर्घं ।

विन सहाय निज शक्ति हो, प्रगटो आपोआप ।
स्वयं वुद्ध स्वे सिद्ध हैं, नमत नसे सब पाप ॥ १८१ ॥

ओं ह्रीं केवलाय नमः अर्घं ।

सूक्षम सुभग सुभावनें, मन इन्द्रि नहिं ज्ञान ।
वचन अगोचर गुण धरें, नमूं चरन दिन रात ॥ १८२ ॥

ओं ह्रीं अव्यक्ताय नमः अर्घं ।

कर्म उदय दुख भोगवैं, सर्व जीव संसार ।
तिन सबको तुम ही शरण, देहो सुक्ख अपार ॥ १८३ ॥

ओं ह्रीं सर्वशरणाय नमः अर्घं ।

चिंतवनमें आवै नहीं, पार न पावै कोय ।
महा विभवके हो धनी, नमूं जोर कर दोय ॥ १८४ ॥

ओं ह्रीं अचिंत्यविभवाय नमः अर्घं ।

छहो कायके वासको, विश्व कहैं सब लोक ।

तिनके थंभनहार हो, राज काजके जोग ॥ १८५ ॥

ओं ह्रीं विश्वभृते नमः अर्घं ।

घट घटमें राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठोर ।
विश्व रूप जीवात्म हो, तीन लोक सिरमोर ॥ १८६ ॥

ओं ह्रीं विश्वरूपात्मने नमः अर्घं ।

घट घटमें नितव्याप्त हो, ज्यों घट दीपक जोति ।
विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिवसुख होत ॥ १८७ ॥

ॐ ह्रीं विश्वआत्मने नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजें आन ।
यातें सुखिया हो सदी, मैं पूजूं धरि ध्यान ॥ १८८ ॥

ओं ह्रीं विश्वतोमुखाय नमः अर्घं ।

ज्ञान द्वार सब जगतमें, व्यापि रहे भगवान ।
[illegible] प्रति भासत हैं, ज्यं नभमें शशि भान ॥ १८९ ॥

पर [illegible]

सोई परमानन्द है, भोगे निज आधार। १९८।

ओं ह्रीं महाभोगाय नमः अर्घं।

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न बाधा होय।
अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं वन्दूं हूं सोय। १९९।

ओं ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घं।

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीडा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, वंदत रिपुगणनाश। २००।

ॐ ह्रीं महादेवाय नमः अर्घं।

महा भाग शिवगति लहो, तासम भाग न और।
सोई भगवत हे प्रभू, नमूं पदाम्बुज ठौर। २०१।

ओं ह्रीं भगवते नमः अर्घं।

तीन लोकके पूज्य हैं, तीन लोकके स्वामि।

ऑं ह्रीं महाबोधाय नमः अर्घं ।

कर्मयोगतें जगतमें, जीव शक्तिको नाश ।
स्वयं वीर्य अद्भुत धरैं, नमूं चरण सुखरास ॥ १९४ ॥

ओं ह्रीं महावीर्याय नमो अर्घं ।

छायक लब्धि महान है, ताको लाभ लहाय ।
महा लाभ यातें कहै, वन्दूं तिनके पांय ॥ १९५ ॥

ॐ ह्रीं महालाभाय नमः अर्घं ।

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति ।
ताको नाश भये विमल, दीप्त रूप उद्योत ॥ १९६ ॥

ओं ह्रीं महोदयाय नमः अर्घं ।

ज्ञानानन्द स्वै लक्ष्मी, भोगै बाधाहीन ।
पंचम गतिमें वास है नमूं जोग पद लीन ॥ १९७ ॥

ओं ह्रीं महाभोगगुणाय नमः अर्घं ।

पर निमित्त जामें नहीं, स्व आनन्द अपार।
सोई परमानन्द है, भोगैं निज आधार। १९८।

ओं ह्रीं महाभोगाय नमः अर्घं।

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न बाधा होय।
अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं वन्दूं हूं सोय। १९९।

ओं ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घं।

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीडा करत विलास।
महादेव कहलात हैं, वंदत रिपुगणनाश। २००।

ॐ ह्रीं महादेवाय नमः अर्घं।

महा भाग शिवगति लह्यो, तासम भाग न और।
सोई भगवत है प्रभू, नमूं पदाम्बुज ठौर। २०१।

ओं ह्रीं भगवते नमः अर्घं।

तीन लोकके पूज्य हैं, तीन लोकके स्वामि।

२ नुको रूप किये, तातैं अरहन्त नाम । २०२ ।

ॐ ह्रीं अर्हन्ताय नमः अर्घं ।

सुगना पूजन चरण युग, द्रव्य अर्घ जुत भाव ।
महाअर्घ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव ॥ २०३ ॥

ॐ ह्रीं महाअर्घाय नमः अर्घं ।

शत इन्द्रन करि पूज्य हो, अहमिंद्रनके ध्येय ।
द्रव्य भाव करि पूज्य हो, पूजक पूज्य अभेय ॥ २०४ ॥

ॐ ह्रीं सर्वार्चिताय नमः अर्घं ।

छहो द्रव्य गुणपर्यंको, जानत भेद अनन्त ।
महाप्रभु त्रिभुवन धनी, पूजत हैं नित सन्त ॥ २०५ ॥

ॐ ह्रीं भूतार्थयज्ञपुरुषाय नमः अर्घं ।

तुमसों कछु छाना नहीं, तीन लोकका भेद
दर्पण मत सम भास है, नमन करममल छेद ॥ २०६ ॥

ॐ ह्रीं कृतार्थगताय नमः अर्घं ।

सकल ज्ञेयके ज्ञाननं, हो सबके सिरमोर ।
पुरुषोत्तम तुम नाम है, तुम लग सबकी दौर ॥ २०७ ॥

ॐ ह्रीं कृतार्थकृतपुण्याय नमः अर्घं ।

स्वयं बुद्ध शिवमग चरन, स्वयंबुद्ध अविरुद्ध ।
शिवमगचारी निज जजें, पावें आतम शुद्ध । २०८ ।

ॐ ह्रीं पूज्याय नमः अर्घं ।

सब देवनके देव हो, तीन लोकके पूज्य ।
मिथ्या तिमिर निवारते, सूरज और न दूज । २०९ ।

ॐ ह्रीं भट्टारकाय नमः अर्घं ।

सुरनर मुनिके पूज्य हो, तुमसे श्रेष्ठ न कोय ।
तीन लोकके स्वामि हो, पूजत शिवसुख होय । २१० ।

ॐ ह्रीं तत्रभवते नमः अर्घं ।

महा पूज्य महा मान्य हो, स्वयंबुद्ध अविकार।
मन वच तनतैं ध्यावते, सुरनर भक्ति विचार। २११।
ओं ह्रीं अग्रमाते नमः अर्घं।

महात्मा केवल कहो, सो दीखे तुम मांहि।
महा नामसों पूजिये, संसारी दुख नाहिं। २१२।
ओं ह्रीं महते नमः अर्घं।

पूज्यपणा नहीं औरमें, इक तुमहीमें जान।
महा अर्ह तुम गुण प्रभू, पूजत हो कल्याण। २१३।
ॐ ह्रीं महार्हाय नमो अर्घं।

अचल शिवालयके विषें, अमित काल रहे राज।
चिरंजीवी कहलात हो, वन्दूं शिवसुख काज। २१४।
ओं ह्रीं नवायुषे नमो अर्घं।

मरण रहित शिवपद लसै, काल अनंतानन्त।

दीर्घायु तुम नाम है, वन्दन नितप्रति संत । २१५ ।

ओं ह्रीं दीर्घायुषे नमः अर्घं ।

सकल तत्त्वके अर्थ कहि, निरबाध निरशंस ।
धर्ममार्ग प्रगटाइयो, नमत मिटै दुख अंश । २१६ ।

ओं ह्रीं अर्थवाचे नमो अर्घं ।

मुनिजन नितप्रति ध्यावते, पावैं निज कल्याण ।
सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊं धरि ध्यान । २१७ ।

ओं ह्रीं सज्जनयाऽऽराध्याय(आराध्याय) नमः अर्घं ।

शिवसुख जाको ध्यावतें, पावैं सन्त मुनीन्द्र ।
परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र । २१८ ।

ओं ह्रीं परमाराध्याय नमः अर्घं ।

पंचकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण ।
देवन करि पूजत भये, पायो शिवसुख थान । २१९ ।

ओं ह्रीं पंचकल्याणपूजिताय नमः अर्घं ।

देखो लोकालोकको, हस्त रेखकी सार ।
इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखै उदय अपार । २२० ।

ओं ह्रीं द्रगविशुद्धिगुणोदयाय नमः अर्घं ।

छायक समकितको धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र ।
तुम पूजन परभावतैं, अन्तिम होंय जिनेन्द्र । २२१ ।

ॐ ह्रीं सुरार्च्चिताय नमः अर्घं ।

निर्विकल्प शुभ चिह्न है, वीतराग सो होय ।
सो तुम पायो सहज ही. नमूं जोर कर दोय ।

ॐ ह्रीं दिवौकसे सुखदात्मने नमः अर्घं ॥ २२२ ॥

स्वर्ग आदि सुख थानके हो परकाशन हार ।
दीप्त रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार ॥

ॐ ह्रीं दिवौजसे नमः अर्घं ॥ २२३ ॥

मंगल साज समाज मम, उपजावैं दिन रात।

ॐ ह्रीं नित्योपनारोपचिताय नमः अर्घं ॥ २२८ ॥

केवलज्ञान सुलक्षनी, धरन महा विस्तार।

चरणकमल सुर मुनि जजैं, हम पूजन हितधार।

ॐ ह्रीं पद्मप्रभाय नमः अर्घं ॥ २२९ ॥

निहु विधि तन मल धोयकर, उज्वल निर्मल होय।

निज आलयमें बसत हैं, शुद्ध सिद्ध हैं सोय।

ॐ ह्रीं निखिलाय नमः अर्घं ॥ २३० ॥

असंख्यात परदेशमें, अन्य प्रदेश न होय।

स्वयं स्वभाव स्वज्ञान हैं, मैं प्रणमामी सोय।

ॐ ह्रीं स्वयंप्रभाय नमः अर्घं ॥ २३१ ॥

पूज्य यह आराधना, जो कुछ भक्ति प्रमाण।

मुझ हो सबके मूल हो, नमन असंगत ज्ञान। २३२।

सूर्य सुमेरु समान हो, या सुरतरुको ठार ।
महा पुन्यकी राश हो, सिद्ध नमूं कर जोर । २३३ ।

ओं ह्रीं पुन्यांगाय नमः अर्घ्यं ।

ज्यूं सूरज मध्याह्नमें, छिपे अनंत प्रभाव ।
त्यों तुम ज्ञानकला छिपे, मिथ्या तिमिर अभाव । २३४ ।

ओं ह्रीं भास्वते नमः अर्घ्यं ।

चतुर्विधि केवलमें सदा, तुम सम देव न आन ।
निजानंदमें केलिकर, पूजत हूं धरि ध्यान । २३५ ।

ओं ह्रीं अद्भुतकेलाय नमः अर्घ्यं ।

विश्व ज्ञान युगपत धरैं, ज्यूं दर्पण आकार ।
स्वपर प्रकाशक हो सही, नमूं भक्ति उरधार । २३६ ।

ओं ह्रीं विश्वज्ञानमूर्तये नमः अर्घ्यं ।

मन स्वरूप मन ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान ।

पूज.　नित त्रिभ्वजन, देव मान परमान। २३७।
ॐ ह्रीं विश्वदेवाय नमः अर्घं।

सृष्टीको सुख करत हो, हरण दुक्ख भववास।
मोक्ष लक्ष्मी देत हो, जन्म जरा मृत नास। २३८।
ओं ह्रीं सृष्टिनिर्माणाय नमः अर्घं।

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार।
मोक्ष लहै सो नेमतें, मैं पूजूं निरधार
ॐ ह्रीं महसाक्षदर्गात्मवाय नमः अर्घं ॥२३९॥

संपूरण निज शक्तिके, हे परताप अनन्त।
सो तुम विस्तारण करो, नमैं चरण नित संत।
ओं ह्रीं सर्वशक्तये नमः अर्घं ॥२४०॥

ऐरावतपर रूढ़ हैं, देव नृत्यता मांड।
पूजत हैं सो भक्तिसों, मटि भवार्णव हांड।
ओं ह्रीं [illegible]

सुरनर चारण मुनि जजें, सुलभ गमन आकाश ।
परिपूरण दर्शन हैं, पूरें मनकी आश ।

ओं ह्रीं सर्वामरनरचारणादिमितोन्नताय नमः अर्घं ॥२४२॥

रक्षक हो षट कायके, शरणागति प्रतिपाल ।
सर्वव्यापि निज ज्ञानतें, पूजत होय निहाल ।

ओं ह्रीं विष्णवे नमः अर्घं ॥ २४३ ॥

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेरु विख्यात ।
जन्म अभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात ।

ओं ह्रीं स्नानपीठकृतगिरये नमः अर्घं ॥ २४४ ॥

आकरि नगर, तीर्थमें, माने मुनिगण मान्य ।
तुम मत कीन सु श्रेष्ठ है असत्यार्थ है अन्य ।

ओं ह्रीं तीर्थस्थानरूपाख्याने नमः अर्घं ॥ २४५ ॥

लोकत्रान गिलानता, मेटे मल शरीर ।

आतम प्रक्षालित कियो, तुम्हीं ज्ञान सु नीर।
ओं ह्रीं स्नानवास्तरताय नमः अर्घं ॥ २४६ ॥

तारण तरण सुभाव हैं, तीन लोक विख्यात।
ज्यूं सुगन्ध चम्पाकली, गन्धमई कहलात ॥ २४७ ॥
ओं ह्रीं गन्धपवित्रितत्रिलोकाय नमः अर्घं।

सूक्षम तथा स्थूलमें ज्ञान करै परवेश।
जाको तुम जानों नहीं, खाली रहो न देश ॥ २४८ ॥
ओं ह्रीं वज्रसूनये नमः अर्घं।

औरन प्रति आनन्द करि, निर्मल शुचि आचार।
आप पवित्र भये प्रभू, कर्मधूलिको टार ॥ २४९ ॥
ओं ह्रीं शुचिश्रवे नमः अर्घं

कर्मों करि किरतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय।
करपर कर राजत प्रभू, वन्दूं हूं युग पाय ॥ २५० ॥
ॐ ह्रीं कृतार्थफलदत्वाय नमः अर्घं।



वर्धन इन्द्र अयान है, इष्ट मान उर माहिं ।
कर्म नाशि शिवपुर बसे, मैं बन्दूं हूं ताहि ॥ २५१ ॥

ओं ह्रीं शक्रप्रणताय नमः अर्घं ।

मघवा जाके नृत्य करि, ताके तृप्ति महान ।
सो मैं उनको जजत हूं, होय कर्मकी हान ॥ २५२ ॥

ओं ह्रीं इन्द्रनृत्यतृप्तिकाय नमः अर्घं ।

शची इन्द्र अरु काम ये, जिन शासनके दास ।
निश्चय मनमें नमन कर, नित वंदन पद जास ॥ २५३ ॥

ओं ह्रीं शचीविस्मापिताय नमः अर्घं ।

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय ।
जन्म सुफल मानें सदा, हमपर होउ सहाय ॥ २५४ ॥

ओं ह्रीं शक्रारब्धानंदनृत्याय नमः अर्घं ।

धन सुवर्णतें लोकमें, पूरण इच्छा होय ।
चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय ॥ २५५ ॥



ओं ह्रीं देवपूर्णमनोरथाय नमः अर्घं ।

तुम आज्ञामें हैं सदा, आप मनोरथ मान ।
इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान ॥ २५६ ॥

ओं ह्रीं आज्ञार्थइन्द्रकृतमनोरथाय नमः अर्घं ।

सब देवनमें श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज ।
सब देवनके इष्ट हो, वंदत सुलभ सु काज ॥ २५७ ॥

ओं ह्रीं देवश्रेष्ठाय नमः अर्घं ।

तीन लोकमें उच्च हो, तीन लोक परशंस ।
सो शिवगति पायो प्रभू, जजत कर्म विध्वंस ॥ २५८ ॥

ओं ह्रीं शिवोधमाय नमः अर्घं ।

जगत्पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट ।
हित उपदेशक परम गुरु, मुनिजन माने इष्ट ॥ २५९ ॥

ओं ह्रीं अर्हंजगत्पूज्यशिवनाथाय नमः (द्रीधारयुण धुरुघजगने) अर्घं ।

मन्ति, भ्रम, ३

... ने लिया, आप स्वयं ...

ओं ह्रीं स्वयंभुवे नमः अर्घं ।

सर्वागम्य अद्भुत महा, और लहै नहिं कोय ।
...ज्ञान ज्यों उछाहमां, मैं पूजूं हूं सोय । २६१ ।

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

ताको अंत न हो कभी, ज्ञान लक्ष्मी नाथ ।
सोई शिवसुख के धनी, नमूं भाव धरि माथ । २६२ ।

ओं ह्रीं अनन्तश्रीभृते नमः अर्घं ।

गणधरादि नित ध्यावते, पावें शिवपुर वास ।
परम योग तुम नाम है, पूरै मनकी आश । २६३ ।

ओं ह्रीं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घं ।

परम ब्रह्मका लाभ हो, तुम पद पायो सार ।
त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय व्यवहार । २६४ ।

ओं ह्रीं ब्रह्मविदे नमो अर्घं ।

सर्व तत्त्वके आदिमें, ब्रह्म तत्त्व परधान ।
तिसके ज्ञाता हो प्रभू, मैं वंदूं धरि ध्यान । २६५ ।

ओं ह्रीं ब्रह्मतत्त्वाय नमो अर्घं ।

द्रव्य भाव द्वै विधि कहो, यज्ञ जजनकी रीति ।
सो सब तुमहीं हेत हैं, रचत नशै सब (ईति) भीति । २६६ ।

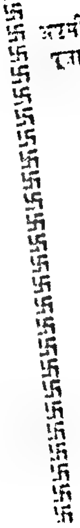
ओं ह्रीं यज्ञपतये नमः अर्घं ।

महादेव शिवनाथ हो, तुमको पूजत लोक ।
मैं पूजूं हूं भावसों, मेटो मनको शोक । २६७ ।

ओं ह्रीं (यज्ञाय) शिवनाथाय नमः अर्घं ।

कृत्य भए निज भावमें, सिद्ध भये सब काज ।
पायो निज पुरुषार्थको, वंदूं सिद्ध समाज ॥ २६८ ॥

ओं ह्रीं कृतविभवे नमः अर्घं ।



[illegible] जिन [illegible] [illegible] जिन [illegible] केवलज्ञान ॥ १९९ ॥
[illegible] जिन [illegible] [illegible] [illegible]
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] भेद हो आप ।
[illegible] [illegible], [illegible] हो निजात ॥ २०० ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] [illegible] [illegible] हो, श्रुत जिनश्रुत होय ।
[illegible] जिन श्रुत करें, [illegible] मनिकों [illegible] ॥ २०१ ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] सामान्य [illegible], श्रुत विशेष अनेक ।
[illegible] [illegible] करो, वंदूं जिन [illegible] ॥ २०२ ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] श्रुत [illegible] करें, [illegible] [illegible] उदार ।
[illegible] श्रुत [illegible], [illegible] करि [illegible] ॥ २०३ ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

मगन रहो निज तत्त्वमें, द्रव्य भाव विधि नाश।
जो है सो है विविध विध, नमूं अचल अविनाश ॥ २७४ ॥
ॐ ह्रीं भावाय नमः अर्घं ।

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादिक करि पूज्य।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नहीं है दूज्य ॥ २७५ ॥
ॐ ह्रीं महापतये नमः अर्घं ।

महाभाग सरधानतें, तुम अनुभव करि जीव।
सो सेवत पुन पाप तज, निजसुख लहै सदीव ॥ २७६ ॥
ॐ ह्रीं महायज्ञाय नमः अर्घं ।

यह विधि उपदेशमें, तुम अग्रेश्वर जान।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान ॥ २७७ ॥
ॐ ह्रीं अग्रयाजकाय नमो अर्घं ।

तीन लोकके पूज्य हो, भक्ति भाव उर धार।
धर्म अर्थ अरु मोक्षके, [illegible] तुम हो सार ॥ २७८ ॥

ॐ ह्रीं जगत्पूज्याय नमो अर्घं ।

दया मोह पुन्य पापतें, दूर भये स्वतंत्र ।
ब्रह्मज्ञानमें लय सदा, जपूं नाम तुम मंत्र ॥ २७९ ॥

ॐ ह्रीं दयागराय नमो अर्घं ।

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य ।
महा साधु सुख हेतुतें, साधे हैं निज साध्य ॥ २८० ॥

ओं ह्रीं पूज्यार्हाय नमो अर्घं ।

निज पुरुषारथ सधनको, तुमको अर्चत जक्त ।
मनवांछित दातार हो, शिव सुख पावै भक्त ॥ २८१ ॥

ओं ह्रीं जगदार्च्चिताय नमो अर्घं ।

ध्यावत हैं नितप्रति तुम्हें, देव चार परकार ।
तुम देवनके देव हो, नमूं भक्ति उर धार ॥ २८२ ॥

ॐ ह्रीं देवाधिदेवाय नमो अर्घं ।

इन्द्र स न न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव।
ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव ॥ २८३ ॥

ओं ह्रीं शक्रार्चिताय नमः अर्घं ।

तुम देवनके देव हो, सदा पूजने योग्य।
जे पूजत हैं भावसों, भोगें शिवसुख भोग ॥ २८४ ॥

ओं ह्रीं देवदेवाय नमः अर्घं ।

तीन लोक सिरताज हो, तुमसे बड़ा न कोय।
सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मनकी खोय ॥ २८५ ॥

ओं ह्रीं जगतगुरवे नमः अर्घं ।

जोहो सोही तुम सही, नहीं समझमें आय।
सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणीको पाय ॥ २८६ ॥

ओं ह्रीं संहृत देवसंघाचार्याय नमः अर्घं ।

ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, ताके हो भरतार।

स्वसुगंध वासित रहो, कमल गंधकी सार ॥ २८७ ॥

ॐ ह्रीं पद्मनन्दाय नमः अर्घं ।

सब कुवादि वादी हते, वज्र शैल उनहार ।

विजय ध्वजा फहरात है, वन्दूं भक्ति विचार ॥ २८८ ॥

ॐ ह्रीं जयध्वजाय नमः अर्घं ।

दशोंदिशा परकाश है, तिनकी ज्योति अमंद ।

भविजन कुमुद विकाश हो, वन्दूं पूरण चन्द ॥ २८९ ॥

ओं ह्रीं भामण्डलाय नमः अर्घं ।

चमरनि करि भक्ति करें, देव चार परकार ।

यह विभूति तुम ही विषैं, वन्दूं पाप निवार । २९० ।

ॐ ह्रीं चतुःषष्टी चामराय नमः अर्घं ।

देव दुंदुभी शब्द करि, सदा करैं जयकार ।

तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार । २९१ ।

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नहीं देव ।
ध्यावत हैं नित भावसों, मोक्ष लहैं स्वयमेव ॥ २८३ ॥
ॐ ह्रीं शक्राधिनाथ नमः अर्घं ।
तुम देवनके देव हो, सदा पूजने योग्य ।
जे पूजत हैं भावसों, भोगैं शिवसुख भोग ॥ २८४ ॥
ॐ ह्रीं देवदेवाय नमः अर्घं ।
तीन लोक सिरताज हो, तुमसे बड़ा न कोय ।
सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मनकी खोय ॥ २८५ ॥
ॐ ह्रीं जगतगुरवे नमः अर्घं ।
जोही सोही तुम सही, नहीं समझमें आय ।
सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणीको पाय ॥ २८६ ॥
ॐ ह्रीं गहन देशनपारगाय नमः अर्घं ।
ज्ञानानन्द स्वरूपसों, ताके हो भरतार ।

स्वसुगंध वासित रहो, कमल गंधकी सार ॥ २८७ ॥

ॐ ह्रीं पद्मनन्दाय नमः अर्घं ।

सव कुवादि वादी हते, वज्र शैल उनहार ।
विजय ध्वजा फहरात है, वन्दूं भक्ति विचार ॥ २८८ ॥

ॐ ह्रीं जयध्वजाय नमः अर्घं ।

दशोंदिशा परकाश है, तिनकी ज्योति अमंद ।
भविजन कुमुद विकाश हो, वन्दूं पूरण चन्द ॥ २८९ ॥

ओं ह्रीं भामण्डलाय नमः अर्घं ।

चमरनि करि भक्ति करें, देव चार परकार ।
यह विभूति तुम ही विषैं, वन्दूं पाप निवार । २९० ।

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठी चामराय नमः अर्घं ।

देव दुंदुभी शब्द करि, सदा करैं जयकार ।
तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार । २९१ ।

ओं ह्रीं देवदुंदुभोवाद्याय नमः अर्घं ।

तुम वाणी सब मनन कर, समझत हैं इक सार ।
अक्षरार्थ नहीं भ्रम पड़े, संशय मोह निवार । २९२ ।

ओं ह्रीं वाड्स्पष्टाय नमः अर्घं ।

धनपति रचि तुम आसनं, महा प्रभूता जान ।
तथा स्व आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान । २९३ ।

ओं ह्रीं लब्धागनाय नमः अर्घं ।

तीन लोकके नाथ हो, तीन छत्र विख्यात ।
भव्य जीव तुम छांहमें, सदा स्व आनन्द पात । २९४ ।

ओं ह्रीं छत्रत्रयाय नमः अर्घं ।

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनों काल मझार ।
तुम सुगन्ध दश दिश रमी, भविजन भ्रमर निहार । २९५ ।

ॐ ह्रीं [illegible]

देव रचित-आशोक है, वृक्ष महा रमणीक।
समोशरण शोभा प्रभु, शोक निवारण ठीक। २९६।

ओं ह्रीं दिव्याशोकाय नमः अर्घ।

मानस्तम्भ निहारके, कुमतिन मान गलाय।
समोशरण प्रभुता चहे, नमूं भक्ति उर लाय॥ २९७।

ओं ह्रीं मानस्थम्भाय नमः अर्घं।

सुरदेवी संगीत कर, गावें शुभ गुण गान।
भक्ति भाव उरमें जगो, वन्दत श्री भगवान। २९८।

ओं ह्रीं संगीताहाय नमः अर्घं।

मंगल सूचक चिह्न हैं, कहे अष्ट परकार।
तुम समीप राजत सदा, नमूं अमंगल टार। २९९।

ओं ह्रीं अष्टमंगलाय नमः अर्घं।

भविजन तरिये तीर्थसों, तुम हो श्री भगवान।

धर्मनाथ जगमें प्रगट, तारण तरण जिहाज ।
तीन लोक अधिपति कहो, वन्दूं सुखके काज ॥ ३०९ ॥
ओं ह्रीं तीर्थाधिपसे नमो अर्घं ।

श्रावक या मुनि धर्मके, हो दिखलावनहार ।
अन्य लिंग नहीं धर्मके, बुधजन लखो विचार ॥ ३१० ॥
ओं ह्रीं तीर्थविधाय नमो अर्घं ।

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्ही मार्ग सुखदान ।
अन्य कुभेषिनमें नहीं, धर्म यथारथ ज्ञान ॥ ३११ ॥
ओं ह्रीं सत्यतीर्थकराय नमो अर्घं ।

सेवन योग्य सु जगमें, तुम्हो तीर्थ हो सार ।
सुरनर मुनि सेवन करें, मैं वन्दूं दुख टार ॥ ३१२ ॥
ओं ह्रीं तीर्थसेव्याय नमः अर्घं ।

भव समुद्र भवसे तिरें, सो तुम तीर्थ कहाय ।

हो तारण तिहूं लोकमें, सेवत हूं तुम पाय ॥ ३१३ ॥

ओं ह्रीं तीर्थतारकाय नमः अर्घं ।

सर्व अर्थ परकाश करि, निर इच्छा तुम बैन ।
धर्म सुमार्ग प्रवर्त्तको, तुम राजत हो ऐन । ३१४ ।

ओं ह्रीं सत्यवाक्याधिपाय नमः अर्घं ।

धर्म मार्ग परगट करे, सो शासन कहलाय ।
सो उपदेशक आप हो, तिस संकेत कराय । ३१५ ।

ओं ह्रीं सत्यशासनाय नमः अर्घं ।

अतिशय करि सर्वज्ञ हो, ज्ञानावरण विनाश ।
नेम रूप भवि सुनत ही, शिवसुख करत प्रकाश । ३१६ ।

ओं ह्रीं अप्रतिशासनाय नमः अर्घं ।

कहै कथंचित धर्मको, स्यात वचन सुखकार ।
सो प्रमाणतें साधियो, नय निश्चय व्यवहार । ३१७ ।

ओं ह्रीं स्याद्वाय नमः अर्घं।

निर अक्षर वाणी खिरै, दिव्य मेघकी गर्ज्जं।
अक्षरार्थ हो परिणवै, सुन भव्यन मन अर्ज्जं। ३१८।

ओं ह्रीं दिव्यध्वनये नमः अर्घं।

नय प्रमाण नहीं हतत है, तुम परकाशे अर्थ।
शिवसुखके साधन विषैं, नहीं गिनत है व्यर्थ। ३१९।

ओं ह्रीं अव्याहतार्थाय नमः अर्घं।

करै पवित्र सु आतमा, अशुभ कर्म मल खोय।
पहुंचावै उंची सुगति, तुम दिखलायो सोय। ३२०।

ॐ ह्रीं पुण्यवाचे नमो अर्घं।

तत्त्वारथ तुम भासियो, सम्यक विषैं प्रधान।
मिथ्या जहर निवारणं, अमृत पान समान। ३२१।

ओं ह्रीं अर्थवाचे नमः अर्घं।

देव अतिशयमों विघ्न हो, अक्षराय सब होय।
दिव्य ध्वनि निरन्तर करै, संशय नमको खोय। ३२२।

ओं ह्रीं अर्द्धमागधीयुक्ताय नमो अर्घं।

सब जीवनको इष्ट है, मोक्ष निजानन्द वास।
सो तुमने दिखलाइयो, संशय मोह विनाश। ३२३।

ओं ह्रीं इष्टवाचे नमः अर्घं।

नय प्रमान हो कहत है, द्रव्य पर्याय सु भेद।
अनेकांत मार्ग महा, वस्तु भेद निर्वेद। ३२४।

ओं ह्रीं अनेकांतदर्शिने नमः अर्घं।

दुर्नय कहत एकांतको, ताको अन्त कराय।
सम्यग्ज्ञान प्रगटाइयो, पूजूं तिनके पाय। ३२५।

ॐ ह्रीं दुर्नयांतकाय नमः अर्घं।

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार।

स्याद्वाद सम न्यायतैं, भविजन तारे पार। ३२६।
ओं ह्रीं एकांतध्वांतभेदाय नमः अर्घं।

जो है सो निज भावमें, रहै सदा निरवार।
मोक्ष साध्यमें सार है, सम्यक् त्रिपै अपार। ३२७।
ओं ह्रीं तत्त्वाय नमः अर्घं।

निज गुण निज परयायमें, सदा रहो निरभेद।
शुद्ध बुद्ध अव्यक्त हो, पूजूं हूं निरखेद। ३२८।
ॐ ह्रीं अव्यक्तनाय नमः अर्घं।

स्यानकार उद्योतकर वस्तु धर्म निरशंस।
नासुध्वजा निर्विघ्नको, भाषो विधि विध्वंस। ३२९।
ओं ह्रीं स्यात्कारध्वजावाने नमः अर्घं।

परम्पराई धर्मको उपदेशो श्रुत द्वार।
भवि भवसागर तीर लह, पायो निज सुखकार। ३३०।

ॐ ह्रीं अर्हताय नमः अर्घं ।

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुष कृत, है अनादि परमान ।
सो तुम भाख्यो है सही, यह पर्याय सु जान । ३३१ ।

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

जहाँ जन्मानल होत हो, जिम वाणीके होत ।
[illegible] मैं नमूं हो जिना, मोक्षमार्ग उद्योत । ३३२ ।

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

गुण सन्तान अनादि है, शाश्वत नित्य स्वरूप ।
तुमको नमूं भावसों, पाऊं निज—गुण रूप । ३३३ ।

ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घं

[illegible] या और विधि, नहीं निकला जात ।
[illegible] सामान्य है, सब ही गुनकी खान । ३३४ ।

[illegible]

ओं ह्रीं अनिरुद्धाय नमः अर्घं।

नय विवक्षने मथन है, सप्त भंग निरबाध।
सो तुम भाख्यो नमत हूं, वस्तु रूपको साध। ३३५।

ओं ह्रीं सप्तभंगवाचिने नमः अर्घं।

अक्षर विन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त।
भविजन निज सरधानतें, पावैं जगतें मुक्त। ३३६।

ओं ह्रीं अवर्णगिरे नमः अर्घं।

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सब भाषा परकाश।
तुम मुखतें खिरकै करै, भर्म तिमिरको नाश। ३३७।

ओं ह्रीं सर्वभाषामयगिरे नमः अर्घं।

कहने योग्य समर्थ मय, अर्थ करै परकाश।
तुम वाणी मुखतें खिरे, करै भरम तम नाश। ३३८।

ओं ह्रीं व्यक्तगिरे नमः अर्घं।

तुम योगा नहीं [illegible] ।
तुम्हारा मुखतें खिरें, संशय तमको खोय । ३३९ ।

ॐ ह्रीं अमोघवाचिने नमः अर्घं ।

वचन अनन्त पर्याय हैं, वचन अगोचर ज्ञान ।
तुम दिव्यध्वनि सहज ही, हरो कुमति मतिवान । ३४० ।

ॐ ह्रीं अवाच्यानंतवाचिने नमः अर्घं ।

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार ।
तुम महिमा तुमही विषैं, मुक्त नागो भवपार । ३४१ ।

ॐ ह्रीं अवाचे नमः अर्घं ।

गुण [illegible] वचन न कहि सकैं, असदमती छद्मस्थ ।
[illegible] [illegible] प्रगटाइयो, मेटी कुमति समस्त ॥ ३४२ ॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] गुण [illegible] हैं, हितमित भविजन हेत ।

सो मुनिजन तुम ध्यावते, पावैं शिपुर खेत ॥ ३४३ ॥

ओं ह्रीं अनृतगिरे नमः अर्घं ।

नहीं सांच नहीं झूठ है, अनुभय वचन कहात ।
सो तीर्थंकर ध्वनि कही, सत्यारथ सत वात ॥ ३४४ ॥

ओं ह्रीं सत्यानुभयगिरे नमः अर्घं ।

मिथ्या अर्थ प्रकाश करे, कुगिरा ताको नाम ।
सत्यारथ उद्योत करै, सुगिरा तुम अभिराम ॥ ३४५ ॥

ॐ ह्रीं सुगिरे नमः अर्घं ।

जोजन एक चहूं दिशा, हो वाणी विस्तार ।
श्रवण सुनत भविजन लहै, आनंद हिये अपार ॥ ३४६ ॥

ओं ह्रीं योजनव्यापितगिरे नमः अर्घं ।

निर्मल क्षीर समान है, गौर श्वेत तुम वैन ।
पाप मलिनता रहित है, सत्य प्रकाशक ऐन ॥ ३४७ ॥



तीर्थ तत्त्व जो नहीं तजो, तारण भविजन यान ।
यातैं तीर्थंकर प्रभू, नमत पाप मल हान ॥ ३४८ ॥

ओं ह्रीं तीर्थतत्त्वगिरे नमः अर्घं ।

उत्तम तीर्थ पर्याय करि, आतम तत्त्वको जान ।
सो तुम सत्यारथ कहो, मुनिजन उत्तम मान ॥ ३४९ ॥

ॐ ह्रीं परमार्थगवे नमः अर्घं ।

भव्यनिको श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन ।
मैं वन्दूं हूं भावसों, धर्म बतायो एन ॥ ३५० ॥

ओं ह्रीं भव्यैकश्रवणगिरे नमः अर्घं ।

संशय विभ्रम मोहको, नाश करो निर्मूल ।
सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल ॥ ३५१ ॥

ओं ह्रीं सद्गवे नमः अर्घं ।

तुम वाणीमें प्रगट है, सब सामान्य विशेष ।
नानाविध सुन तर्कमें, संशय रहै न शेष ॥ ३५२ ॥

ओं ह्रीं त्रिगवे नमः अर्घं ।

परम कहै उतकृष्टको, अर्थ होय गम्भीर ।
सो तुम वाणीमें खिरे, वन्दत भवदधि तीर ॥ ३५३ ॥

ओं ह्रीं परमार्थगवे नमः अर्घं ।

मोह क्षोभ परशांत हो, तुम वाणी उरधार ।
भविजनको सन्तुष्ट कर, भव आताप निवार ॥ ३५४ ॥

ओं ह्रीं प्रशांतगवे नमः अर्घं ।

बारह सभा सु प्रश्न कर, समाधान करतार ।
मिथ्यामति विध्वंस करि, वन्दूं मनमें धार ॥ ३५५ ॥

ओं ह्रीं प्राश्निकगिरे नमः अर्घं ।

महापुरुष महादेव हो, सुरनर पूजन योग ।
वाणी सुन मिथ्यात तज, पावें शिवसुख भोग ॥ ३५६ ॥

ओं ह्रीं याज्यधुते नमः अर्घं ।

निगम उपदेशक मुख्य, मनमें अर्घ विचार ।

साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार ॥ ३५७ ॥

ओं ह्रीं श्रुते नमः अर्घं ।

तुम समान तिहुं लोकमें, नहीं अर्थ परकाश ।
भविजन सम्बोधे सदा, मिथ्यामतिको नाश ॥ ३५८ ॥

ओं ह्रीं महाश्रुते नमः अर्घं ।

जो निज आतम-कल्याणमें, वरने सो उपदेश ।
धर्म नाम तिस जानियो, वन्दूं चरण हमेश ॥ ३५९ ॥

ॐ ह्रीं धर्मश्रुते नमः अर्घं ।

जिन शासनके अधिपती, शिव मारग बतलाय ।
वा भविजन सन्तुष्ट करि, वन्दूं तिनके पांय । ३६० ।

ओं ह्रीं श्रुतपतये नमः अर्घं ।

धारण हो उपदेशके, केवलज्ञान संयुक्त ।
शिवमारग दिखलात हो, तुमको वन्दन युक्त ॥ ३६१ ॥

ओं ह्रीं श्रुतधुराय नमः अर्घं ।

जैसो है तैसो कहै, परम्पराय सु रीत।
सत्यारथ उपदेशतें, धर्म मार्गकी रीत ॥ ३६२ ॥

ओं ह्रीं ध्रुवश्रुतये (धृतये) नमः अर्घं।

मोक्षमार्गको देखियो औरनको दिखलाय।
तुम सम हितकारक नहीं, वन्दूं हूं तिन पांय ॥ ३६३ ॥

ओं ह्रीं निर्वाणमार्गोपदेशकाय नमः अर्घं।

स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावकको धर्म।
तुमको वन्दत सुख महा, लहै ब्रह्मपद पर्म।

ओं ह्रीं यतिश्रावकमार्गदेशकाय नमो अर्घं। ३६४।

तत्त्व अतत्त्वसु जानियो, तुम सब ही परतक्ष।
निज आतम सन्तुष्ट हो, देखो लक्ष अलक्ष ॥

ओं ह्रीं तत्त्वमार्गदृशे नमः अर्घं। ३६५।

सार तत्त्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश।

ओं ह्रीं मारनत्रयमार्धाय नमः अर्घं । ३६६ ।

आप तीर्थ औरन प्रती, सर्व तीर्थ करतार ।
उत्तम शिवपुर पहुंचना, यही विशेषण सार ।

ओं ह्रीं तीर्थकर्त्तीर्थकराय नमः अर्घं । ३६७ ।

दृष्टा लोकालोकके, रेखा हस्त समान ।
युगपत सबको देखिये, किया भर्म तम हान ।

ओं ह्रीं दृष्टाय नमः अर्घं । ३६८ ।

जिनवाणीके रसिक हो, तासों रति दिन रैन ।
भोग उपभोग करो सदा, वन्दत हैं सुखचैन ।

ओं ह्रीं वाग्मीश्वराय नमः अर्घं । ३६९ ।

जो संसार–समुद्रसे, पार करन सो धर्म ।
तुम उपदेश्या धर्मकूं, नमन मिटे भव भर्म ।

ओं ह्रीं धर्मशासनाय नमः अर्घं । ३७० ।

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार ।

शिवलक्ष्मीके नाथ हो, पूजूं तिनके पाय ॥ ३८९ ॥
ॐ ह्रीं महानंदाय नमः अर्घं ।

तुम सम कविवर जगतमें, और न दूजो कोय ।
गणधरसे श्रुतकार भी, अर्थ लहैं हैं सोय ॥ ३९० ॥
ॐ ह्रीं कवीन्द्राय नमः अर्घं ।

हित करता षट् कायके, महा इष्ट तुम वैन ।
तुमको वन्दूं भावसों, मोक्ष महासुख दैन ॥ ३९१ ॥
ओं ह्रीं महेष्टाय नमः अर्घं ।

मोक्ष दान दातार हो, तुम सम कौन महान ।
तीन लोक तुमको जजैं, मनमें आनन्द ठान ॥ ३९२ ॥
ओं ह्रीं महानदाताराय नमः अर्घं ।

द्वादशांग श्रुतको रचै, गणधरसे कविराज ।
तुम आज्ञा शिर धारके, नमूं निजातम काज ॥ ३९३ ॥

ओं ह्रीं कलीश्वराय नमः अर्घं ।

देव महा ध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव ।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पुजूं गुनचाव ॥ ३१४ ॥

ॐ ह्रीं दुंदुभीश्वराय नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाय ।
त्रिभुवन नाथ कहात हो, हम पूजत नित पांय ॥ ३१५ ॥

ओं ह्रीं त्रिभुवननाथाय नमः अर्घं ।

गणी मुनीश फणीशपति, कल्पेन्द्रनके नाथ ।
अहमिन्द्रनके नाथ हो, तुमहि नमूं धरि माथ ॥ ३१६ ॥

ओं ह्रीं महानाथाय नमः अर्घं ।

भिन्न भिन्न देखो सकल, लोकालोक अनन्त ।
तुम सम दृष्टि न औरकी, तुमैं नमैं नित सन्त ॥ ३१७ ॥

ओं ह्रीं परदृष्टाय नमः अर्घं ।

यति जगके भरतार जग, मुनि गणमें परधान।
तुमको पूजें भावसों, होत सदा कल्याण ॥ ३९८ ॥
ॐ ह्रीं जगत्पतये नमः अर्घं।

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार।
वरतैं धम पुरुषार्थमें, पूजत हूं सुखकार ॥ ३९९ ॥
ॐ ह्रीं स्वामिने नमः अर्घं।

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ।
मालिक हो तिहुं लोकके, पूजनीक सत्यार्थ ॥ ४०० ॥
ॐ ह्रीं कर्त्रे नमः अर्घं।

तीन लोकके नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल।
चार संघके अधिपती, पूजूं हूं नम भाल ॥ ४०१ ॥
ॐ ह्रीं भर्त्रे नमः अर्घं।

तुम सम और विभव नहीं, धरो चतुष्ट अनन्त।

क्यों न करो उद्धार अब, दास कहावे सन्त ॥ ४०२ ॥

ओं ह्रीं विभवे नमो अर्घं ।

जामें विघन न हो कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूत ।
पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजत शुभ करतूत ॥ ४०३ ॥

ओं ह्रीं प्रभवे नमो अर्घं ।

तुम सम शक्ति न औरकी, शिवलक्ष्मीको पाय ।
भोगे सुख स्वाधीन कर, वन्दूं तिनके पाय ॥ ४०४ ॥

ॐ ह्रीं ईश्वराय नमो अर्घं ।

तुमसे अधिक न और में, पुरुषारथ कहुं पाइ ।
हो अधीश सब जगतके, वन्दूं तिनके पांइ ॥ ४०५ ॥

ओं ह्रीं अधीश्वराय नमो अर्घं ।

अग्रेश्वर चउ संघके, शिवनायक शिरमोर ।

२७

पूजत हुं नित भावसों, शीश दोऊ कर जोर ॥ ४०६ ॥
ओं ह्रीं अधीशाय नमो अर्घं ।

छायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान ।
तुमसे शिवमारग चले, मैं वन्दूं धरि ध्यान ॥ ४०७ ॥
ॐ ह्रीं अधोशानाय नमः अर्घं ।

सहज सुभाव प्रयत्न विन, तीन लोक आधीश ।
शुद्ध सुभाव विराजते, वन्दूं पद धर शीश ॥ ४०८ ॥
ओं ह्रीं अधिशिवाय नमः अर्घं ।

स्वयं बुद्ध शिवनाथ हो, धर्म तीर्थ करतार ।
तुम सम सुमति न को धरे, मैं वन्दूं निरधार ॥ ४०९ ॥
ओं ह्रीं ईशित्रे नमः अर्घं ।

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूरण ब्रह्म प्रकाश ।
पूरण पद पायो प्रभु, पूजत पाप विनाश ॥ ४१० ॥

ओं ह्रीं ईशानाय नमः अर्घं ।

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय ।
तीन लोक अतिशय सुख, पायो वंन्दू ताय ॥ ४११ ॥
ओं ह्रीं अधिपतये नमो अर्घं ।

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान ।
मैं पूजों हों भावसों, सबसे बड़े महान ॥ ४१२ ॥
ॐ ह्रीं ईशाय नमः अर्घं ।

सूरज सम परकाश कर, मिथ्या तम परहार ।
भविजन कमल प्रबोधको, पायो निज हितकार ॥ ४१३ ॥
ओं ह्रीं इनाय नमो अर्घं ।

क्रीडा करि शिवमार्गमें, पाय परम पद आप ।
आज्ञा भंग न हो कभी, वन्दत नाशे पाप ॥ ४१४ ॥
ओं ह्रीं इन्द्राय नमो अर्घं ।

पूजत हुं नित भावसों, शीश दोऊ कर जोर ॥ ५०६ ॥
ओं ह्रीं अधीशाय नमो अर्घं ।

छायक सुमति सुहावनी, बीजभूत निम ज्ञान ।
तुमसे शिवमारग चले, मैं वन्दूं धरि ध्यान ॥ ५०७ ॥
ॐ ह्रीं अधीशानाय नमः अर्घं ।

सहज सुभाव प्रयत्न विन, तीन लोक आधीश ।
शुद्ध सुभाव विराजते, वन्दूं पद धर शीश ॥ ५०८ ॥
ओं ह्रीं अधिशिवाय नमः अर्घं ।

स्वयं बुद्ध शिवनाथ हो, धर्म तीर्थ करतार ।
तुम सम सुमति न को धरे, मैं वन्दूं निरधार ॥ ५०९ ॥
ओं ह्रीं ईशिय नमः अर्घं ।

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूरण ब्रह्म प्रकाश ।
पूरण पद पायो सय, पूजत पाप विनाश ॥ ५१० ॥

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय।
तीन लोक अतिशन्त सुख, पायो वंन्दू ताय ॥ ४११ ॥
ओं ह्रीं अधिपतये नमो अर्घं।

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान।
मैं पूजों हों भावसों, सबसे बड़े महान ॥ ४१२ ॥
ॐ ह्रीं ईशाय नमः अर्घं।

सूरज सम परकाश कर, मिथ्या तम परहार।
भविजन कमल प्रबोधको, पायो निज हितकार ॥ ४१३ ॥
ओं ह्रीं ईनाय नमो अर्घं।

क्रीडा करि शिवमार्गमें, पाय परम पद आप।
आज्ञा भंग न हो कभी, वन्दत नाशे पाप ॥ ४१४ ॥
ओं ह्रीं इन्द्राय नमो अर्घं।

उत्तम हो तिहुं लोकमें, सबके हो शिरताज ।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूं आतम काज ॥ ४१५ ॥

ॐ ह्रीं अधिपाय नमः अर्घं ।

अधिक भूतिके हो धनी, सर्व सुखी निरधार ।
सुरनर तुम पदको लहैं, पूजत हूं सुखकार ॥ ४१६॥

ॐ ह्रीं अधिभुवे नमः अर्घं ।

तीन लोक कल्याण कर, धर्म मार्ग बतलाय ।
सब देवनके देव हो, महादेव सुखदाय ॥ ४१७ ॥

ॐ ह्रीं महेश्वराय नमः अर्घं ।

महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय ।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय ॥ ४१८ ॥

ॐ ह्रीं महेशाय नमो अर्घं ।

परम ऋद्धो उत्कृष्टको, धर्म तीर्थ बतलाय ।

परमेश्वर यातैं भये, वन्दूं तिनके पांय ॥ ४१९ ॥
ओं ह्रीं परमेश्वराय नमः अर्घं।

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ।
महा विभव ऐश्वर्यको, धरो नमूं निज माथ ॥ ४२० ॥
ओं ह्रीं विभवमहेशाय नमः अर्घं।

चार प्रकारनगें सदा, देव तुम्हें शिर नाय।
सब देवनमें श्रेष्ठ हो, नमूं युगल तुम पांय ॥ ४२१ ॥
ओं ह्रीं अधिदेवाय नमः अर्घं।

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवनके देव।
यां महान पदवी धरो, तुम पूजत हूं एव ॥ ४२२ ॥
ओं ह्रीं महादेवाय नमः अर्घं।

शिवमारग तुममें सही, देव पूजने योग।
तुम गुण है सहचारणी, और कुदेव अयोग ॥ ४२३ ॥

उत्तम हो तिहुं लोकमें, सबके हो शिरताज।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजूं आतम काज ॥ ४१५ ॥
ॐ ह्रीं अधिपाय नमः अर्घं ।

अधिक भूतिके हो धनी, सर्व सुखी निरधार ।
सुरनर तुम पदको लहैं, पूजत हूं सुखकार ॥ ४१६॥
ॐ ह्रीं अधिभुवे नमः अर्घं ।

तीन लोक कल्याण कर, धर्म मार्ग बतलाय ।
सब देवनके देव हो, महादेव सुखदाय ॥ ४१७ ॥
ॐ ह्रीं महेश्वराय नमः अर्घं ।

महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय ।
महा जीव पूजें चरण, सब जन शरण सहाय ॥ ४१८ ॥
ॐ ह्रीं महेशाय नमो अर्घं ।

परम कहो उतकृष्टको, धर्म तीर्थ ...

परमेश्वर यातैं भये, वन्दूं तिनके पांय ॥ ४१९ ॥

ओं ह्रीं परमेश्वराय नमः अर्घं ।

तुम समान कोई नहीं, जग ईश्वर जगनाथ ।
महा विभव ऐश्वर्यको, धरो नमूं निज माथ ॥ ४२० ॥

ओं ह्रीं विभवमहेशाय नमः अर्घं ।

चार प्रकारनमें सदा, देव तुम्हें शिर नाय ।
सब देवनमें श्रेष्ठ हो, नमूं युगल तुम पांय ॥ ४२१ ॥

ओं ह्रीं अधिदेवाय नमः अर्घं ।

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवनके देव ।
यो महान पदवी धरो, तुम पूजत हूं एव ॥ ४२२ ॥

ओं ह्रीं महादेवाय नमः अर्घं ।

शिवमारग तुममें सही, देव पूजने योग ।
तुम गुण हे सहचारणी, और कुदेव अयोग ॥ ४२३ ॥

ओं ह्रीं देशाय नमो अर्घं ।

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार ।
त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूं निरधार ॥ ४२४ ॥

ओं ह्रीं भुवनेश्वराय नमः अर्घं ।

विश्वपती तुमको नमें, निज कल्याण विचार ।
सर्व विश्वके तुम पती, मैं पूजूं उर धार ॥ ४२५ ॥

ओं ह्रीं विश्वेशाय नमः अर्घं ।

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द ।
षट्कायक आह्लादकर, जिम कुमोदनी चन्द ॥ ४२६ ॥

ओं ह्रीं विश्वभूतेशाय नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमको पूजन आन ।
यातें तुम विश्वेश हो, सांच नमूं धर ध्यान ॥ ४२७ ॥

पूजों नित भावसों, करो भवार्णव पार ॥ ४३२ ॥

ओं ह्रीं लोकनाथाय नमो अर्घं ।

पूजनीक जगमें सही, तुम्हें कहैं सब लोग ।
धर्म मार्ग प्रगटित कियो, यातैं पूजत योग ॥ ४३३ ॥

ॐ ह्रीं जगत्पतये नमः अर्घं ।

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोय ।
तिनमें तुम उतकृष्ट हो, तुम्हें देत नित धोक ॥ ४३४ ॥

ओं ह्रीं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घं ।

तुम समान समरथ नहीं, तीन लोकमें और ।
स्वयं शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमोर ॥ ४३५ ॥

ॐ ह्रीं लोकेशाय नमः अर्घं ।

जगत नाथ जग ईश हो, जगपति पूजें पाय ।
मैं पूजूं निज भाव युत, तारण तरण सहाय ॥ ४३६ ॥

मोहादिक रिपु जीतिके, विजयवन्त कहलाय।
जैत्र नाम परसिद्ध है, वन्दूं तिनके पाय।

ॐ ह्रीं जैत्राय नमः अर्घं।४४१।

रक्षक हो षट् कायके, कर्म शत्रु क्षयकार।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजूं सुखकार।

ओं ह्रीं जिष्णवे नमो अर्घं।४४२।

करता हो विधि कर्मके, हरता पाप विशेष।
पुन्य पाप सु विभाग कर, भ्रम नहीं राखो लेश।

ओं ह्रीं कर्त्रे नमः अर्घं।४४३।

स्वानन्द ज्ञान विनाश विन, अचल सुथिर रहे राज।
अविनाशी अविकार हो, वन्दूं निज हित काज।

ओं ह्रीं अविनश्वराय नमः अर्घं।४४४।

इन्द्रादिक पूजन करत, महा भक्ति उर धार।

ॐ ह्रीं लोकजिने नमो अर्घं । ४४९ ।

विश्व नाम संसार है, जन्म मरण सो होय ।
सोई व्याधि विनासियो, जजूं जोर कर दोय ।

ओं ह्रीं विश्वजिने नमो अर्घं । ४५० ।

विश्व कषाय निवारके, जग सम्बन्ध विनाश ।
जनम मरण विनु ध्रुव लसैं, नमूं ज्ञान परकाश ।

ओं ह्रीं विश्वजैत्रे नमो अर्घं । ४५१ ।

विश्व यास तुम जीतियो, विश्व नमावै शीश ।
पूजत हैं हम भक्तिसों, जयवन्तो जगदीश ॥ ४५२ ॥

ॐ ह्रीं विश्वजिने नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक जिनको नमैं, ते तुम शीश नवाय ।
विश्वजीत तुम नाम हैं, शरणागत सुखदाय ॥ ४५३ ॥

ॐ ह्रीं विश्वजिज्जेत्रे नमः अर्घं ।

तीन लोककी लक्ष्मी, तुम चरणांबुज ठौर ।
यातें सब जग जीतिके, राजत हो शिर मौर ॥ ४५४ ॥
ॐ ह्रीं जगज्जेत्रे नमः अर्घं ।
तीन लोक कल्याण कर, कर्मशत्रुको जीत ।
भव्यन प्रति आनन्द कर, मेटन तिनकी भीति ॥ ४५५ ॥
ॐ ह्रीं जगज्जिष्णवे नमः अर्घं ।
जग जीवनको अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर ।
धर्म मार्ग प्रगटाय कर, पहुंचायो शिव ठौर ॥ ४५६ ॥
ॐ ह्रीं जगन्नेत्राय नमः अर्घं ।
ब्रह्मादिक जिन जीतियो, सोई जगजय नाम ।
सो तुम पद पायो महा, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ४५७ ॥
ॐ ह्रीं जगज्जयाय नमः अर्घं ।
जो तुम धर्म न प्रगट करि, जिय आनन्द न होय ।

भये कल्यान कर, तुम पद प्रणमूं सोय ॥ ४५८ ॥

ॐ ह्रीं अग्रण्ये नमः अर्घं ।

रक्षा करि षट कायकी, विषय कषाय न लेश ।
त्रास हरो जमराजको, जयवन्तो गुण शेष ॥ ४५९ ॥

ओं ह्रीं दयामूर्तये नमः अर्घं ।

सत्य असत्य लखन करै, सोई नेत्र कहाय ।
पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, सांचे नेत्र सुखाय ॥ ४६० ॥

ॐ ह्रीं दिव्यनेत्राय नमः अर्घं

सुरनर मुनि आज्ञानितैं, जानैं निज कल्याण ।
ईश्वर हो सब जगतके, आनन्द सम्पति खान ॥ ४६१ ॥

ॐ ह्रीं अधीश्वराय नमः अर्घं ।

धर्म्माभास मनोक्तके, मूल नाश कर दीन ।
सत्य मार्ग चलाइयो, कियो भव्य सुख लीन ॥ ४६२ ॥

अतुल वीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार।
तुम सम बल नहीं और है, हो असहाय अधार। ४६७।
ओं ह्रीं याजरे नमः अर्घं।

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ वरताय।
स्वै सुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय। ४६८।
ओं ह्रीं वृषाय नमः अर्घं।

हिंसाको वर्जित कियो, जे अपराध महान।
परिग्रह अर आरंभके, त्यागी श्री भगवान। ४६९।
ओं ह्रीं परिग्रहत्यागीजिनाय नमः अर्घं।

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पायो स्वयं उपाय।
सांचे हो वश करणको, जगमें मंत्र कहाय। ६७०।
ॐ ह्रीं मंत्रकृते नमः अर्घं।

जिनके कछु शुभ चिह्न हैं, दीप अनोग्न स्वरूप।

त्र थल जाय सुवास लहि, धर्म द्रव्य सहकार। ४७५।

ओं ह्रीं निस्तमस्काय नमः अर्घं।

मुनि ध्यावै पावै सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान।
पावै निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान। ४७६।

ओं ह्रीं परमध्येयज्ञिनाय नमः अर्घं।

रक्षक हो जगके सदा, धर्म दान दातार।
पोषित हो सब जीवके, वन्दूं भाव लगार। ४७७।

ओं ह्रीं जगत्तापहराय नमः अर्घं।

मोह प्रचंड वली जयो, अतुल वीर्य भगवान।
शीघ्र गमन करि शिव गये, नमूं हेत कल्याण। ४७८।

ओं ह्रीं अतिजयाय नमः अर्घं।

तीन लोक शिर मोर सब, पूजत हैं हरषाय।
परमेश्वर हो जगतके, वंदत हूं निम पाय। ४७९।

ॐ ह्रीं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घं ।

लोकशिखरपर अचल तिन, राजत हैं तिहूं काल ।
सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल ।४८०।

ॐ ह्रीं विश्वाग्रणे नमः अर्घं ।

विश्वभूति प्राणीनके, ईश्वर हैं भगवान ।
सबके शिरपर पग धरैं, सब आन तिन मान ।४८१।

ॐ ह्रीं विश्वभूतेशाय नमः अर्घं ।

मोक्ष संपदा होत हो, तिन अक्षय ऐश्वर्य ।
कौन मूढ़ कौड़ी लहै, सर्वोत्तम धनवर्य ।४८२।

ॐ ह्रीं विभवाय नमः अर्घं ।

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्हीं, और जीव हैं रंक ।
तुम सम नाहैं औरको, ऐसो को नृप बंक ।४८३।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनेश्वराय नमः अर्घं ।

उत्तरोत्तर तिहुं लोकमें, दुर्लभ लब्धि कराय ।
तुम पद दुर्लभ कठिन हे, महा भाग सो पाय । ४८४ ।
ओं ह्रीं त्रिजगदुर्लभाय नमः अर्घं ।

पद्धवारी परणामसों, अभ्युदय पूरण पाय ।
भई अनन्त विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय । ४८५ ।
ओं ह्रीं अभ्युदयाय नमः अर्घं ।

तीन लोक मंगल करण, दुखहारण सुखकार ।
हमको मंगल द्यो महा, पूजों वारम्वार । ४८६ ।
ओं ह्रीं त्रिजगन्मंगलोदयाय नमः अर्घं ।

आप धर्मके सामने, और धर्म लुप जाय ।
धर्म चक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तव पाय । ४८७ ।
ओं ह्रीं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घं ।

सत्य शक्ति तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर ।

हे प्रसिद्ध इस जगतमें, कर्म शत्रु शिरमोर । ४८८ ।

ओं ह्रीं सद्योजाताय नमः अर्घं ।

मंगलमय मंगल करण, तीन लोक विख्यात ।
सुमरण ध्यान सुकरत ही, सकल पाप नश जात ॥ ४८९ ॥

ओं ह्रीं त्रिलोकमंगलाय नमः अर्घं ।

द्रव्य भाव दऊ वेद विन, स्वातम रति सुख मान ।
पर आलिंगन रतिकरण, निरइच्छक भगवान ॥ ४९० ॥

ओं ह्रीं अवेदाय नमः अर्घं ।

घातिरहित स्वपर दया, निजानन्द रसलीन ।
सुखसों अवगाहन करैं, सन्त चरण आधीन ॥ ४९१ ॥

ओं ह्रीं अप्रतिघाताय नमः अर्घं ।

निजानन्द स्वैदेशमें, खंड खंड नहीं होय ।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूं भ्रम खोय ॥ ४९२ ॥

ओं ह्रीं अछेद्याय नमः अर्घं ।

रे न सु शुभ नहीं, और नाम विख्यात।
कभू न जगमें जन्म फिर, सोई दृढ़ कहलात ॥ ४९३ ॥

ओं ह्रीं दृढ़ीयसे नमः अर्घं ।

जन्म मरणके कष्टसे, सर्व लोक भयवंत।
ताको नाश अभय करण, तुम्हें नमें जिय संत ॥ ४९४ ॥

ओं ह्रीं अभयंकराय नमः अर्घं ।

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी, भोगत हो निरखेद।
महा भोग यातें भये, हैं स्वाधीन अखेद ॥ ४९५ ॥

ओं ह्रीं महाभोगाय नमः अर्घं ।

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उतकृष्ट।
परसों भिन्न अखिन्न हो, पायो पद अविनष्ट। ४९६।

ॐ ह्रीं निरुपमगुणस्वरूपाय नमः अर्घं ।

दश लक्षण शुभ धर्मके, राजसम्पदा भाग।
नायक हो जिन धर्मके, पूज नमें निजं योग। ४९७।

म ल्प नहीं भावमें, पूजत हों धरि चाव। ५०२।
ओं ह्रीं मामायिक्रिने नमः अर्घं।

निजानन्द सौ लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय।
अतुल वीर्य परभावतैं, परमादी नहीं होय। ५०३।
ओं ह्रीं निष्प्रमादाय नमः अर्घं।

है अनादि संतान करि, कभी भयो नहीं आदि।
नित्य शिवालय पूर्णता, वसै जगत अघ वादि॥ ५०४॥
ॐ ह्रीं अछताय नमः अर्घं।

पर पदार्थ नहीं इष्ट हैं, स्वैपदमें लवलीन।
विघ्न हरण मंगल करण, तुम पद मस्तक दीन॥ ५०५॥
ओं ह्रीं परमभाराय नमः अर्घं।

नित्य शौच संतोष मय, पर पदार्थसों रोक।
निश्चय सम्यक् भाव मय, है प्रधान यूं धोक॥ ५०६॥
ओं ह्रीं प्रधानाय नमः अर्घं।

ओं ह्रीं धरणाधीशराय नमः अर्घं ।

रागादिक मल नाशिके, ध्यान सु धर्म लहाय ।
अचल रूप राजै सदा, वन्दूं मन वच काय ॥ ५१२ ॥

ॐ ह्रीं धर्मध्याननिष्ठाय नमः अर्घं ।

निजानन्दमें मगन हैं, पर पद राग निवार ।
समदृष्टी राजन सदा, हमें करो भव पार । ५१३ ।

ओं ह्रीं समाधिराजाय नमः अर्घं ।

वीतराग निर्विकल्प हैं, ज्ञान उदय निरधांत ।
समरस भाव परम सुखी, नमत मिटें दुख अंत । ५१४ ।

ॐ ह्रीं स्फूर्तिसमरसीभावाय नमः अर्घं ।

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठौर ।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर । ५१५ ।

ओं ह्रीं एकीभावनयरूपाय नमः अर्घं ।

परम दिगम्बर मुनि महा, समदर्शी मुनिनाथ ।

क्रोध प्रकृति विनाशके, धरै क्षमा निज भाव।
समरस स्वादसु लहत है, चन्दूं शुद्ध स्वभाव ॥ ५३० ॥
ओं ह्रीं महाक्षमाय नमः अर्घं।

मोह रूप सन्ताप विन, शीतल महा स्वभाव।
पूरण सुख आकुल नहीं, चन्दूं मन धर चाव ॥
ॐ ह्रीं महाशीतलाय नमः अर्घं ॥ ५३१ ॥

मन इन्द्रियके क्षोभ विन, महा शांति सुस्वरूप।
स्वपद रमण स्वभाव नित, मैं वन्दूं शिवभूप ॥
ॐ ह्रीं महाशांताय नमः अर्घं ॥ ५३२ ॥

मन इन्द्रियको दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र।
स्वाभाविक स्वशक्ति करै, चन्दूं भये जितेन्द्र ॥
ओं ह्रीं महादमाय नमो अर्घं ॥ ५३३ ॥

पर पदार्थको संग तजि, ध्यावै निज पद माहिं।

... लव, महा तुष्ट सुखकार ॥

ॐ ह्रीं निश्रांताय नमो अर्घं ॥ ५३५ ॥

शांतिरूप निज शांति गुण, सो तुमहीमें पाय ।
निज मन शांति सुभाव धर, पूजन हूं युग पाय ।

ॐ ह्रीं प्रशांताय नमः अर्घं ॥ ५३६ ॥

मुनि श्रावक द्वै धर्मके, तुम अधिपति शिवनाथ ।
भविजनको आनंद करि, तुम्हें नवाऊं माथ ॥

ॐ ह्रीं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घं ॥ ५३७ ॥

दया नीति वरताइयो, सुखी किये जगजीव ।
कल्पित राग प्रसन्न नहीं, जानत मार्ग सदीव ॥

ॐ ह्रीं दयाध्वजाय नमः अर्घं ॥ ५३८ ॥

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर वाह्य अदेह ।
ज्ञान ज्योति घन नमत हूं, मन वच तन धरि नेह ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मयोनये नमो अर्घं ॥ ५३६ ॥

स्वयं वुद्ध अविरुद्ध हो, स्वयं ज्ञान परकाश ।
स्वै परभाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास ॥

ओं ह्रीं स्वयंबुद्धा नमो अर्घं ॥ ५४० ॥

रागादिक मल नाशियो, महापवित्र सुखाय ।
शुद्ध स्वभाव धरै करैं, सुरनर थुति न अघाय ॥

ओं ह्रीं पूतात्मने नमः अर्घं ॥ ५४१ ॥

वीतराग श्रद्धानता, संपूरण वैराग ।
द्वेष रहित शुभ गुण सहित, रहूं सदापग लाग ।

ओं ह्रीं स्नातकाय नमः अर्घं ॥ ५४२ ॥

माया मद आदिक हर, भय शुद्ध सुख खान।
निर्मल भाव थकी जजूं, होत पापकी हान ॥

ॐ ह्रीं अमदगामाय नमः अर्घ ॥ ५४३ ॥

अतुल वीर्य जा ज्ञानमें, सूर्य समान प्रकाश।
मोक्ष नाथ निज धर्म जुत, स्व ऐश्वर्य विलास ॥

ॐ ह्रीं परमैश्वर्याय नमः अर्घं ॥ ५४४ ॥

मत्सर क्रोध न ईरषा, परमें द्वेष सु भाव।
सो तुम नाशो सहज ही, निंदित दुखित विभाव।

ॐ ह्रीं वीतमत्सराय नमः अर्घं ॥ ५४५ ॥

धरम भार सिर धारकर, समाधान परकाज।
तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु, तारण तरण जिहाज।

ॐ ह्रीं धर्मनृपाय नमः अर्घ ॥ ५४६ ॥

क्रोध कर्म जडसे नसो, भयो क्षोभ सब दूर।
महा शांति सुखरूप हो, पूजत अघ सब चूर।

ओं ह्रीं अक्षोभाय नमः अर्घं ॥ ५४७ ॥

इष्टमिष्ट चादर भरी, त्रिगुत त्रिध कर खण्ड।
जिष्णु महा कल्याण कर, शिवमग भाग प्रचण्ड।

ओं ह्रीं महाविधिखण्डाय नमः अर्घं ॥ ५४८ ॥

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार।
जन्मकल्याणक इन्द्र कर, क्षीर नीर कर धार।

ओं ह्रीं अमृतोद्भवाय नमः अर्घं ॥ ५४९ ॥

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार।
मूर्तीक शुभ मंत्र हो, देव जजें हित धार।

ओं ह्रीं मंत्रमूर्तये नमः अर्घं ॥ ५५० ॥

सौम्य दिशा प्रगट नमी, जानि विरोधी जीव।

... सदीव ।
ओं ह्रीं निरंगोम्यमाताय नमो अर्घं ॥ ५५१ ॥

पराधीन इन्द्री विना, राग विरोध निवार ।
हो स्वाधीन न कर्णपर, स्वयं सिद्ध सुखकार ।
ओं ह्रीं स्वतंत्राय नमः अर्घं ॥ ५५२ ॥

ब्रह्मरूप नहीं बाह्य तन, संभव ज्ञान स्वरूप ।
स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप ।
ओं ह्रीं ब्रह्मसम्भवाय नमः अर्घं ॥ ५५३ ॥

आनंदधार सु मगन है, सब विकल्प दुख टार ।
पर आश्रित नहीं भाव है, पूजूं आनंद धार ।
ओं ह्रीं महाब्रह्मपताय नमः अर्घं ॥ ५५४ ॥

परिपूरण गुण सीम है, सर्व शक्ति भण्डार ।
तुमसे सुगुण न शेष हैं, जो न होय सुखकार ॥

ओं ह्रीं गुणांबुधये नमः अर्घं ॥ ५५५ ॥

ग्रहण त्यागको भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद ।
व्याधिकार है वस्तुमें, तुमें नमूं निरखेद ॥

ओं ह्रीं पुन्यपापनिरोधकाय नमः अर्घं ॥ ५५६ ।

सूक्षम रूप अलक्ष है, गणधर आदि अगम्य ।
आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अरम्य ॥

ओं ह्रीं अर्हं महाअगम्यसूक्ष्मरूपाय नमः अर्घं ॥ ५५७ ॥

अन्तरगुण स्वै आतमरस, ताको पान करात ।
पर प्रवेश नहीं रंच है, केवल मग्न सु जात ॥

ॐ ह्रीं सुगुप्तात्मने नमः अर्घं ॥ ५५८ ॥

स्वै कारक स्वै कर्णकर, स्वै पद स्वै आधार ।
सिद्ध कियो स्वै रस लियो, पूजत हूं हितकार ।

ओं ह्रीं सिद्धात्मने नमः अर्घं । ५५९ ।

निल उदै विन अस्त हो, पूरण दुति घन आप ।
प्रहै न गहु जास शशि, सो हो हर सन्ताप ।
ओं ह्रीं निष्कलंकाय नमः अर्घं । ५६० ।

लियो अपूरव लाभको, अचल भये सुखधाम ।
पूजत त्यों जे भावसों, पूरण होइ सब काम ॥
ओं ह्रीं महोदर्काय नमो अर्घं । ५६१ ।

है प्रशंस तिहुं लोकमें, तुम पुरुषार्थ उपाय ।
पायो पर्म सु धामको, पूजों तिनके पाय ॥
ॐ ह्रीं महोपायाय नमः अर्घं । ५६२ ।

गणधरादि जे जगतपति, तथा सुरेन्द्र सुरेश ।
तुमको पूजत भक्तिकरि, चरण धरें निज शीश ॥
ओं ह्रीं जगत्पितामहाय नमः अर्घं । ५६३ ।

तुमहीसों भवि सुख लहे, तुम विन दुख ही पाय ।

[illegible]

[illegible] ।
[illegible]

[illegible] ।
[illegible] ।
[illegible]

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]

[illegible]

[illegible]

ओं ह्रीं अरूजाय नमः अर्घं ।

यथायोग्य पद थिर सदा, यथायोग्य निज लीन ।
अविनाशी अविकार है, नमैं सन्त नित दीन ॥ ५६९ ॥

ॐ ह्रीं सदायोगाय नमः अर्घं ।

स्वामृत रसको पान करि, भोगत हैं निज स्वाद ।
पर निमित्त चाहैं नहीं, करै न तिनको याद ॥ ५७० ॥

ओं ह्रीं सदाभोगाय नमः अर्घं ।

निर उपाधि निज धर्ममें, सदा रहैं सुखकार ।
रत्नत्रयकी मूरती, अनागार आगार ॥ ५७१ ॥

ओं ह्रीं सदाधृतये नमः अर्घं ।

रागद्वेष नहीं मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव ।
ज्ञाता द्रष्टा जगतके, परसों नहीं लगाव ॥ ५७२ ॥

ओं ह्रीं परमौदासीनाय नमः अर्घं ।

आदि अन्त बिन वहत है, परम धार निरधार।
अन्तर परत न एक छिन, निज सुख परमाधार ॥ ५७३ ॥
ओं ह्रीं शाश्वते नमः अर्घं।

मूल देह आकृति रहे, हो नहिं अन्य प्रकार।
सत्याशन इम नाम हैं, पूजूं भक्ति लगार ॥ ५७४ ॥
ॐ ह्रीं सत्याशने नमः अर्घं।

परम शांति सुखमय सदा, क्षोभ रहित तिस स्वाम।
तीन काल प्रति शांति कर, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ५७५ ॥
ॐ ह्रीं शांतिनायकाय नमः अर्घं।

काल अनंतानंत करि, रुलो जीव जगमांहिं।
आत्मज्ञान नहीं पाइयो, तुम पायो है ताहि ॥ ५७६ ॥
ओं ह्रीं अपूर्वविद्याय नमः अर्घं।

यथाख्यात चारित्रको, जानो मानो भेद।

आत्मज्ञान केवल थकी, पायो पद निरभेद ॥ ५७७ ॥
ॐ ह्रीं योगज्ञायकाय नमो अर्घं ।

धर्मरूप सर्वेश हो, गजन शुद्ध स्वभाव ।
धर्ममूर्ति तुमको नमूं पाऊं मोक्ष उपाय ॥ ५७८ ॥
ॐ ह्रीं धर्ममूर्तये नमः अर्घं ।

सब आतम परदेशमें, अन्य मिलाप न होय ।
आकृति है निज धर्मकी, निज विभावको खोय ॥ ५७९ ॥
ॐ ह्रीं धर्मदेहाय नमः अर्घं ।

स्वामी हो निज आतमके, अन्य सहाय न पाय ।
स्वयं सिद्ध परमातमा, हम पर होउ सहाय ॥ ५८० ॥
ॐ ह्रीं धर्म नाथ नमः अर्घं ।

निज पुरुषारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार ।
करना था सो करि चुके, तिष्ठो सुख आधार ॥ ५८१ ॥

ओं ह्रीं कृतकृत्याय नमो अर्घं ।

असाधारण तुम गुण धरत, इन्द्रादिक नहीं पाय ।
लोकोत्तम बहु मान्य हो, वन्दूं हूं युग पाय ॥ ५८२ ॥

ओं ह्रीं गुणात्मकाय नमो अर्घं ।

तुम गुण परम प्रकाश कर, तीन लोक विख्यात ।
सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उघरात ॥ ५८३ ॥

ओं ह्रीं निरावरणगुणप्रकाशाय नमः अर्घं ।

समय मात्र नहीं आदि हैं, वहैं अनादि अनन्त ।
तुम प्रवाह इस जगतमें, तुम्हें नमैं नित सन्त ॥ ५८४॥

ओं ह्रीं निर्निमेषाय नमः अर्घं ।

योग द्वार बिन करम रज, चढै न निज परदेश ।
ज्यों बिन छिद्र न जल ग्रहे, नवका शुद्ध हमेश ॥ ५८५ ॥

ओं ह्रीं निराश्रवाय नमो अर्घं ।

परम ब्रह्म पद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश।
तीन लोकके जीव सब, पूजें चरण निवास ॥ ५८६ ॥
ओं ह्रीं महामहापतये नमः अर्घं।

द्रव्य पर्यार्थिक नय दोऊ, साधत वस्तु स्वरूप।
गुण अनन्त अवरोध कर, कहत सरूप अनूप ॥ ५८७ ॥
ॐ ह्रीं गुणनाय नमः अर्घं।

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूर।
शरण गही तुम चरणकी, करो ज्ञान दुति पूरि ॥ ५८८ ॥
ओं ह्रीं शरणये नमः अर्घं।

तुम सम और न जगतमें सत्यारथ तत्त्वज्ञ।
सम्यग्ज्ञान प्रभावतें, हो अदोष सर्वज्ञ ॥ ५८९ ॥
ओं ह्रीं तत्त्वज्ञानाय नमो अर्घं।

तीन लोक हितकार हो, शरणागति प्रतिपाल।

दर्शनि मन आनन्द करि, वन्दूं दीनदयाल ॥ ५९० ॥

ॐ ह्रीं महाभिग्राय नमो अर्घं ।

समता सुखमें मगन हैं, राग द्वेष संक्लेश ।
तासो नाश सुखी भए, युग युग जयो जिनेश ॥ ५९१ ॥

ओं ह्रीं साम्यभावधारकजिनाय नमः अर्घं ।

निरावरण निज ज्ञानमें, संशय विभ्रम नाहिं ।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशते, वस्तु प्रमाण दिखाय ॥ ५९२ ॥

ओं ह्रीं प्रक्षीणबन्धाय नमः अर्घं ।

एक रूप परकाश कर, दुविधि भाव विनशाय ।
पर निमित्त लवलेश नहीं, वन्दूं तिनके पाय ॥ ५९३ ॥

ॐ ह्रीं निर्द्वन्द्वाय नमो अर्घं ।

मुनि विशेष स्नातक कहे, परमातम परमेश ।
सुख व्यापक निर्वाण पद, पावै भविक हमेश ॥ ५९४ ॥

ॐ ह्रीं परमर्षये नमः अर्घं ।

पंच प्रकार शरीर विन, दीस रूप निजरूप ।
सुर मुनि मन रमणीय हैं, पूजत हूं शिवभूप ॥

ॐ ह्रीं अनंगाय नमः अर्घं । ५६५ ।

छय प्रकार बन्धन रहित, वन्दूं मोक्ष सरूप ।
भविजन बन्ध विनाशकर, देहो मोक्ष अनूप ॥

ॐ ह्रीं निर्वाणाय नमः अर्घं । ५६६ ।

सुगुण रत्नकी राशके, आप महा भण्डार ।
अगम अथाह विराजते, वन्दूं भाव विचार ॥

ॐ ह्रीं सागराय नमः अर्घं । ५६७ ।

मुनिजन ध्यावैं भावयुत, महा मोक्षपद साध ।
सिद्ध भये मैं नमत हूं, चहूं संघ आराध ॥

ॐ ह्रीं महासाधवे नमो अर्घं । ५६८ ।

जोति प्रतिभासमें, रागादिक मल नाहिं।
विशद अनूपम लसत हो, दीप्त ज्योति शिव राह॥
ओं ह्रीं विमलभावाय नमो अर्घं। ५९९।
द्रव्यभाव मल नाश कर, शुद्ध निरञ्जन देव।
निज आतममें रमत हो, आश्रय विन स्वयमेव॥
ओं ह्रीं शुद्धात्मने नमः अर्घं। ६००।
शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ।
श्रीधर नाम कहात हो, हरिहर नावत माथ॥
ॐ ह्रीं श्रीधराय नमः अर्घं। ६०१।
मरणादिक भयसे सदा, रक्षित है भगवान।
स्वयं प्रकाश विलासमें, राजत सुखको खान॥
ॐ ह्रीं मरणभयनिवारणाय नमः अर्घं। ६०२।
राग द्वेष नहीं भावमें, शुद्ध निरञ्जन आप।

ज्योंके त्यों तुम थिर रहो, तनक न व्यापे पाप ॥

ॐ ह्रीं विमलाभाय नमः अर्घ । ६०३ ।

भवसागरसे पार हो, पहुंचे शिवपद तीर ।
भाव सहित तिन नमत हूं, लहूं न फुनि भव पीर ॥

ॐ ह्रीं उद्धाराय नमः अर्घं । ६०४ ।

अग्निदेव वा अग्नि दिश, ताके देव विशेष ।
ध्यावत हैं तुम चरणयुग, इन्द्रादिक सुर शेष ॥

ॐ ह्रीं अग्निदेवाय नमः अर्घ । ६०५ ।

विषय कषाय न रंच है, निरावरण निरमोह ।
इन्द्री मनको नमन कर, वन्दूं सुन्दर सोह ॥

ॐ ह्रीं मोहविजयसंयमधारकजिनाय नमः अर्घं । ६०६ ।

मोहरूप कल्याण कर, सुख–सागरके पार ।
महादेव स्वशक्ति धर, विद्या तिय भरतार ।

ॐ ह्रीं शिनाय नमः अर्घं । ६०७ ।

पुष्प भेट धर जजत सुर, निजकर अंजुलि जोड़ ॥
कमलापति कर कमलमें, धरै लक्ष्मी होड़ ॥

ॐ ह्रीं पुष्पांजलये नमः अर्घं । ६०८ ।

पूरण ज्ञानानंद मय, अजर अमर अमलान ।
अविनाशी ध्रुव निखिल पद, अविकारी सब मान ।

ॐ ह्रीं शिवगुणाय नमः अर्घं । ६०९

रोग शोक भय आदि विन, राजत नित आनंद ।
खेद रहित रति अरति विन, विकसत पूरणचन्द्र ॥

ॐ ह्रीं परमोत्साहजिनाय नमः अर्घं । ६१० ।

जे गुण शक्ति अनंत हैं, ते सब ज्ञान मझार ।
एक मिष्ट आकृति विविध, सोहत हैं अविकार ॥

नाम [illegible] [illegible] है, नम शक्ति आधार ।
नाम [illegible] [illegible], सर्वेश्वर सुखकार ॥
ॐ ह्रीं सर्वेश्वराय नमः अर्घ्यं । ६१२ ।

[illegible] अतीत अतीन्द्र हो, नय [illegible] अघोर ।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible], भविजनको चकोर ॥ ६१३ ॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] गुरु हैं, [illegible] के आदि ।
इन्द्रादिक नित करत हैं, तुम गुण गण अनुवाद ॥६१४॥
ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] नाम [illegible] है, भावी [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible], निज [illegible] [illegible] ॥६१५॥
ॐ ह्रीं कृष्णाय नमः अर्घ्यं ।

[illegible] [illegible] पर, मिथ्या मोह निवार ।

र हितकर उपदेश है, निश्चय वा व्यवहार ॥६१६।

ॐ ह्रीं मोहतिमिरविनाशकाय (ज्ञानपतये) नमः अर्घं।

वीतराग सर्वज्ञ हैं, उपदेशक हितकार।
सत्यारथ परमाण कर, अन्य सुमति दातार ॥६१७।

ओं ह्रीं सुमतये नमः अर्घं।

मायाचार न शल्य है, शुद्ध सरल परिणाम।
ज्ञानानन्द स्वलक्षमी, भोगत हैं अभिराम ।६१८।

ॐ ह्रीं भद्राय नमः अर्घं।

शील स्वभाव सु जन्म लै, अन्त समय निरवाण।
भविजन आनन्दकार हैं, सर्व कलुषता हान ॥६१६।

ओं ह्रीं शांतिजिनाय नमः अर्घं।

धरम रूप अवतार हो, लोक पापको भार।
मृतक स्थल पर्यंचाइयो, मत्स्य कियो ...

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] तासुमें, निमित्त बने नहीं जोग ।
[illegible] नाथ हो, पूजूं हूं कर जोग ॥६२१॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] आनंद हो, [illegible] तुम होत ।
[illegible] हो, पावत नहीं कुमोत ॥६२२॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] गुणी गुण आप हो, स आनंद [illegible] ।
गुणको पूजन भावसों, [illegible] पाय ॥६२३॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

[illegible] कुआदि [illegible], नाश कियो छिन माहिं ।
[illegible] और [illegible] नाहिं ॥६२४॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

भ वेजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार।
तीन लोकमें विस्तरी, सुयश नामकी धार ।६२५।

ओं ह्रीं पद्मप्रभाय नमः अर्घं ।

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बंध निवार।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार ॥६२६।

ॐ ह्रीं सुपार्श्वाय नमः अर्घं ।

तीन लोक आताप हर, मुनि मन मोदन चन्द।
लोक प्रिय अवतार हो, पाऊं सुख तुम वन्द ॥६२७।

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभाय नमः अर्घं ।

मन मोहन सोहन महा, धारै रूप अनूप।
दरशत मन आनंद हो, पायो स्वै रस कूप ॥६२८।

ओं ह्रीं पुष्पदंताय नमः अर्घं ।

भय भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश।

मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश ॥६२९।

ओं ह्रीं शीतलनाथाय नमः अर्घं ।

तीर्थंकर श्रेयांश हम, देहो श्री शुभ भाग ।

श्री सु अनंत चतुष्ट है, और सकल दुरभाग ॥६३०।

ओं ह्रीं श्रेयांशनाथाय नमः अर्घं ।

त्रस नाड़ी या लोकमें, तुम ही पूज्य प्रधान ।

तुमको पूजत भावसों, पाऊं सुख निरवाण ॥६३१।

ओं ह्रीं वासपूज्याय नमः अर्घं ।

द्रव्य भाव मल रहित हैं, महा मुनिनके नाथ ।

*इन्द्रादिक पूजत सदा, नमूं पदांबुज माथ ॥६३२।

ओं ह्रीं विमलनाथाय नमः अर्घं ।

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश ।

* "भजनको गुणकार हो, नमूं पदांबुज माथ ।" ऐसा "क" प्रतिमें पाठ है ।

थकित रहै असमर्थ करि, प्रणमें सन्त हमेश ।६३३।

ॐ ह्रीं अनंतनाथाय नमः अर्घं ।

अनागार आगारके, उद्धारक जिनराज ।

धर्मनाथ प्रणमूं सदा, पाऊं शिवसुख साज ।६३४।

ओं ह्रीं धर्मनाथाय नमः अर्घं ।

शांति रूप पर शांति कर, कर्म दाह विनिवार ।

शांति हेत वन्दूं सदा, पाऊं भवदधि पार ॥६३५।

ओं ह्रीं शांतिनाथाय नमः अर्घं ।

क्षुद्र वीर्य सब जीवके, रक्षक हैं तीर्थेश ।

शरणागति प्रतिपाल कर, ध्याऊँ सदा सुरेश ॥६३६।

ओं ह्रीं कुन्थुनाथाय नमः अर्घं ।

पूजनीक सब जगतके, मंगलकारक देव ।

पूजत हैं हम भावसों, विनशै अघ स्वयमेव ॥६३७।

ओं ह्रीं अरहनाथाय नमः अर्घं ।

मोह काम भट जीतियो, जिन जीतो सब लोक ।
लोकोत्तम जिनराजके, नमूं चरण दे धोक ।६३८।

ओं ह्रीं मल्लिनाथाय नमः अर्घं ।

पंच पापको त्यागकरि, भव्य जीव आनन्द ।
भये जासु उपदेशतें, पूजत हूं पद वृन्द ॥६३९।

ओं ह्रीं मुनिसुव्रताय नमः अर्घं ।

सुरनर मुनि नित नमन करि, जान धरम अवतार ।
तिनको पूजूं भाव युत, लहूं भवार्णव पार ।६४०।

ओं ह्रीं नमिनाथाय नमः अर्घं ।

नेम धर्ममें नित रमें, धर्मधुरा भगवान ।
धर्मचक्र जगमें फिरे, पहुंचावे शिव थान ॥६४१।

ओं ह्रीं नेमिनाथाय नमः अर्घं ।

शरणागति निज पास दो, पाप फांस दुख नाश।
तिसको छेदो मूलसों, देहु मुक्त गति वास ।६४२।

ओं ह्रीं पार्श्वनाथाय नमः अर्घं ।

शुद्ध भावतें उच्चपद, लोक शिखर आरूढ़ ।
केवल लक्ष्मी वर्द्धता, भई सु अन्तर गूढ़ ॥ ६४३ ॥

ओं ह्रीं वर्द्धमानाय नमः अर्घं ।

अतुल वीर्य तन धरत है, अतुल वीर्य मन वीच ।
कामिन वश नहीं रंच भी, जैसे जल विच मीच ॥ ६४४ ॥

ॐ ह्रीं महावीराय नमः अर्घं ।

मोह सुभटकूं पटकियो, तीन लोक परशंस ।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगतमें, कियो कर्म विध्वंस ॥ ६४५ ॥

ओं ह्रीं सुवीराय नमो अर्घं ।

मिथ्या-मोह निवार करि, महा सुमति भण्डार ।
शुभ मारग दरशाइयो, शुभ अरु अशुभ विचार ॥ ६४६ ॥

ॐ ह्रीं सन्मतये नमः अर्घं ।

निज आश्रय निर्विघ्न नित, स्वै लक्ष्मी भण्डार ।
चरणाम्बुज नित नमत हम, पुष्पांजलि शुभ धार ॥ ६४७ ॥

ॐ ह्रीं महापद्माय नमः अर्घं ।

हो देवाधिदेव तुम, नमत देव चउ भेद ।
धरो अनन्त चतुष्पद, परमानन्द अभेद ॥ ६४८ ॥

ॐ ह्रीं सुरेन्द्राय नमः अर्घं ।

निरावर्ण आभास है, ज्यों विन पटल दिनेश ।
लोकालोक प्रकाश करि, सुंदर प्रभा जिनेश । ६४९ ।

ॐ ह्रीं सुप्रभाय नमः अर्घं ।

आतमीक निज गुण लिये, दीप्ति सरूप अनूप ।
स्वयं जोति परकाशमय, वंदत हूं शिवभूप । ६५० ।

ॐ ह्रीं स्वयंप्रभाय नमः अर्घं ।

स्वै शक्ती स्वै करण हैं, साधन बाह्य अनेक ।

मोह सुभट क्षय करनको, आयुधराशि विवेक । ६५१ ।

ॐ ह्रीं सर्वायुधाय नमः अर्घं ।

जय जय सुर धुनि करत हैं, तथा विजय निधि देव ।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावै सुख स्वयमेव । ५२ ।

ॐ ह्रीं जयदेवाय नमः अर्घ ।

तुम सम प्रभा न औरमें, धरो ज्ञान परकाश ।
नाथ प्रभा जगमें भ्रमत, नमत मोहतम नाश । ५३ ।

ओं ह्रीं प्रभादेवाय नमः अर्घं ।

रक्षक हो षट् कायके, दया सिन्धु भगवान ।
शशि सम जिय आल्हाद करि, पूजनीक धरि ध्यान । ५४ ।

ओं ह्रीं उदकदेवाय नमः अर्घं ।

समाधान सबके करैं, द्वादश सभा मझार ।
सर्व अर्थ परकाश कर, दिव्य ध्वनि सुखकार । ५५ ।

ॐ ह्रीं प्रश्नकीर्तये नमः अर्घं ।

काहू विधि बाधा नहीं, कबहूं नहीं व्यय होय।
उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय। ५६।

ओं ह्रीं जयरूपजिनाय जयाय नमः अर्घं।

केवलज्ञान-स्वभावमें, लोक त्रय इक भाग।
पूरणताको पाइयो, छांडि सकल अनुराग। ५७।

ओं ह्रीं पूर्णबुद्धाय नमः अर्घं।

पर आलिंगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार।
निज सन्तोष सुखी सदा, पर सम्बन्ध निवार। ५८।

ॐ ह्रीं निजानंदसंतुष्टजिनाय (निःसंगाय) नमः अर्घं।

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान।
विमल जिनेश्वर मैं नमूं, तीन लोक परधान। ५९।

ओं ह्रीं विमलाय नमः अर्घं।

स्वैपदमें नित रमत हैं, कभी न आरति होय।
अतुल वीर्य विधि जीतियो, नमूं जोर कर दोय। ६०।

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानन्द धाम।
चक्रपती हरिबल नमें, मैं पूजूं निष्काम। ६७०।

ॐ ह्रीं महापुरुषदेवाय नमः अर्घं।

शुभ विधि सब आचरण हैं, सर्व जीव हितकार।
श्रेष्ठ शुद्ध अति शुद्ध हैं, नमूं तजो भवपार। ६७१।

ओं ह्रीं मविधये नमो अर्घं।

है प्रमाण करि सिद्ध जे, ते हैं बुद्धि प्रमाण।
सो विशुद्धमय रूप हैं, संशय तमको भान। ७२।

ओं ह्रीं प्रज्ञाप्रमिताय नमः अर्घं।

समय प्रमाण न मित तनी, कभी अंत नहीं होय।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमूं हूं सोय। ७३।

ओं ह्रीं अव्ययाय नमः अर्घं।

प्रतिपालक जगदीश हैं, सर्व मान परमान।
अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत नित कल्याण। ७४।

हो प्रभू, धर्म मार्गकी लीक ।
शुद्ध मर्यादा बन्ध प्रति, करण चलावन ठीक । ७५ ।
ओं ह्रीं धर्मसारथये नमः अर्घं ।

शिव मारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार ।
धर्म सुयश विस्तार कर, बतलायो शुभ सार । ७६ ।
ओं ह्रां शिवकीर्तिजिनाय नमः अर्घं ।

मोह अंध हन सूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ ।
मोक्षमार्ग परकाश कर, नमूं जोर जुग हाथ । ७७ ।
ओं ह्रीं मोहांधकारविनाशकजिनाय (विश्वकर्माय) नमः अर्घं ।

मन इन्द्री व्यापार विन, भाव रूप विध्वंश ।
ज्ञान अतीन्द्रिय धरत हो, नमत नशै अघवंश । ७८ ।
ओं ह्रीं अतीन्द्रियज्ञानरूपजिनाय (अनक्षाय) नमः अर्घ ।

पर उपदेश परोक्ष विन, साक्षात परतक्ष ।

आनन लोकालोक सब, धारै ज्ञान [illegible] । ७९ ।

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

व्यापक हो तिहुं लोकमें, ज्ञान ज्योति मय ठौर ।

तुमको पूजन भावसों, पाऊं भवदधि ओर । ८० ।

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय ।

तीन लोक नायक प्रभू, हमपर होउ सहाय । ८१ ।

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

तुम देवनके देव हो, महादेव है नाम ।

जिन मस्तक शुद्धात्मा, तुम पद करूं प्रणाम । ८२

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

सर्व व्यापि तुमको कहैं, करो भिन्न विश्राम ।

[illegible] सर्वज्ञ स्वरूपता, राजत हो शिवधाम । ८३ ।

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घं ।

हितकारी अति मिष्ट हैं, अर्थ सहित गम्भीर।
प्रिय वाणी कर पोखते, द्वादश सभा सु तीर। ८४।

ओं ह्रीं मिष्टदिव्यध्वनिजिनाय (निरारेकाय) नमः अर्घं।

भवसागरके पार हो, सुखसागर गलतान।
भव्यजीव पूजत चरन, पावै पद निरवाण॥

ॐ ह्रीं भवांताय नमः अर्घं। ८५।

नहीं चलाचल भाव हैं, पाप कलाप न लेश।
दृढ़ परिणत स्वै आतमरस, पूजूं श्री मुक्तेश॥

ॐ ह्रीं दृढ़व्रताय नमः अर्घ। ८६॥

असंख्यात नय भेद हैं, यथायोग्य वच द्वार।
तिन सबको जानो सुविध, महा निपुण मति धार॥

ओं ह्रीं नियुक्तिज्ञानधारकजिनाय (नियोक्ताज्ञाय) नमः अर्घं। ८७।

क्रोधादिक सु उपाधि हैं, आतम विभाव कराय।

तिनको त्याग विशुद्ध पद, पायो पूजूं पाय ॥
ओं ह्रीं निष्करणाय नमः अर्घं । ८८ ॥

ज्यों शशि किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश ।
कलाधार सोहैं सु इम, पूजत अघ तम नाश ॥
ओं ह्रीं पूर्णकलाधराय नमः अर्घं । ८९ ।

जन्म मरणको आदि ले, जगमें क्लेश महान ।
तिसके हंता हो प्रभू, भोगत सुख निर्वाण ॥
ॐ ह्रीं त्रिरक्लेशहननाय नमः अर्घं । ९० ।

ध्रुव स्वरूप थिर हैं सदा, कभी अन्त नहीं होय ।
अव्याबाध विराजते, पर सहायको खोय ॥
ॐ ह्रीं ध्रौव्यरूपजिनाय नमो अर्घं । ९९१ ।

व्यय उत्पाद सुभाव हैं, ताको गौण कराय ।
अचल अनन्त स्वभावमें, तीन लोक सुखदाय ॥
ॐ ह्रीं अचलअनंतस्वभावात्मकजिनाय (धर्मनाथ) नमो अर्घं । ९२ ।

स्व ज्ञानादि चतुष्ट पद, ... ।
सोहत हैं शुभ चिह्न करि, भवि आनंद कराय ॥
ॐ ह्रीं वत्सलांछनाय नमः अर्घं । ६३ ।

धर्म रीति परगट कियो, युगकी आदि मझार ।
भविजन पोपे सुख सहित, आदि धर्म अवतार ॥
ओं ह्रीं ब्रह्मणे नमः अर्घं । ६४ ।

चतुरानन परसिद्ध हैं, दर्श होय चहुं ओर ।
चउ अनुयोग बखानते, सब दुख नासो मोर ॥
ओं ह्रीं चतुर्मुखाय नमः अर्घं । ६५ ।

जगत जीव कल्याण कर, धर्म मर्याद बखान ।
ब्रह्म विष्णु भगवान हो, महामुनी सब मान ।
ओं ह्रीं जगतजीवकल्याणकारणजिनाय (धात्रे) नमः अर्घं । ६६ ।

प्रजापति प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार ।
मन्मथ इन्द्री वश करन, वन्दूं सुख आधार ।

ओं ह्रीं विधात्रे नमो अर्घं ॥ ६७ ।

तीन लोककी लक्ष्मी, तुम चरणाम्बुज वास ।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास ॥

ओं ह्रीं कमलासनाय नमः अर्घं । ६८ ।

बहुरि न जगमें भ्रमण है, पंचम गतिमें वास ।
नित्य अमरता पाइयो, जरा मृत्युको नाश ॥

ॐ ह्रीं अजन्मिने नमः अर्घं । ६९ ।

पांच काय पुद्गलमई, तामें एक न होय ।
केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत हैं दुख खोय ॥

ओं ह्रीं आत्मभुवे नमः अर्घं । ७०० ॥

लोक शिखर सुखसो रहैं, ये ही ' ता जान ।
धारत हैं तिहुं लोकमें, अधिक प्रभु परधान ॥

ओं ह्रीं लोकशिखरनिवासिने(भूंगाय) नमः अर्घं । ७०१

सूरज शशि प्रतिभास ॥ ७०२ ॥

ओं ह्रीं सुरज्येष्ठाय नमः अर्घं ।

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग वरताय ।
सत्यारथ ब्रह्मा कहैं, तुमरे वन्दूं पाय ॥ ७०३ ॥

ओं ह्रीं प्रजापतये नमः अर्घं ।

गर्भ समय षट्मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय ।
रत्नवृष्टि नित करत हैं, उत्तम गर्भ कहाय ॥ ७०४ ॥

ॐ ह्रीं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घं ।

तुम ही चार अनुयोगके, अंग कहे मुनिराज ।
तुमसों पूरण श्रुत सही, अंतर मंगल काज ॥ ७०५ ॥

ओं ह्रीं वेदांगाय नमः अर्घं ।

तुम उपदेश थकी कहैं, द्वादशांग गणराज ।
पूरण ज्ञान तुम्हीं धरो, प्रनमूं मैं शिवकाज ॥ ७०६ ॥

ओं ह्रीं पूर्णवेदज्ञाय (वेदज्ञानाय) नमः अर्घं ।

पार भये भवसिंधुके, तथा सुवर्ण समान ।
उत्तम निर्मल थुति धरैं, नमत कर्ममल हान ॥ ७०७ ॥

ॐ ह्रीं भवसिंधुपारगाय नमः अर्घं ।

सुखाभास पर निमित्ततैं, पर उपाधितैं होत ।
स्वतः सुभाव धरो सही, सत्यानंद उद्योत ॥ ७०८ ॥

ओं ह्रीं सत्यानंदाय नमः अर्घं ।

मोहादिक परबल महा, सो इसको तुम जीत ।
औरनकी गिनती कहां, तिष्ठो सदा अभीत ॥ ७०९ ॥

ओं ह्रीं अजयाय नमो अर्घं ।

दिव्य रत्नमय ज्योति हैं, अमिन अकंप अडोल ।
मनवांछित फलदाय हो, रतन अक्षय अमोल ॥७१० ॥

देह धार जीवन मुकत, परमातम भगवान ।
सूर्य समान सुदीप्त धर, महा नृपोश्वर ज्ञान ॥ ७११ ॥

ॐ ह्रीं जीवनमुक्तजिनाय (हंसजाताय) नमः अर्घं ।

स्व भय आदिकसे परे, पर भय आदि निवार ।
पर उपाधि बिन नित सुखी, वन्दूं भाव समार ॥७१२ ॥

ॐ ह्रीं त्रातानंदाय नमो अर्घं ।

ईश्वर हो तिहुँ लोकके, परम पुरुष परधान ।
ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान ॥ ७१३ ॥

ॐ ह्रीं विष्णवे नमः अर्घं ।

रत्नत्रय पुरुपार्थ करि, हो प्रसिद्ध जयवंत ।
कर्मशत्रुको क्षय कियो, शीश नमें नित सन्त ॥ ७१४ ॥

ओं ह्रीं त्रिविक्रमाय नमः अर्घं ।

सूरज हो शिवराहके, कर्म दलन बलि सूर ।

[illegible] ॥ ३१ [illegible] ॥

[illegible]

[illegible] ।

[illegible] ॥ ३१ [illegible] ॥

[illegible] अर्घ्यं

[illegible] ॥

अद्भुत [illegible] ॥ ३१ [illegible] ॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] ।

[illegible] ॥ ३१ [illegible] ॥

ॐ ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] ।

[illegible]

... नमः अर्घ्यं ।

मुनिमन कुमुदिन मोदकर, भव संताप विनाश ।
पूरण चन्द्र त्रिलोकमें, पूरण प्रभा प्रकाश ॥ ७२० ॥
ओं ह्रीं हृषीकेशाय [illegible] नमो अर्घ्यं ।

दिनकर मम परकाश कर, हो देवनके देव ।
ब्रह्मा विष्णु कहात हो, शशि सम दुति स्वयमेव ॥ ७२१ ॥
ओं ह्रीं [illegible] नमो अर्घ्यं ।

स्वयं विभवके हो धनी, स्वयं ज्योति परकाश ।
स्वयं ज्ञान दृग वीर्य सुख, स्वयं सुभाव विलास ॥ ७२२ ॥
ओं ह्रीं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं ।

धर्म भास्वर धारिणी, हो जिनेन्द्र भगवान ।
तुमको पूजों भावसों, पाऊं पद निर्वाण ॥ ७२३ ॥
ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

असुर काम अर हास्य इन, आदि कियो विध्वंश।
महा श्रेष्ठ तुमको नमूं, रहे न अघको अंश॥ ७२४॥
ओं ह्रीं कामादिअसुरध्वंसिने नमः अर्घं।

सुधाधार यो अमरपद, धर्म फूलकी वेल।
शुभ मति गोपिन संगमें, हमें राख निज गेल॥ ७२५॥
ओं ह्रीं माधवाय नमः अर्घं।

विषय कषाय स्व वश करी, बलि वश कियो जु राम।
महा बली परसिद्ध हो, तुम पद करूँ प्रणाम॥ ७२६॥
ओं ह्रीं बलिबन्धनाय नमः अर्घं।

तीन लोक भगवान हो, स्वै परके हितकार।
सुरनर पशु पूजत सदा, भक्ति भाव उर धार॥ ७२७॥
ॐ ह्रीं अधोक्षजाय नमः अर्घं।

हितमित मिष्ट प्रिय वचन, अमृत सम सुखदाय।

धर्म मोक्ष परगट करन, वन्दूं तिनके पाय ॥ ७२८ ॥

ॐ ह्रीं हितमितप्रियवचनजिनाय (मधवे) नमः अर्घं ।

निज लीलामें मगन हैं, सांचा कृष्ण सु नाम ।
तीन खण्ड तिहुं लोकके, नाथ करूं परणाम ॥ ७२९ ॥

ॐ ह्रीं केशवाय नमः अर्घं ।

सूके तृण सम जगतको, विभव जान करवास ।
धरे सरलता जोगमें, करै पापको नाश ॥ ७३० ॥

ॐ ह्रीं विष्टरश्रवसे नमः अर्घं ।

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक ।
सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जन चित रमणीक ॥ ७३१ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवत्सलांछनाय नमः अर्घं ।

सर्वोत्तम अतिश्रेष्ठ हैं, जिन सन्मति श्रुति योग ।
धर्म मोक्ष मारग कहैं, पूजत सज्जन लोग ॥ ७३२ ॥

ॐ ह्रीं श्रीपतये नमः अर्घं।

अविनाशी अविकार है, नहीं लिये निज भाव।
रमें सुआश्रय रहत हैं, मैं पूजूं धर चाव ॥ ७३३ ॥

ॐ ह्रीं अन्तराय नमः अर्घं।

नाशो लौकिक वासना, निर इच्छक योगीश।
नाशुंगार न मन बसे, वंदन हूं लोकीश ॥ ७३४ ॥

ॐ ह्रीं नग्नाम्बराय नमो अर्घं।

व्यापक लोकालोकमें, विष्णुरूप भगवान।
धर्मरूप नर लखि लहै, पूजन हूं धर ध्यान ॥ ७३५ ॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथ नमः अर्घं।

धर्म चक्र सन्मुख चलै, मिथ्यामति रिपुहान।
नेत्र तेरह नाय प्रभू, पूजन हूं दिनमान ॥ ७३६ ॥

ॐ ह्रीं धर्मचक्रे नमः अर्घं।

... अति, जन्म धर्म अवतार ।
तीन लोककी लक्ष्मी, है एकत्र उदार ॥ ७३७ ।
ओं ह्रीं पद्मनाभाय नमः अर्घं ।

मुनिजन आदर जोग हो, लोक सराहन योग ।
सुरनर पशु आनंद कर, सुभग निजातम भोग ॥ ७३८ ॥
ओं ह्रीं जनार्दनाय नमः अर्घं ।

सब देवनके देव हो, महादेव विख्यात ।
ज्ञानामृत सुखसों खिरें, पीवत भवि सुख पात ॥ ७३९ ॥
ॐ ह्रीं श्रीकण्ठाय नमो अर्घं ।

पाप पुंजका नाश करि, धर्म रीति प्रगटाय ।
तीन लोकके अधिपती, हमपर दया कराय ॥ ७४० ॥
ओं ह्रीं त्रिलोकाधिपशंकराय नमः अर्घं ।

स्वयं व्यापि निज ज्ञान करि, स्वयं प्रकाश अनूप ।

स्वयं भाव परमातमा, वन्दूं स्वयं सरूप ॥ ७४१ ॥

ओं ह्रीं स्वयंप्रभवे नमः अर्घं।

सब देवनके देव हो, महादेव है नाम।

स्वपर सुगंधित रूप हो, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ७४२ ॥

ओं ह्रीं लोकपालाय नमः अर्घं।

धर्मध्वजा जग फरहरे, सब जग माने आन।

सब जग शीश नमें चरण, सब जगको सुखदान ॥ ७४३ ॥

ॐ ह्रीं वृषभकेतवे नमः अर्घं।

जन्म जरा मृत जीतिकें, निश्चल अव्यय रूप।

सुखसों राजत नित्य हो, वन्दूं हूं शिवभूप ॥ ७४४

ओं ह्रीं शिवरूपमहामृत्युंजयाय नमः अर्घं।

सब इन्द्री मन जीतिके, करि दीनो तुम व्यर्थ।

स्वयं ज्ञान इन्द्री जय्यो, नमूं सदा शिव अर्थ। ७४५।

ॐ ह्रीं विरूपाक्षाय नमः अर्घं ।

सुन्दर रूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार ।
असाधारण शुभ तन लगे, केवलज्ञान मझार । ७४६ ।

ओं ह्रीं कामदेवाय नमः अर्घं ।

सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित एक सरूप ।
धर्म मार्ग दरशात है, लोकित रूप अनूप । ७४७ ।

ओं ह्रीं त्रिलोचनाय नमः अर्घं ।

निजानन्द स्व लच्छमी, ताके हो भरतार ।
शिव कामिन नित भोगते, परम रूप सुखकार । ७४८ ।

ओं ह्रीं उमापतये नमो अर्घं ।

जे अज्ञानी जीव हैं, नित प्रति बोध करान ।
रक्षक हो षट् कायके, तुम सम कौन महान । ७४९ ।

ॐ ह्रीं पशुपतये नमो अर्घं ।

रमण भाव निज शक्तिसो, धरै तथा दुति काम।
कामदेव तुम नाम हैं, महाशक्ति बल धाम। ७५०।

ओं ह्रीं शम्बरारये नमो अर्घं।

कामदाहको दम कियो, ज्यों अगनी जलधार।
स्वै आतम आचरण नित, महाशील थिय सार। ७५१।

ॐ ह्रीं त्रिपुरांतकाय नमो अर्घं।

स्वै सन्मति शुभ नारसो, मिले रले अरधांग।
ईश्वर हो परमातमा, तुम्हें नमूं सर्वांग। ७५२।

ओं ह्रीं अर्द्धनारीश्वराय नमः अर्घं।

नहीं चिगे उपयोगसे, महा कठिन परिणाम।
महावीर्य धारक नमूं, तुमको आठो जाम। ७५३।

ॐ ह्रीं रुद्राय नमः अर्घं।

गुण पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वयं परदेश।

हो, स्वयं सुभाव विशेष । ७५४ ।

ॐ ह्रीं भावाय नमः अर्घं ।

सूक्षम गुप्त स्वगुण धरे, महा शुद्धता धार ।
चार ज्ञान धर नहीं लखै, मैं पूजूं सुखकार ॥ ७५५ ॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकजिनाय नमः अर्घं ।

शिव तिय संग सदा रमैं, काल अनन्त न और ।
अविनाशी अविकार हो, महादेव शिरमोर ॥ ७५६ ॥

ओं ह्रीं सदाशिवाय नमः अर्घं ।

जगत कार्य तुमसो सधै, सब तुमरे आधीन ।
सबके तुम सरदार हो, आप धनी जगदीन ॥ ७५७ ॥

ओं ह्रीं जगत्कर्त्रे नमः अर्घं ।

महा घोर अंधियार है, मिथ्या मोह कहाय ।

जगमें शिव मग लुप्त था, ताको तुम दरशाय ॥ ७५८ ॥

ओं ह्रीं अन्धकारांतकाय नमः अर्घं ।

सन्तति पक्ष जुदी नहीं, नहीं आदि नहीं अन्त ।

सदा काल विन काल तुम, राजत हो जयवन्त ॥ ५५९ ॥

ओं ह्रीं अनादिनिधनाय नमः अर्घं ।

तीन लोक आराध्य हो, महा यज्ञको ठाम ।

तुमको पूजत पाइये, महा मोक्षसुख धाम ॥ ७६० ॥

ॐ ह्रीं हराय नमः अर्घं ।

महा सुभट गुणराम हो, सेवत हैं तिहुं लोक ।

शरणागति प्रतिपाल कर, चरणाम्बुज दूं धोक ॥ ७६१ ॥

ओं ह्रीं महासेनाय नमः अर्घं ।

गणधरादि सेवें चरण, महा गणपती नाम ।

पार करो भवसिंधुतें, मंगलकर सुख धाम ॥ ७६२ ।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

अतुल प्रभा धारो महा, तुम पद करूं प्रणाम ॥ ७७१ ॥

ओं ह्रीं चिदानन्दे नमः अर्घं ।

तुम अजन्म बिन मृत्यु हो, सदा रहो अविकार ।
ज्योंकि त्यों मणि दीप सम, पूजत हूं मन धार ॥ ७७२ ॥

ओं ह्रीं अजरअमरजिनाय (अनुत्पादाय) नमः अर्घं ।

संस्कारादि स्वगुण सहित, तिन करि हो आराध्य ।
तुमको वन्दो भावसों, मिटे सकल दुख व्याध्य ॥ ७७३ ॥

ओं ह्रीं क्रियाराध्याय नमः अर्घं ।

निज आतम स्वै ज्ञान है, तामें रुचि परतीन ।
पर पद मोहे अरुचिता, पाई अक्षय जीत ॥ ७७४ ॥

ॐ ह्रीं सुधारोगाय (अमृताय) नमः अर्घं ।

जन्म मरणको आदि ले, सकल रोगको नाश ।
दिव्य औषधी तुम धरो, अमर करन सुखरास ॥ ७७५ ॥

घातां घात देख संसार, भयतन भोग विरक्त उदार । सिद्ध०

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ॥ ८१४ ॥

अमायक ज्ञान सब टोक, मोक्षपुरी दिखलायो लोक । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ॥ ८१६ ॥

[illegible] सब तुम देव, [illegible] वन्दत स्वयमेव । सिद्ध० । ८१७ ।

ओं ह्रीं स्वयंभवे नमो अर्घ्यं ।

मन वच काय जोग परिहार, कर्मवर्गणा नाहिं लगार । सिद्ध० । ८१८

ओं ह्रीं निरास्रवाय नमः अर्घ्यं ।

तुम अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश ।
निःस्पृह [illegible] मन लाय, सब भाषै [illegible] ॥ ८१९ ।

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

[illegible] । सिद्ध० ८२०

ओं ह्रीं [illegible] नमः अर्घ्यं ।

हो समाधिमें नि... लीन, विन आश्रय नित ही स्वाधीन । सिद्ध० ८२१

ओं ह्रीं योगाय नमः अर्घं ।

लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेप स्वरूप । सिद्ध० ८२२

ओं ह्रीं लोकभालतिलकजिनाय (विशेषकाय) नमः अर्घं ।

अक्षाधीन हीन हैं शक्त, तिसको नाश करी निज व्यक्त । सिद्ध० ८२३

ओं ह्रीं तुच्छभावभिदे नमो अर्घं ।

जीवादिक पदार्थ षट् जान, तिनको भलीभांति है ज्ञान ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८२४ ॥

ॐ ह्रीं षटपदार्थदर्शिने नमः अर्घं ।

विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान । सिद्ध०

ओं ह्रीं सकलवस्तुविज्ञात्रे नमः अर्घं ॥ ८२५ ॥

सब पदार्थ दर्शत तुम नैन, संशय हरण करण सुख चैन । सिद्ध...

ओं ह्रीं षोडशपदार्थवादिने नमः ...

द्वादश सभा करैं सतकार, आदर योग वैन सुखसार । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं समोसरणद्वादशसभापतये नमः अर्घं ॥ ८३६ ॥

आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहिचान । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं त्रिमाणाय नमः अर्घं ॥ ८४० ॥

विशद शुद्ध मति हो साकार, तुमको जानत है सु विचार । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं अक्षप्रमाणाय नमः अर्घं ॥ ८४१ ॥

नयसापेक्ष कहैं शुभ वैन, हैं अशंस सत्यार्थ ऐन ।

सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय ॥ ८४२ ॥

ॐ ह्रीं स्याद्वादरूपे नमो अर्घं ।

लोकालोक क्षेत्रके मांहि, आप ज्ञानमें सब दरशाय ।

सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसंपतिदाय । ८४३ ।

ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमो अर्घं ।

अन्तर बाह्य ऐसा नहीं और, केवल आनममई अठौर । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं शुद्धात्मने नमः अर्घं ॥ ८४४ ॥

अन्तिम पौरुष साध्यो सार, पुरुष नाम पायो सुखकार । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं पुरुषाय नमो अर्घं ॥ ८४५ ॥

चहुंगतिमें नरदेह मझार, मोक्ष होत तुम नर आकार । सिद्ध० ।

ओं ह्रीं नराधिपाय नमः अर्घं ॥ ८४६ ॥

दर्श ज्ञान चेतनकी लार, निरावर्ण तुम हो अविकार । सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं निरावरणचेतनाय नमः अर्घं ॥ ८४७ ॥

भाव न वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नहीं सन्देह । सिद्ध० । ८४८ ।

ओं ह्रीं मोक्षरूपजिनाय(पुंसे) नमः अर्घं ।

सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वयं सिद्ध राजो शुभ नीक ।
सिद्धसमूह जजूं मन लाय, भव भवमें सुखसम्पतिदाय ॥ ८४९ ॥

ओं ह्रीं अकृत्रिमाय नमः अर्घं ।

दोहा—जाकरि तुमको जानिये, सो है अगम अलक्ष ।

निर्गुण ध्यावें ध्यान है, भव भटकें हम नाथ । ८५० ।

ओं ह्रीं निर्गुणाय नमः अर्घं ।

दुःखमें हैं अगुण, सो तुममें इक नाहिं ।

शुद्ध अमृत देव हो, सब भ्रमता मिटाय । ८५१ ।

ओं ह्रीं अमृताय नमो अर्घं ।

उदासी त्रिभुवन थको, गाजन सूं भरतार ।

निजानन्दको आदि है, महा गुण निरधार । ८५२ ।

ओं ह्रीं योगस्य नमः अर्घ ।

व्यापक लोकालोकमें, ज्ञान ज्योतिके द्वार ।

लोकशिखर थिर अचल, करो भक्त उद्धार ॥ ८५३ ॥

ओं ह्रीं लोकेश्वराय नमः अर्घं ।

ईश्वर प्रभव निरावियो, नाम देव निरधार ।

[illegible] ...न प्यार ॥ ८५४ ॥

ॐ ह्रीं अक्रियाय नमः अर्घं।

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहां रहो स्वयमेव।
देव वास है मोक्ष थल, हो देवनके देव ॥ ॥

ॐ ह्रीं देवेष्टजिनाय (दिविष्ठये) नमः अर्घं ॥ ८५५ ॥

भवसागरके तीर हो, अचलरूप अस्थान।
फिर नहीं जगमें जन्म है, राजत हो सुखथान ॥

ॐ ह्रीं तटस्थाय नमो अर्घं ॥ ८५६ ॥

ज्योंके त्यों नित थिर रहो, अचलरूप अविनाश।
स्वपदमय राजत सदा, स्वयं ज्योति परकाश ॥

ॐ ह्रीं कूटस्थाय नमः अर्घं ॥ ८५७ ॥

तत्त्व अतत्त्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास।
ज्ञान मूर्ति हो ज्ञान घन, ज्ञान ज्योति अविनाश ॥

ॐ ह्रीं ज्ञात्र नमो अर्घं ॥ ८५८ ॥

पर निमित्तके योगतें, व्यापे नहीं विकार।

स्वै स्वरूपमें थिर सदा, हो अबाध निरधार ॥
ओं ह्रीं निराबाधाय नमः अर्घ ॥ ८५९ ॥

चारवाक वा सांख्यमें, झूठी पक्ष धरात ।
अल्प मोक्ष नहीं होत है, राजत हो विख्यात ॥
ओं ह्रीं निराभावाय नमो अर्घं ॥ ८६० ॥

तारण तरण जिहाज हो, अतुल शक्ति के नाथ ।
भव वारिधसे पारकर, राखो अपने साथ ॥
ॐ ह्रीं भववारिधिपारकराय नमो अर्घं ॥ ८६१ ॥

बन्ध मोक्षको कहन है, सो भी है व्यवहार ।
तुम विवहार अतीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार ॥ ८६२ ॥
ॐ ह्रीं निर्मोक्षाय नमः अर्घं ।

चारों पुरुषारथ विषैं, मोक्ष पदारथ सार ।
तुम साधो परधान हो, सबमें मुख्य आधार ॥ ८६३ ॥
ॐ ह्रीं प्रधानाय नमः अर्घं ।

कर्ममैल प्रक्षालकै, निज आतम लवलाय ।
हो प्रसन्न शिवथल विषै, अन्तर मल विनशाय ॥ ८६४ ॥

ओं ह्रीं कर्मकाधिविनाशकजिनाय(नमवगानाय) नमः अर्घं ।

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभावमें लीन ।
वन्दूं शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन ॥ ८६५ ॥

ॐ ह्रीं अकृताय नमः अर्घं ।

निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यों सूर ।
तुमको पूजत भावसौं, मोह कर्मको चूर ॥ ८६६ ॥

ओं ह्रीं निरावरणसूर्यजिनाय नमः अर्घं ।

निज भावनतैं मोक्ष हो, ते ही भाव रहात ।
स्वगुण स्व परजायमें, थिरता भाव धरात ॥ ८६७ ॥

ओं ह्रीं स्वरूपआरूढ़जिनाय नमः अर्घं ।

सब कुभावको जीतियो, शुद्ध भये निरमूल ।

शुद्धातम कहलात हो, नमत नशे अघ मूल ॥ ८६८ ॥
ॐ ह्रीं प्रकृतिग्राह्याय नमः अर्घं ।

निज सन्मतिके सन्मती, निज बुधके बुधवान ।
शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हो, पूजत मिथ्या हान ॥ ८६९ ॥
ओं ह्रीं विशुद्धसन्मतिजिनाय (सत्यविज्ञानाय) नमः अर्घं ।

कर्म प्रकृतिको अंश बिन, उत्तर हो या मूल ।
शुद्ध रूप अति तेज घन, ज्यों रवि बिंब अधूल ॥ ८७० ॥
ओं ह्रीं प्रकृतये नमो अर्घं ।

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार ।
आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार ॥ ८७१ ॥
ओं ह्रीं ब्रह्मणे नमः अर्घं ।

नहीं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप ।
रोग शोक व्यापे नहीं, निवसै सदा अनूप ॥ ८७२ ॥
ओं ह्रीं निर्विकृतये नमः अर्घं ।

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरो तिमिर मिथ्यात।
तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात॥ ८७३॥
ॐ ह्रीं मिथ्यातिमिरविनाशकाय (कर्तिने) नमः अर्घं।

वस्तु परीक्षा तुम विना, और झूठ करखेद।
अंधकूपमें आप सर, डारत हैं निरभेद। ८७४।
ॐ ह्रीं मीमांसकाय नमः अर्घं।

होनहार या हो लई, या पड़ये इस काल।
अस्तरूप सब वस्तु हैं, तुम जानो यह हाल। ८७५।
ॐ ह्रीं अस्तिसर्वज्ञाय नमः अर्घं।

जिनवाणी जिन सरस्वती, तुम गुणसों परिपूर।
पूज्य योग तुमको कहैं, करैं मोहमद चूर। ८७६।
ॐ ह्रीं श्रुतपूज्याय नमः अर्घं।

स्वयं स्वरूप आनन्द हो, निज पद रमन सुभाव।
सदा विकाशित हो रहैं, वन्दूं सहज सुभाव। ८७७।

ओं ह्रीं सद्योत्सवाय नमः अर्घं ।

मन इन्द्री जानत नहीं, जाको शुद्ध स्वरूप ।
वचनातीत स्वगुण सहित, अमल अकाय अरूप । ८७८ ।

ॐ ह्रीं परोक्षज्ञानागम्याय(वाग्गतीताय) नमः अर्घं ।

जो श्रुतज्ञान कला धरै, तिनको हो तुम इष्ट ।
तुमको नित प्रति ध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट । ८७९ ।

ओं ह्रीं इष्टपाठकाय नमः अर्घं ।

निज समरथ कर साधियो, निज पुरुषारथ सार ।
सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार । ८८० ।

ओं ह्रीं सिद्धकर्मक्षयाय नमः अर्घं ।

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद ।
गुण अनंत पर्याय सब, सो विभाग परिछेद । ८८१ ।

ओं ह्रीं चार्वाकाय नमः अर्घं ।

स्वसंवेदन ज्ञानमें, वेद्यत होय प्रत्यक्ष ।

रक्षक हो तिहूं लोकके, हम शरणागति पक्ष। ८८२।
ओं ह्रीं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नमः अर्घं।

विद्यमान शिवलोकमें, स्वगुण पर्याय समेत।
कहैं अभाव कुमती मती, निजपर धोका देत। ८८३।
ॐ ह्रीं अस्तिपरलोकाय नमः अर्घं।

तुम आगमके मूल हो, अपर गुरू हैं नाम।
तुम वानी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम। ८८४।
ॐ ह्रीं गुरुश्रुतये नमः अर्घं।

तीन लोकके नाथ हो, ज्यों सुरगणमें इन्द्र।
स्वैपद रमन स्वभाव धर, नमैं तुम्हें देवेन्द्र। ८८५।
ॐ ह्रीं त्रिलोकनाथाय नमः अर्घं।

सव स्वभाव अविरुद्ध हैं, स्वैपर घातक नाहिं।
सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं। ८८६।
ॐ ह्रीं स्वस्वभावअविरुद्धजिनाय(अविरुद्धवर्णाय) नमः अर्घं।

ब्रह्म ज्ञानको वेदकर, भये शुद्ध अविकार।
पूरण ज्ञानी हो नमूं, लेहो वेदको सार। ८८७।
ॐ ह्रीं वेदांतनयाय नमो अर्घं।

शब्द ब्रह्मके ज्ञानतें, आतम–तत्त्व विचार।
शुक्लध्यानमें लय भए, हो अतर्क अविचार। ८८८।
ओं ह्रीं शब्दाद्वैतब्रह्मणे(नयाय) नमः अर्घं।

सूक्षम तत्त्व प्रकाश कर, सूक्षम कर्म उच्छेद।
मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद। ८८९।
ओं ह्रीं सूक्ष्मतत्त्वप्रकाशकजिनाय (विस्फोटनवादिने) नमः अर्घं।

तीन शतक त्रेसठ जु हैं, सब माने पाखण्ड।
धर्म यथारथ तुम कहो, तिन सबके ताईं खण्ड। ८९०।
ओं ह्रीं पाखण्डखण्डकाय नमः अर्घं।

वर्णरूप करतार हो, कोईक नयके द्वार।
सुर मुनि करि पूजन भए, माननीक सुखकार। ८९१।

ओं ह्रीं अखण्डानन्दजिनाय नमः अर्घं ।

केवलज्ञान उपाइकें, तदन्तर हो मोक्ष ।

साक्षात बड़भागसें, पूजूं इहां परोक्ष । ८९२ ।

ॐ ह्रीं अनन्तजिने नमः अर्घं ।

शरणागतको पार कर, देत मोक्ष अभिराम ।

तारण तरण सु नाम है, तुम पद करूं प्रणाम । ८९३ ।

ओं ह्रीं पारकृताय नमः अर्घं ।

भव समुद्र गम्भीर है, कठिन जासको पार ।

निज पुरुषार्थ करि तिरे, गहो किनारो सार । ८९४ ।

ओं ह्रीं तीरप्राप्ताय नमः अर्घं ।

एकवार जो शरण गहि, ताको हो हितकार ।

यातें सब जग जीवकें, हो आनंद दातार । ८९५ ।

ओं ह्रीं परहितस्थिताय नमः अर्घं ।

रत्नत्रय निज नेत्रसों, मोक्षपुरी पहुंचात ।
महादेव हो जगत पितु, तीन लोक विख्यात । ८६६ ।

ॐ ह्रीं रत्नत्रयनेत्रजिनाय(त्र्यक्षो) नमः अर्घं ।

तीन लोकके नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार ।
सरल भाव विन कपट हो, स्वच्छ शुद्ध अविकार । ८६७ ।

ॐ ह्रीं शुद्धबुद्धजिनाय (द्वयक्षणे) नमः अर्घं ।

निश्चै या व्यवहारके, हो तुम जाननहार ।
वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूं निरधार । ८६८ ।

ओं ह्रीं ज्ञानकर्मप्रभुाय नमः अर्घं ।

सुरनर पशु न अघावते, सभी ध्यावते ध्यान ।
तुमको नित ही ध्यावते, पावै सुख निर्वाण । ८६९ ।

ओं ह्रीं नित्यनृतजिनाय (गंहलध्यनये) नमः अर्घं ।

— मेरु प्रशाद करि, तीनो योग समारि ।

पाप शैल छिन्न भिन्न कर, भये अयोग सुखार । ९०० ।
ओं ह्रीं पापमैलनिवारकाय (उत्पादनयोगाय) नमः अर्घं ।

सूरज हो स्वै ज्ञान घन, ग्रहण उपद्रव नाहिं ।
वे खटके शिवपंथ सब, दीखत हैं जिस माहिं । ९०१ ।
ओं ह्रीं निरावारणज्ञानजिनाय नमः अर्घं ।

जोग योग संकल्प कर, हरो देहको साथ ।
रहो अकंपित थिर सदा, मैं नाऊँ निज माथ । ९०२ ।
ओं ह्रीं योगक्लेशापहाय नमः अर्घं ।

जोग सुथिरताको हरे, करै आगमन कर्म ।
तुम तासों निर्लेप हो, नशो मोहमद शर्म । ९०३ ।
ओं ह्रीं योगकृतनिर्लेपाय नमः अर्घं ।

निज आतममें स्वस्थ हैं, स्वपद योग रमाय ।
निर्भय तुम निर इक्ष हो, नमूं जोर कर पाँय । ९०४ ।

ओं ह्रीं स्थूलयोगगतये नमः अर्घं।

महादेव गिरिराज पर, जन्म समें जिन सूर।
योग किरण विकसात हो, शोकतिमिर कर दूर। ६०५।

ओं ह्रीं गिरिसंयोगजिनाय नमः अर्घं।

सूक्ष्म निज परदेश तन, सूक्ष्म क्रिया परिणाम।
चितवत मन नहिं वश चलै, राजत हो शिवधाम। ६०६।

ओं ह्रीं सूक्ष्मीकृतवपुःक्रियाय नमः अर्घं।

सूक्षम तत्त्व परकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार।
भविजनको आनंद करि तीन जगत गुरु सार। ६०७।

ओं ह्रीं सूक्ष्मवाक्चित्तयोगाय नमः अर्घं।

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया रहात।
स्वप्रदेश मय थिर सदा, कृत्याकृत्य सुख पात। ९०८।

विद्यमान प्रत्यक्ष है, चेतनराय प्रकाश।
कर्म कालिमासों रहित, पूजत हो अघ नाश। ६०९।

ओं ह्रीं भूताभिव्यक्तचेतनाय नमः अर्घं।

ग्रहि स्वाचरण सुभेद करि, धर्मरूप सत्यांश।
एक तुम्हीं हो धर्म करि, पायो शिवपुर वास। ६१०।

ओं ह्रीं दण्डिने नमः अर्घं।

सूर्य प्रकाशन मोह तम, हरता हो शुभ पंथ।
पाप क्रिया विन राजते, महायती निरग्रंथ ॥ ९११ ॥

ओं ह्रीं परमहंसाय नमः अर्घं।

बंध रहित सर्वस्व करि, निर्मल हो निर्लेप।
शुद्ध सुवर्ण दिपै सदा, नहीं मोह मल लेप ॥ ९१२ ॥

ॐ ह्रीं परमसंवराय नमः अर्घं।

मेघ पटल विन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप।
निरावर्ण तुम शुद्ध हो, पूजत मिट है पाप ॥ ९१३ ॥

ॐ ह्रीं निरावर्णाय नमः अर्घं ।

कर्म अंश सब झर गिरे, रहो न एक लगार।
परम शुद्धता धारके, तिष्ठो हो अविकार ॥ ९१४ ॥

ओं ह्रीं परमनिर्जराय नमो अर्घं ।

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप।
अन्य कुदेव कुभागिया, झूठा धरत कलाप ॥ ९१५ ॥

ओं ह्रीं प्रज्वलितप्रभावाय नमः अर्घं ।

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन।
तिनकों जीते छनकमें, भये सुखी स्वाधीन ॥ ९१६ ॥

ओं ह्रीं समस्तकर्मबंधपजिताय (ओघकर्मणे) नमः अर्घं ।

[illegible]

निज स्वरूप आनन्दमें, कहो विगार निहार ॥ ११७ ॥

ॐ ह्रीं कर्मविस्फोटकाय नमो अर्घं ।

हीन शक्ति परमादको, आप कियो है अन्त ।
निज पुरुषार्थ सुवीर्यसों, सुखी भए सु अनन्त ॥ ११८ ॥

ॐ ह्रीं अनंतवीर्यजिनाय(शैथिल्यान्ताय) नमः अर्घं ।

एक रूप रस स्वादमें, निर आकुलित रहाय ।
विविध रूप रस पर निमित, ताको त्याग कराय ॥ ११९ ॥

ॐ ह्रीं एकाकाररसास्वादाय नमः अर्घं ।

इन्द्री मनके सब विषय, त्याग दिये इक लार ।
निजानन्दमें मगन हैं, छांडो जग व्यापार ॥ १२० ॥

ॐ ह्रीं विश्वाकाररसास्वादाकुलिताय नमो अर्घं ।

पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणनि आधार ।
सदा रहे जीतव्यता, जरा मृत्युको टार ॥ १२१ ॥

ॐ ह्रीं जीविताय नमः अर्घं।

निज रसके सागर धनी, महा प्रिय स्वादिष्ट।
अमर रूप राजे सदा, सुर मुनिके हो इष्ट ॥ ९२२ ॥

ओं ह्रीं अमृताय नमः अर्घं।

पूरण निज आनन्दमें, सदा जागते आप।
नाहिं प्रमादमें लिप्त हैं, पूजत विनशे पाप ॥ ९२३ ॥

ॐ ह्रीं जाग्रताय नमः अर्घं।

क्षीण (दिपै) ज्ञान ज्ञानावरण, करे जीवको नित्य।
सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुनित्य ॥ ९२४ ॥

ओं ह्रीं अस्वप्नाय नमः अर्घं।

स्व प्रमाणमें थिर सदा, स्वयं चतुष्टय सत्य।
निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य ॥ ९२५ ॥

ॐ ह्रीं अनल्पमाय नमः अर्घं।

श्रम करि नहीं आकुलित हो, सदा रहो निरखेद ।
स्वस्थरूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद । ६२६ ।

ओं ह्रीं अश्रमाय नमः अर्घं ।

मन वच तन व्यापार था, तावत रहो शरीर ।
ताको नाश अकंप हो, वन्दूं मन धर धीर । ६२७ ।

ओं ह्रीं अयोगिने नमः अर्घं ।

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममें हैं एकत्र ।
तुमको वन्दूं भावसों, हरो पाप सर्वत्र । ९२८ ।

ओं ह्रीं चतुरशीतिलक्षणाय नमः अर्घं ।

तुम लक्षण सूक्ष्म महा, इन्द्रिय विषय अतीत ।
वचन अगोचर गुण धरो, निर्गुण कहत सुनीत । ६२९ ।

ओं ह्रीं अगुणाय नमः अर्घं ।

अगुरुलघू पर्यायके, भेद अनन्तानन्त ।

गुण अनन्त परिणाम करि, नित्य नमैं तुम संत।
ओं ह्रीं अनन्तानन्तपर्यायाय नमः अर्घं। ६३०।

रागद्वेषके नाशतैं, नहीं पूर्व संस्कार।
निज सुभावमें थिर रहैं, अन्य वासना टार।
ॐ ह्रीं पूर्वसंस्कारवर्ज्याय नमः अर्घं। ६३१।

गुण चतुष्टमें वृद्धता, भई अनन्तानन्त।
तुम सम और न जगतमें, सदा रहो जयवंत॥ ६३२॥
ओं ह्रीं वृद्धाय नमः अर्घं।

आर्य कथित उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त।
सो सब नाम कहो तुम्हीं, शिवमारगके सन्त॥ ६३३॥
ओं ह्रीं प्रियवचनाय नमः अर्घं।

महाबुद्धिके धाम हो, सूक्षम शुद्ध अबाध्य।
च्यार ज्ञान नहीं गम्य हो, मनरूप सो साध्य॥ ६३४॥

ओं ह्रीं व्यवहारगुप्ताय नमः अर्घं । ६४७ ।

निज पदमें नित रमत है, अप्रमाद अधिकाय ।
निज गुण सदा प्रकाश है, अतुलबली नमूं पाय ।

ॐ ह्रीं अतिजागरूकाय नमः अर्घं । ६५८ ।

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे परकी साथ ।
निर्भय सदा सुखी भये, बन्दूं नमि निज माथ ।

ओं ह्रीं स्वाधिताय नमः अर्घं । ६४९ ।

कहे हुये हो नेमसे, परमाराध्य अनादि ।
तुम महातमा जगतके, और कुदेव कुवादि । ९५० ।

ओं ह्रीं उद्दिष्टोदितमाहात्म्याय नमः अर्घं ।

तत्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार ।
तिसके तुम अध्याय हो, धर्म प्रकाशनहार । ९५१ ।

ॐ ह्रीं नभ्यज्ञानान्तकृज्जिनाय (जिनप्रणायाय) नमः अर्घं ।

ना काहूंसो जन्म हो, ना काहूंसो नाश।
स्वयं सिद्ध विन पर निमित, स्वस्वरूप परकाश। १५२।
ॐ ह्रीं अकृत्रिमाय नमः अर्घं।

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश।
तेजरूप उत्सवमई, पाप-तिमिरको नाश॥ १५३॥
ॐ ह्रीं अप्रमेयमहिम्ने नमः अर्घं।

रागादिक मलको धरै, तनक नहीं अनवास।
महा विशुद्ध अत्यन्त हैं, हरो पाप अहि डांस॥ १५४॥
ॐ ह्रीं अत्यन्तशुद्धाय नमो अर्घं।

सिद्ध स्वयं भरतार हो, शिव कामिनके संग।
रमण भाव स्वै योगमें, मानों अरह अनंग॥ १५५॥
ॐ ह्रीं मंगराय नमः अर्घं।

विविध प्रकार न भरत है, हे अजन्म अव्यक्त।

ॐ ह्रीं याजकाय नमः अर्घं।

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमको जीत।
नमूं तुम्हें जयवंत हो, धार सु उरमें प्रीत। ६७४।

ओं ह्रीं अजय्याय नमः अर्घं।

जज्ञ विधानमें जजत ही, आप मिलो निधि रूप।
तुम समान नहीं और धन, हरत दरिद्र दुख कूप। ६७५।

ओं ह्रीं याज्याय नमः अर्घं।

लोकोत्तर संपद विभव, है सर्वस्व अघाय।
तुमसे अधिक न और है, सुख विभूति शिवराय। ६७६॥

ओं ह्रीं अनर्घ्यग्रहाय नमः अर्घं।

तुमको आह्वानन यजन, प्रासुक विधिसे योग।
त्रिजग अमोलिक निधि मही, देत पर्म सुख भोग। ६७७॥

ओं ह्रीं अनर्घ्यफलाय नमः अर्घं।

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज।
भव तन भोग विरक्तता, निर्ममत्व सुख साज ॥ ३७८ ॥

ॐ ह्रीं परमनिस्पृहाय नमो अर्घं ।

परदुखमें दुख हो जहां, मोह प्रकृतिके द्वार ।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार । ३७९ ।

ॐ ह्रीं अत्यन्तनिर्दयाय नमः अर्घं ।

स्वयं बुद्ध भगवान हो, सुर मुनि पूजन योग ।
विन शिक्षा शिवमार्गको, साधो हो धरि योग ।३८०।

ॐ ह्रीं अशिष्याय नमः अर्घं ।

तुम एकत्व अन्यत्व हो, परसों नहीं सम्बन्ध।
स्वयं सिद्ध अविरुद्ध हो, नाशो जगत प्रबन्ध ॥ ३८१ ॥

ॐ ह्रीं परसम्बन्धविनाशकाय नमः अर्घं ।

ह्रीं ज्ञाननिर्भराय नमः अर्घं।

मुनिजन जेन सेवन करैं, पावैं निज पद सार।
महा शुद्ध उपयोग मय, वरतत हैं सुखकार। ९९१।

ॐ ह्रीं महायोगीश्वराय नमः अर्घं।

भाव शुद्ध सो देहमें, द्रव्य शुद्ध विन देह।
कर्म वर्गणा लिये, पूजत हूं धरि नेह। ९९२।

ॐ ह्रीं द्रव्यशुद्धाय नमः अर्घं।

पंच प्रकार शरीरको, मूल कियो विध्वंश।
स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नहीं अंश। ९९३।

ॐ ह्रीं अदेहाय नमः अर्घं।

जाको फेर न जन्म है, फिर नाहीं संसार।
सो पंचमगति शिवमई, पायो तुम निरधार। ९९४।

ॐ ह्रीं अपुनर्भवाय नमः अर्घं।



सकल इन्द्रियां व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय ।
सब द्रव्यनिको ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय ॥ ६६५ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानैकविदे नमः अर्घं ।

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान ।
अन्य विभाव विभव नहीं, महा शुद्ध अविकार ॥ ६६६ ॥

ओं ह्रीं जीवधनाय नमः अर्घं ।

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध ।
महा शुद्ध निज आत्म मय, सदा रहे निरबाध ॥ ६६७ ॥

ओं ह्रीं सिद्धाय नमः अर्घ ।

लोकशिखरपर थिर भए, ज्यों मंदिर मणि कुंभ ।
निज शरीर अवगाहमें, अचल सु थान अलुंभ ॥ ६९८ ॥

ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय नमः अर्घं ।

सहज निरामय भेद बिन, निराबाध निस्संग ।



एक रूप सामान्य हो, निज विशेष मई अंग ॥ ९९९ ॥

ओं ह्रीं निर्द्वंदाय नमः अर्घं।

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुणके सु अनन्त।
तुममें पूरण गुण सही, धरो अनन्तानन्त ॥ १००० ॥

ओं ह्रीं अनन्तानन्तगुणाय नमः अर्घं।

पर मिलाप नहीं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप।
क्षयोपशम ज्ञानी तुम्हे, जानत नाहिं स्वरूप ॥ १००१ ॥

ओं ह्रीं आत्मरूपाय नमः अर्घं।

क्षमा आत्मको भाव है, क्रोध कर्मसों घात।
सो तुम कर्म खिपाइयो, क्षमा सु भाव धरात ॥ १००२ ॥

ॐ ह्रीं महाक्षमाय नमः अर्घं।

शील सुभाव सु आत्मको, क्षोभ रहित सुखदाय।
निर्‌आकुलता धार है, वंदूं तिनके पाय ॥ १००३ ॥

ओं ह्रीं महाशीलाय नमः अर्घं।

शशि स्वभाव ज्यों शांति धर, और न शांति धराय।
आप शांति पर शांतिकर, भवदुख दाह मिटाय ॥ १००४ ॥

ओं ह्रीं महाशांताय नमः अर्घं।

तुम सम को बलवान है, जीत्यो मोह प्रचण्ड।
धरो अनन्त स्व वीर्यको, निज पद सुथिर अखण्ड ॥ १००५ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यात्मकाय (अनंतोजस्विने) नमः अर्घं।

लोकालोक विलोकियो, संशय विन इकवार।
खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार ॥ १००६ ॥

ॐ ह्रीं लोकालोकज्ञाय नमः अर्घं।

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रस भोग।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग। १००७ ॥

ओं ह्रीं निरावरणाय नमः अर्घं।

परम इ- श्वर ध्यान धर, पावै निजपद सार।
ज्यों रविबिंब प्रकाश कर, घटपट सहज निहार। १००८।
ॐ ह्रीं ध्येयगुणाय नमः अर्घं।

कवलाहारी कहत हैं, महा मूढ मतिमंद।
अशन असाता परिचिन, आप भये सुखकंद ॥ १००९ ॥
ॐ ह्रीं अशनदग्धाय नमो अर्घं।

लोक शीप छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप।
बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप ॥ १०१० ॥
ॐ ह्रीं त्रिलोकमणये नमो अर्घं।

महागुणनकी रास हो, लोकालोक प्रजन्त।
सुर मुनि पार न पावते, तुम्हें नमें नित सन्त ॥ १०११ ॥
ॐ ह्रीं अनन्तगुणग्रामाय नमः अर्घं।

परम सु गुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहीं लेश।

जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष ॥ १०१२ ॥

ओं ह्रीं परमात्मने नमः अर्घं ।

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार ।

सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण वंदनहार ॥ १०१३ ॥

ओं ह्रीं महात्मने नमः अर्घं ।

भूत भविष्यत् कालको, कभी न होवे अंत ।

नित प्रति शिवपद पायकर, होत अनन्तानन्त ॥ १०१४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

निर्भय निर आकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निरखेद ।

काहू विधि घबरात नहीं, निज आनंद अभेद ॥ १०१५ ॥

ओं ह्रीं अक्षोभाय नमः अर्घं ।

जो गुण गुणी सुभेद करि, सो जड मती अजान ।

निज गुण गुणी सु एकता, स्वयं बुद्ध भगवान ॥ १०१६ ॥

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावै निजपद सार।
ज्यों रविविंब प्रकाश कर, घटपट सहज निहार। १००८।

ओं ह्रीं ध्येयगुणाय नमः अर्घं।

कवलाहारी कहत हैं, महा मूढ़ मतिमंद।
अशन असाता परिविन, आप भये सुखकंद॥ १००९॥

ॐ ह्रीं अशनदग्धाय नमो अर्घं।

लोक शीष छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप।
बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप॥ १०१०॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकमणये नमो अर्घं।

महागुणनकी रास हो, लोकालोक प्रजन्त।
सुर मुनि पार न पावते, तुम्हें नमें निन सन्त॥ १०११॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणग्रामाय नमः अर्घं।

परम सु गुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नहीं लेश।

जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष ॥ १०१२ ॥

ओं ह्रीं परमात्मने नमः अर्घं ।

केवल ऋद्धि महान है, अतिशय युत तप सार ।

सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण वंदनहार ॥ १०१३ ॥

ओं ह्रीं महाऋषये नमः अर्घं ।

भूत भविष्यत् कालको, कभी न होवे अंत ।

नित प्रति शिवपद पायकर, होत अनन्तानन्त ॥ १०१४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं ।

निर्भय निर आकुलित हो, स्वयं स्वस्थ निर्द्वंद ।

काहू विधि वशगत नहीं, निज आनंद अभेद ॥ १०१५ ॥

ओं ह्रीं अक्षोभाय नमः अर्घं ।

जो गुण गुणी सुभेद करि, सो जड मती अजान ।

निज गुण गुणी सु एकता, स्वयं बुद्ध भगवान ॥ १०१६ ॥

ओं ह्रीं स्पष्टबुद्धाय नमः अर्घं ।

निरावरण निज ज्ञानमें, सर्व स्पष्ट दिखाय ।
संशय बिन नहिं भरम है, सुथिर रहो सुखपाय ॥ १०१७ ॥

ॐ ह्रीं निरावरणज्ञानाय (निर्ममाय) नमः अर्घं ।

राग द्वेषके अंशमें, मत्सर भाव कहात ।
सो तुम नासो मूल ही, रहै कहांसो पात ॥ १०१८ ॥

ओं ह्रीं वीतमत्सराय नमः अर्घं ।

अणुवत लोकालोक है, जाके ज्ञान मझार ।
सो तुम ज्ञान अथाह है, वन्दूं मैं चित धार ॥ १०१९ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तज्ञानाय नमो अर्घं ।

हस्त रेख सम देख हो, लोकालोक सरूप ।
सो अनन्त दर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम कूप ॥ १०२० ॥

ॐ ह्रीं अनन्तानन्तदर्शनाय नमः अर्घं ।

तीन लोकका पूज्यपन, प्रगट कहै दिखलाय।
तीन लोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय ॥ १०२१ ॥
ओं ह्रीं लोकाग्रवासिने नमः अर्घं।
निज पदमें लवलीन है, निज रस स्वाद अघाय।
परसों इह रस गुप्त है, कोटि यत्न नहीं पाय। १०२२।
ओं ह्रीं गुप्तात्मने नमः अर्घं।
कर्म प्रकृतिको मूल नहीं, द्रव्य रूप यह भाव।
महा स्वच्छ निर्मल दिपो, ज्यों रवि मेघ अभाव। १०२३।
ओं ह्रीं पूतात्मने नमः अर्घं।
हीन अभाव न शक्ति है, कर्मबन्धको नाश।
उदय भये तुम गुण सकल, महा विभवकी राश। १०२४।
ओं ह्रीं महोदयाय नमः अर्घं।
पाप रूप दुख नाशियो, मोक्ष रूप सुख रास।

ते मंगल करण, स्वयं संत है दास। १०२५।

ओं ह्रीं महामंगलात्मकजिनाय नमः अर्घं।

इति अर्घ सम्पूर्ण।

दोहा—कहैं कहांलों तुम सुगुण, अंशमात्र नहीं अन्त।
मंगलीक तुम नाम ही, जानि भजें नित सन्त। १।

इत्याशीर्वादः।

ओं ह्रीं अर्हं पूर्णस्वगुणजिनाय नमः इति अर्घं, पूर्णार्घं।

अथ जयमाला।

दोहा—होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहीं होय।
फाग्र पांचसैं अनिल थल, नाक सकैं नहीं कोय ॥ १ ॥
सूक्षम शुद्ध स्वरूपको, कहना है व्यवहार।
सो व्यवहारातीत हो, यातें हम लाचार ॥ २ ॥

पं जो हम कछु कहत हैं, शांति हेत भगवंत।
बार बार थुति करनमें, नहीं पुनरुक्त भनन्त ॥ ३ ॥

पद्धड़ी छन्द मात्रा-१६।

जय स्वयं शक्ति आधार योग, जय स्वयं स्वस्थ आनंद भोग।
जय स्वयं विकाश आभास भास, जड़ स्वयं सिद्ध निज पद निवास ४
जय स्वयं वृद्ध संकल्प हार, जय स्वयं शुद्ध रागादि जार।
जय स्वयं स्वगुण आधार धार, जय स्वयं सुखी अक्षय अपार ५
जय स्वयं चतुष्टय राजमान, जय स्वयं अनन्त सुगुण निधान।
जय स्वयं स्वस्थ सुथिर अयोग, जय स्वयं स्वरूप मनोग योग। ६।
जय स्वयं स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वयं वीर्य रिपु वज्र चूर।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान। ७।
जय सन्तनि मन आनन्दकार, जय सज्जन चित वल्लभ अपार।

दास प्रति मंगल करण, स्वयं संत है दास । १०२५ ।

ओं ह्रीं महामंगलात्मकजिनाय नमः अर्घं ।

इति अर्घ सम्पूर्ण ।

दोहा—कहैं कहांलों तुम सुगुण, अंशमात्र नहीं अन्त ।
मंगलीक तुम नाम ही, जानि भजें नित सन्त । १ ।

इत्याशीर्वादः ।

ओं ह्रीं अर्हं पूर्णस्वगुणजिनाय नमः इति अर्घं, पूर्णार्घं।

अथ जयमाला ।

दोहा—होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नहीं होय ।
काष्ठ पांवसें अनिल थल, नाक सकै नहीं कोय ॥ १ ॥
सूक्षम शुद्ध स्वरूपको, कहना है व्यवहार ।
सो व्यवहारातीत हो, यातैं हम लाचार ॥ २ ॥

ज्यूं पंगु चढ़ै गिर, गूंग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरे।
त्यों तुम थुति काम महा लज ठाम, सु अंत संत परणाम करे॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकसहस्रगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति पूर्णार्घम्।

तीन लोकचूड़ामणि, सदा रहो जयवन्त।
विघ्नहरण मंगल करन, तुम्हें नमें नित सन्त॥ १॥

इत्याशीर्वादः।

अथ पूर्ण आशीर्वादः।

अडिल्ल छन्द।

पूरण मंगल रूप महा यह पाठ है, सरस सु रुचि सुखकार भक्तिको ठाठ है।
शब्द अर्थ में चूक होय तो हो कहीं, थुति वाचक सब शब्द अर्थ यामें सही॥१॥

जिन गुण करण आरम्भ हास्यको धाम है, वायसका नहिं सिंधु उतीरण काम है
पै भक्तनिकी रीति सनातन है सही, क्षमा करो भगवन्त शांति पूरण मही

इत्याशीर्वाद-परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

इति श्री सिद्धचक्रपाठ भाषा-कवि सन्तलालजी कृत समाप्तं ।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा नमः ॥ १०८ ॥

समाप्त